कल्पमेधा

दो ही प्रकार के लोग जीवन में असफल होते हैं। एक वे, जो सोचते हैं, पर उसे कार्य का रूप नहीं देते और दूसरे वे, जो कार्यरूप में परिणत तो कर देते हैं, पर सोचते कभी नहीं।

- थामस झलियट

साइबर संजाल

देश की अर्थव्यवस्था को डिजिटल बनाने के लिए हर स्तर पर व्यापक प्रयास किए जा रहे हैं। इसी का नतीजा है कि आनलाइन माध्यम से धन के लेन-देन में तेजी से विस्तार हो रहा है। आज लोग घर बैठे पैसे भेजने, बिल का भुगतान, खरीदारी और बैंकिंग जैसी सेवाओं के लिए विभिन्न डिजिटल मंचों का इस्तेमाल करते हैं। इंटरनेट बैंकिंग ने निश्चित तौर पर आर्थिक गतिविधियों को सुविधाजनक बनाया है, मगर इसके जोखिमों का दायरा जिस तरह फैलता जा रहा है, वह गंभीर चिंता का विषय है। साइबर अपराधी नए-नए तरीके अपनाकर लोगों की मेहनत की कमाई को एक झटके में उड़ा ले जाते हैं। इस तरह की वारदात का अफसोसनाक पहलू यह है कि इसमें बैंकों की कोई जवाबदेही नहीं रहती है, भले ही तकनीकी तौर पर उनकी खामियां भी इसके लिए जिम्मेदार हों। इसी चिंता को रेखांकित करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने बीते गुरुवार को स्पष्ट कहा कि डिजिटल धोखाधड़ी के मामलों में यदि किसी वित्तीय संस्थान की उचित जांच-पड़ताल में नाकामी के कारण अपराध हुआ है, तो पीड़ितों को कम-से-कम गंवाई गई रकम के बराबर मुआवजा मिलना चाहिए।

डिजिटल धोखाधड़ी का सबसे चिंताजनक पहलू यह है कि साइबर अपराधी लोगों की तकनीकी जानकारी की कमी और उनके विश्वास का फायदा उठाते हैं। कभी बैंक अधिकारी बनकर फोन किया जाता है, तो कभी केवाईसी अपडेट करने, बिजली का कनेक्शन काटने या किसी सरकारी योजना का लाभ दिलाने के नाम पर लोगों को जाल में फंसाया जाता है। फर्जी लिंक, नकली वेबसाइट, सोशल मीडिया संदेश और मोबाइल एप के माध्यम से भी ठगी की जाती है। कई बार तो किसी जांच एजंसी के नकली अधिकारी बनकर लोगों को 'डिजिटल अरेस्ट' करके धन की उगाही कर ली जाती है। शीर्ष अदालत ने इसे 'डिजिटल डकैती' बताते हुए कहा है कि ऐसे लोगों के खिलाफ कड़ी कार्रवाई की जानी चाहिए। अदालत का इस बात पर हैरानी जताना भी उचित है कि व्यापक जागरूकता अभियान चलाने के दावों के बावजूद पढ़े-लिखे लोग इस तरह की साइबर धोखाधड़ी का शिकार कैसे हो रहे हैं! इससे सरकार के दावों और हकीकत के बीच अंतर का पता चलता है।

इसे सरकार की नीतिगत विफलता ही माना जाएगा कि एक तरफ लोगों को डिजिटल भुगतान के लिए प्रेरित और प्रोत्साहित किया जा रहा है, दूसरी ओर इसके तकनीकी जोखिमों से निपटने के लिए न तो व्यवस्था के स्तर पर प्रभावी उपाय नजर आते हैं और न ही आम लोगों की डिजिटल साक्षरता को लेकर गंभीरता दिखाई देती है। यहां तक कि बैंकों जैसी वित्तीय संस्थाओं की जवाबदेही तय करने की जरूरत भी महसूस नहीं की गई है। यही वजह है कि सर्वोच्च न्यायालय को कहना पड़ा कि भारतीय रिजर्व बैंक के प्रस्तावित नियामकीय ढांचे में साइबर धोखाधड़ी की रोकथाम, मुआवजे और वित्तीय संस्थानों की जवाबदेही के स्पष्ट प्रावधान होने चाहिए। जाहिर है, बैंकों की भूमिका केवल डिजिटल सेवाएं उपलब्ध कराने तक सीमित नहीं हो सकती। उन्हें संदिग्ध लेन-देन की पहचान करने वाली प्रणालियों को मजबूत करने के साथ ही असामान्य गतिविधियों पर तुरंत चेतावनी और ग्राहकों की शिकायतों का जल्द निपटारा भी सुनिश्चित करना चाहिए। इसमें दोराय नहीं कि डिजिटल तकनीक ने देश में आर्थिक गतिविधियों को गति दी है, लेकिन इसका सुरक्षित होना भी उतना ही आवश्यक है।

हादसों की उड़ान

पिछले कुछ सालों से उत्तराखंड में धार्मिक स्थानों तक पहुंचने या अन्य जगहों पर पर्यटन के क्रम में जिस पैमाने पर हेलिकाप्टर से आवाजाही बढ़ी है, उसी अनुपात में उसके सुरक्षित होने को लेकर एहतियात बरतना जरूरी नहीं समझा जा रहा। यह बेवजह नहीं है कि अक्सर वहां से हेलिकाप्टर के हादसे का शिकार हो जाने और उसमें नाहक ही लोगों की मौत की घटनाएं सामने आने लगी हैं। पिछले हफ्ते शुक्रवार को बद्रीनाथ से देहरादून लौटते हुए एक हेलिकाप्टर दुर्घटनाग्रस्त हो गया, जिसमें पायलट सहित छह लोगों की जान चली गई। मरने वाले यात्री बंगलुरु के रहने वाले थे और बदरीनाथ के दर्शन करने के बाद लौट रहे थे। इस हादसे से एक बार फिर यही साबित हुआ है कि सुविधाओं के विकास और विस्तार के क्रम में इस बात का खयाल रखना जरूरी नहीं समझा जा रहा है कि एक मामूली-सी लापरवाही या तकनीकी खामी कैसे जानलेवा साबित हो सकती है।

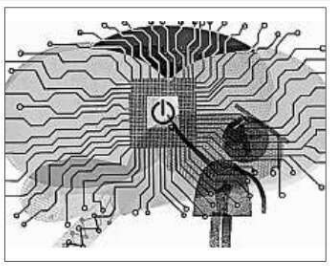
हाल के वर्षों में हिमालयी राज्य में हेलिकाप्टर हादसे और आपातकालीन स्थिति में उतारने जैसी अन्य घटनाओं का जैसा सिलसिला चल पड़ा है, उसके बाद पर्यटन के क्षेत्र में हेलिकाप्टर के संचालन और सुरक्षित यात्रा के भरोसे पर सवाल उठने लगे हैं। पिछले वर्ष जुलाई में नागरिक उड्डयन मंत्रालय ने संसद में बताया था कि 2020 के बाद देश में बारह हेलिकाप्टर दुर्घटनाएं हुईं, जिनमें सात अकेले उत्तराखंड में हुईं। इन हादसों में मरने वाले कुल तीस लोगों में से सिर्फ उत्तराखंड में इक्कीस लोग मारे गए। हैरानी की बात यह है कि पर्यटन के क्षेत्र में और खासतौर पर तीर्थ स्थलों पर हेलिकाप्टर के जरिए आवाजाही को बढ़ावा तो दिया जा रहा है, लेकिन इसके जोखिम को शून्य करने को लेकर कोई गंभीरता नहीं दिखती। साफ है कि इस मामले में निजी कंपनियों को अनुमति दिए जाने से लेकर व्यवस्थागत प्रबंधन और संचालन में बहुस्तरीय लापरवाही बरती जा रही है। सिर्फ ज्यादा मुनाफा कमाने की वजह से जिस तरह सुरक्षा संबंधी तकाजों को ताक पर रखा जा रहा है, वह हादसों को न्योता देने जैसा है। अगर समय रहते हेलिकाप्टरों के संचालन में सुरक्षा के ठोस मानकों और उन पर अमल को लेकर सख्ती नहीं बरती गई, तो यह न सिर्फ लोगों के लिए जान का सौदा बनेगा, बल्कि इस पूरी व्यवस्था की मंशा पर सवाल उठेंगे।

अकादमिक शोध में एआइ की चुनौती



दुनिया भर में कृत्रिम मेधा का प्रभाव तेजी से बढ़ रहा है और शोध का क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं है। जब गहन अध्ययन के बजाय एआइ की मदद ली जाएगी, तो मौलिकता पर सवाल उठना स्वाभाविक है।

अरिमर्दन कुमार त्रिपाठी



यह एक दार्शनिक पक्ष है कि कोई रचना अपने आप में इतनी प्रभावशाली हो सकती है कि वह अपने रचनाकार की आभा से मुक्त हो जाए। इसकी तुलना कृत्रिम मेधा यानी एआइ और अकादमिक शोधों के प्रसंग में भी की जा सकती है। वर्तमान में दुनिया भर में एआइ का प्रभाव इतनी तेजी से बढ़ रहा है कि उसमें चिंतन और शोध की मौलिकता लगातार प्रश्नांकित हो रही है। आज समाज का कोई क्षेत्र एआइ के प्रभाव से अछूता नहीं है और कमोबेश हर क्षेत्र में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में इसकी भूमिका है। इसीलिए समाज में अलग-अलग क्षेत्रों में इसका स्वागत भी किया जा रहा है। मगर जहां तक अकादमिक शोध और लेखन का सवाल है, तो इस पर एआइ का सकारात्मक से अधिक नकारात्मक प्रभाव पड़ना शुरू हो चुका है।

देश के अकादमिक शोधों, बौद्धिक नैतिकता और मौलिक चिंतन के संदर्भ में देखा जाए, तो व्यापक तौर पर यह स्वीकार किया जाना चाहिए कि आज नवाचार की भावना प्रभावित हो रही है, साथ ही शोधों की पूरी प्रक्रिया में एक सतहीपन देखा जा सकता है। दूसरी तरफ, कृत्रिम मेधा के विविध आयाम तेजी से अद्यतन हो रहे हैं। इस तेजी को इस रूप में भी देखा जाना चाहिए कि दुनिया की शीर्ष कृत्रिम मेधा कंपनियों के इंजीनियर इस संभावना के साथ इससे स्वयं को अलग करना शुरू कर चुके हैं, जिनमें उनका मानना है कि यह तकनीक भविष्य में इतनी शक्तिशाली हो सकती है कि संभव है वह मनुष्य के नियंत्रण से बाहर हो जाए।

उल्लेखनीय है कि भारत की भाषाएं विविधता विश्व में अद्वितीय है और निस्संदेह यह समूची मानवता की अमूल्य धरोहर है। देश में लोक-ज्ञान का विशाल भंडार है, जो सैकड़ों भाषाओं के माध्यम से विविध संस्कृतियों और परंपराओं में अभिव्यक्त होता है। मगर उच्च शिक्षा और शोध के क्षेत्र में अंग्रेजी का वर्चस्व एक स्थापित तथ्य रहा है, जो ज्ञान के भारतीयकरण की दृष्टि से पहले से चुनौती रहा है। गुणवत्तापूर्ण प्रकाशनों की व्यवस्था, उनके मूल्यांकन की प्रक्रिया और नियामकीय प्रावधान अंग्रेजी-केंद्रित रहे हैं, जिस कारण भारतीय भाषाएं पहले से ही हाशिये पर रही हैं। इनमें प्रकाशित शोध की पहुंच सीमित होने के कारण उसे कम अकादमिक मान्यता मिलती है और उनके उद्धरण भी अपेक्षाकृत कम होते हैं। इससे उस लेखन के प्रभाव का समुचित आकलन नहीं हो पाता। यह स्थिति शोधार्थियों और शिक्षाविदों को अंग्रेजी में लिखने के लिए भी प्रेरित करती है। इससे भारतीय भाषाओं में ज्ञान-सृजन की प्रक्रिया स्वयं चुनौती के घेरे में आ जाती है।

संस्कृत सहित देश की दूसरी शास्त्रीय भाषाओं में निहित ज्ञान पर गर्व करने के बावजूद आज हमारे सामने ज्ञान-परंपरा की सुसंगति और उसकी निरंतरता के संदर्भ में रिक्तता पैदा हो गई है। ऐसी स्थिति में ये प्रश्न अनुत्तरित ही रहे हैं कि भारतीय भाषाओं और देश की व्यापक संपर्क-भाषा हिंदी में शोध एवं मौलिक लेखन को आखिर कब तक दोयम दर्जे पर रखा जाएगा? क्या मौलिक ज्ञान-ग्रंथों के बिना किसी ज्ञानवान राष्ट्र की कल्पना की जा सकती है? निश्चित रूप से नहीं। उपभोक्तावादी राष्ट्र बाजार के लिए उपयोगी हो सकता है, लेकिन वास्तविक प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए उसे ज्ञानवान राष्ट्र के मानदंडों पर स्वयं को खरा उतारना होगा।

आज यह व्यापक चिंता का विषय होना चाहिए कि इससे पहले कि भारतीय भाषाओं में चिंतन और लेखन का आधुनिक ढांचा विकसित हो पाता, कृत्रिम मेधा का दौर सामने आ गया। इसके उदय ने नीतिगत पहलों और समय-समय पर हिंदी के क्षेत्र में व्यक्तियों द्वारा किए गए सीमित, लेकिन गंभीर प्रयासों से जुड़ी बौद्धिक संभावनाओं तथा भविष्य की उम्मीदों पर भी प्रश्नचिह्न लगा दिए हैं। हालांकि, देश में पहले भी ऐसे लोगों की कमी नहीं थी, जो सामने दो पुस्तकें रखकर तीसरी पुस्तक लिख देते थे। अपने शोध और लेखन में पूर्ववर्ती शोध के प्रति सम्मान का अभाव तथा उचित संदर्भ-ग्रंथों का उल्लेख न करना हमारी अकादमिक दुनिया में पहले से ही चिंता का विषय रहा है। कृत्रिम मेधा ने इस समस्या के नकारात्मक प्रभाव को और बढ़ा दिया है।

> **एक समय था, जब कोई शोधार्थी अकादमिक दक्षता प्राप्त करने के लिए पुस्तकालय-दर-पुस्तकालय भटकता था, सामग्री संकलित करता था और सैकड़ों शोध-प्रबंधों तथा पुस्तकों का अध्ययन करता था। मगर आज कृत्रिम मेधा की सहायता से पूरा शोध-प्रबंध घंटों में तैयार किया जा सकता है। ऐसे में शोधार्थी को पहले जैसी मेहनत करने की आवश्यकता महसूस ही नहीं होती। इस तरह भारतीय भाषाओं के शोधों में बौद्धिक ईमानदारी और अकादमिक नैतिकता जैसे मूल्य स्थापित होने से पहले ही क्षीण होते दिखाई दे रहे हैं। शोध के लिए अध्ययन की जगह अगर कृत्रिम मेधा ने ले ली, तो मौलिक रचनात्मकता का ह्रास होना तय है।**

एक समय था, जब कोई शोधार्थी अकादमिक दक्षता प्राप्त करने के लिए पुस्तकालय-दर-पुस्तकालय भटकता था, सामग्री संकलित करता था और सैकड़ों शोध-प्रबंधों तथा पुस्तकों का अध्ययन करता था। मगर आज कृत्रिम मेधा की सहायता से पूरा शोध-प्रबंध घंटों में तैयार किया जा सकता है। ऐसे में शोधार्थी को पहले जैसी मेहनत करने की आवश्यकता महसूस ही नहीं होती। इस तरह भारतीय भाषाओं के शोधों में बौद्धिक ईमानदारी और अकादमिक नैतिकता जैसे मूल्य स्थापित होने से पहले ही क्षीण होते दिखाई दे रहे हैं। इसके उदय ने नीतिगत पहलों और समय-समय पर हिंदी के क्षेत्र में व्यक्तियों द्वारा किए गए सीमित, लेकिन गंभीर प्रयासों से जुड़ी बौद्धिक संभावनाओं तथा भविष्य की उम्मीदों पर भी प्रश्नचिह्न लगा दिए हैं। हालांकि, देश में पहले भी ऐसे लोगों की कमी नहीं थी, जो सामने दो पुस्तकें रखकर तीसरी पुस्तक लिख देते थे। अपने शोध और लेखन में पूर्ववर्ती शोध के प्रति सम्मान का अभाव तथा उचित संदर्भ-ग्रंथों का उल्लेख न करना हमारी अकादमिक दुनिया में पहले से ही चिंता का विषय रहा है। कृत्रिम मेधा ने इस समस्या के नकारात्मक प्रभाव को और बढ़ा दिया है।

एक समय था, जब कोई ईमानदार और जिज्ञासु शोधार्थी अकादमिक दक्षता प्राप्त करने के लिए पुस्तकालय-दर-पुस्तकालय भटकता था, सामग्री संकलित करता था और सैकड़ों शोध-प्रबंधों तथा पुस्तकों का अध्ययन करता था। मगर आज कृत्रिम मेधा की सहायता से पूरा शोध-प्रबंध घंटों में तैयार किया जा सकता है। ऐसे में शोधार्थी को पहले जैसी मेहनत करने की आवश्यकता महसूस ही नहीं होती। इस तरह भारतीय भाषाओं के शोधों में बौद्धिक ईमानदारी और अकादमिक नैतिकता जैसे मूल्य स्थापित होने से पहले ही क्षीण होते दिखाई दे रहे हैं। इंटरनेट पर उपलब्ध सामग्री के अनाधिकृत उपयोग से प्रशिक्षित कृत्रिम मेधा के आयाम लोगों की इच्छानुसार सामग्री प्रस्तुत करने के लिए तैयार हैं। यह विडंबना ही है कि वर्तमान में शोधों की सबसे बड़ी उपलब्धियों में से एक 'कृत्रिम मेधा' आज भारतीय भाषाओं में शोध की संभावित उम्मीदों को कमजोर करने की दिशा में बढ़ रही है। इसमें संदेह नहीं कि औद्योगीकरण के विस्तार और जीवन के अनेक क्षेत्रों में सहयोग की दृष्टि से कृत्रिम मेधा एक क्रांतिकारी आविष्कार है, लेकिन इसकी सहायता से अकादमिक लेखन का जो वर्तमान स्वरूप उभर रहा है, वह अत्यंत चिंताजनक है।

कई बार ऐसा भी प्रतीत होता है कि सूचना-क्रांति समाज में आवश्यकता से पहले पहुंच गई है, क्योंकि इंटरनेट पर अधकचरी सूचनाओं का सामना करने की परिपक्वता हमारे समाज में अभी विकसित नहीं हो पाई है। इसी तरह कृत्रिम मेधा के साधनों की हिंदी में उपलब्धता व्यापक सामाजिक मांग या आवश्यकता के विकसित होने से पहले की आपूर्ति है। आज यदि एआइ में हिंदी उपलब्ध नहीं होती, तो किसी शोध या परियोजना-लेखन की तैयारी करते समय सामग्री की खोज, छंटाई और अध्ययन की प्रक्रिया में शोधार्थी बहुत कुछ सीखता और नए ज्ञान से परिचित होता। मगर कृत्रिम मेधा के उपकरणों पर हिंदी की उपलब्धता ने शोधार्थी के बौद्धिक परिपक्वता अर्जित करने की संभावना को गंभीर रूप से प्रभावित किया है।

यह केवल वर्तमान के लिए चिंताजनक नहीं है, बल्कि इससे भविष्य के लिए जो खोखली बुनियाद तैयार हो रही है, वह देश की बौद्धिक विरासत के लिए भी जोखिम भरी हो सकती है। स्पष्ट है कि हमारे बौद्धिक समुदाय को इस विषय पर गंभीरता से विचार करना चाहिए। यदि हम समय से नहीं चेत पाए, तो कृत्रिम मेधा अकादमिक जगत के लिए सकारात्मक होने के बजाय नकारात्मक भूमिका में ज्यादा नजर आएगा। इसके लिए तकनीक को दोष नहीं दिया जा सकता, जरूरत यह तय करने की है कि इसका इस्तेमाल कब, कैसे और किस कार्य के लिए करना उचित है। एआइ पर बढ़ती निर्भरता से शोधकर्ताओं के नए तर्क गढ़ने, गहराई से सोचने और समस्याओं को खुद हल करने की क्षमता क्षीण हो सकती है। शोध के लिए अध्ययन की जगह अगर कृत्रिम मेधा ने ले ली, तो मौलिक रचनात्मकता का ह्रास होना तय है।

तकनीक की गिरफ्त

सुरेश कुमार मिश्रा उरतृप्त

शाम के ठीक सात बजे जब घर के दरवाजे खुलते हैं, तो अब किसी नन्हें कदम की आहट दौड़ती हुई सीने से नहीं लिपटती। किसी का बस्ता फेंककर पिता के कंधे पर चढ़ जाने का शोर अब कमरों में नहीं गूंजता। चौखट पर खड़े होकर भीतर झांकिए तो नीली रोशनी का एक सर्द समंदर दिखता है, जिसमें हमारे बच्चे सांस लेना भूलकर डूब रहे हैं। किसी जमाने में हम कहते थे कि अफीम इंसान की सुधबुध छीन लेती है और शराब घर जला देती है, मगर इस छह इंच के चमकते कांच के टुकड़े ने तो सीधे बच्चों की रूह पर डाका डाल दिया है। यह एक ऐसा मीठा जहर बन चुका है, जो बिना किसी धुएं या बदबू के नसों में दौड़ता है और दिमाग के उस हिस्से को धीरे धीरे सुखा देता है, जहां ममता, अपनापन और दर्द महसूस करने की कुव्वत बसती है। यह लत किसी भी चरस, गांजे या हेरोइन से कहीं ज्यादा खूंखार इसलिए है कि वह जहर कम से कम छिपकर बिकता था और यह हमने खुद अपने हाथों से खरीदकर अपनी अनमोल औलाद की हथेलियों में थमा दिया है, ताकि हम अपनी सुविधा की रोटियां सुकून से सेक सकें और बच्चा हमें बाधित न करे।

पहले जब किसी बच्चे को भूख लगती थी, तो वह मां का आंचल खींचकर जिद करता था और मां की लोरी सुनकर सो जाता था। मगर अब वह निवाला भी तब निगलता है, जब स्क्रीन पर कोई अनजान किरदार नाच रहा हो। दूध पीते मासूम के हाथ से जब आप वह खिलौना छीनने की कोशिश करते हैं, तो उसकी आंखों में जो भयानक वहशत और गुस्सा तैरता है, उसे देखकर किसी भी मां का कलेजा मुंह को आ जाए। वह चीखता है, हाथ पैर पटकता है और अपनी ही मां को ऐसे घूरता है, जैसे सामने कोई सगा नहीं, बल्कि उसका सबसे बड़ा जानी दुश्मन खड़ा हो। किसी नशेड़ी को जब उसकी तलब की खुराक नहीं मिलती, तो वह पागल होने लगता है, लेकिन सोचिए कि जब छह साल का एक मासूम स्क्रीन छिन जाने पर अपना सिर दीवार से टकराने लगे, तो क्या यह किसी भी रासायनिक मादक पदार्थ से हजार गुना ज्यादा रौंगटे खड़े कर देने वाला मंजर नहीं है!

आज के दौर में की स्क्रीन ने हमारे बच्चों के पूरे बचपन को हांक कर एक अंधेरे बाड़े में कैद कर दिया है। अब न तो घुटनों पर छिले हुए जख्म दिखाई देते हैं और न ही उन जख्मों पर मां के थूक लगाकर फूंकने का वह जादुई मरहम नजर आता है। मिट्टी में सने वे पैर, जो शाम ढले घर की दहलीज पर लौटते थे, अब कहीं खो चुके हैं। अब तो बस बिस्तर की सिलवटों में सिकुड़े हुए वे पतले-पतले हाथ रह गए हैं, जिनकी अंगुलियां दिन-रात एक शीशे को सहलाती रहती हैं। अगर बच्चों के चेहरे को कभी सोते हुए गौर से देखा जाए, तो एक अजीब-सी थकान और बेबसी का साया नजर आएगा। उनकी पुतलियां बंद पलकों के पीछे भी वैसे ही फड़कती हैं, जैसे कोई कैदी अपनी कालकोठरी की सलाखों को तोड़े बिना बाहर भागने के लिए तड़प रहा हो। और यह सब देखकर भी हम खामोश बैठे रहते हैं, जैसे हमारे अपने सीने में दिल की जगह कोई पत्थर रख दिया गया हो।

आज बच्चों के लिए स्क्रीन की दुनिया वह नशा बन चुकी है, जिसमें डूबकर वे अपनों को भूल चुके हैं। एक पिता दिन भर पसीना बहाकर इस उम्मीद में घर लौटता है कि उसका बेटा दौड़कर उसके गले लगेगा और उसकी दिन भर की थकान पल भर में काफूर हो जाएगी। मग जब वह देखता है कि बच्चे ने सिर उठाकर उसकी तरफ देखा तक नहीं तो उस पिता के भीतर कुछ हमेशा के लिए टूटकर बिखर जाता है। उस मां से पूछा जा सकता है कि जो रसोई में खड़ी होकर रोती है, क्योंकि उसका बेटा अब उससे नहीं, बल्कि किसी बेजान मशीन से बात करता है। नशा मुक्ति केंद्रों में आज उन बच्चों को भर्ती कराया जा रहा है, जिनकी उम्र अभी तितलियां पकड़ने और कागज की कश्तियां तैराने की थी।

चिकित्सा विज्ञान कहता है कि स्क्रीन से निकलने वाला डोपामाइन दिमाग के उसी रास्ते पर वार करता है, जिस पर कोकीन और अफीम हमला करते हैं, मगर फर्क सिर्फ इतना है कि कोकीन खरीदने के लिए पैसे चुराने पड़ते हैं और यह मोबाइल हम खुद अपने लाडलों को उनके जन्मदिन का तोहफा बनाकर पेश करते हैं। जब किसी बच्चे की संवेदनाएं मर जाती हैं, तो वह समाज के लिए किसी अभिशाप से कम नहीं रह जाता। उसे न तो दादी की कहानियों में कोई दिलचस्पी है और न ही दादा के कांपते हाथों को सहारा देने की कोई फिक्र। वह तो बस अपनी आभासी दुनिया का राजा बना बैठा है। जब रात के दो बजे पूरा मोहल्ला सो रहा होता है, तब रजाई के भीतर उस मनहूस नीली रोशनी में किसी मासूम की आंखें धीरे-धीरे अपनी रोशनी और अपनी मासूमियत, दोनों को हमेशा हमेशा के लिए दफन कर रही होती हैं और यह तमाशा हम अपनी बेबस आंखों से देखने के अलावा कुछ नहीं कर पाते।

अगर आज भी हमने अपनी आंखें नहीं खोलीं और अपने बच्चों को इस भयंकर गर्त से खींचकर बाहर नहीं निकाला, तो यकीन मानिए कल हमारे पास पछताने के लिए आंसुओं के सिवा कुछ नहीं बचेगा। नन्हें बच्चों की हंसी छिन चुकी है, उनकी कल्पनाएं मर चुकी हैं और उनका दिल किसी बंजर जमीन की तरह सख्त हो चुका है। अपनी औलाद के सीने की धड़कन को दोबारा महसूस करने की जरूरत है। उनसे बातें करने, उनके साथ धूप में निकलने और उन्हें बताने की कि यह दुनिया कांच की स्क्रीन से कहीं ज्यादा खूबसूरत और हरी-भरी है। अगर आज हमने उन्हें सीने से लगाकर उनका बचपन नहीं बचाया, तो आने वाले कल में ये घर सिर्फ कंक्रीट के खंडहर बनकर रह जाएंगे, जहां इंसान तो सांस लेंगे, मगर उन शरीरों के भीतर कोई जिंदा रूह बाकी नहीं बचेगी और उस दिन हमारी यह दौलत और तरक्की हमारे अपने ही आंसुओं का मातम मना रही होगी।

दुनिया मेरे आगे

> **पहले जब किसी बच्चे को भूख लगती थी, तो वह मां का आंचल खींचकर जिद करता था और मां की लोरी सुनकर सो जाता था। मगर अब वह निवाला भी तब निगलता है, जब स्क्रीन पर कोई अनजान किरदार नाच रहा हो। दूध पीते मासूम के हाथ से जब आप वह खिलौना छीनते हैं, तो उसकी आंखों में वहशत और गुस्सा तैरता है।**

इलाज की कीमत



'बेलगाम कीमतें' (संपादकीय, 29 अक्तूबर) पढ़ा। इस टिप्पणी ने उस पीड़ा को स्वर दिया है, जिससे आज हर परिवार जूझ रहा है। मरीज को बीमारी से पहले दवा की कीमत डराने लगती है। यह सवाल बिल्कुल वाजिब है कि दवा की लागत और बाजार मूल्य के बीच का पैसा आखिर कहां जाता है? जब उत्पादन खर्च और खुदरा कीमत में इतना बड़ा फासला हो और कीमतों पर नजर रखने वाली संस्था निष्क्रिय दिखे, तो इसका बोझ आम आदमी के कंधों पर ही पड़ता है। स्वास्थ्य कोई विलासिता नहीं, बुनियादी अधिकार है। इसलिए जरूरी है कि दवाओं की लागत और मुनाफे का ब्योरा सार्वजनिक किया जाए, मुनाफे की अधिकतम सीमा तय हो और उसका कड़ाई से पालन कराया जाए। साथ ही जन औषधि केंद्रों का दायरा बढ़ाकर सस्ती दवाएं गांव-कस्बों तक पहुंचाई जाएं। जीवन बचाने वाली दवा पर मनमाना मुनाफा किसी भी सभ्य समाज में स्वीकार्य नहीं हो सकता। मगर यह अफसोसनाक है कि हमारे देश में परोक्ष संरक्षण की वजह से बीमारी को कारोबार बनाने वालों ने मुनाफे के लिए सारी नैतिकता ताक पर रख दी है।

- अभिनव मिश्रा, जम्मू

पूंजी की वापसी

'पूंजी का पलायन' (संपादकीय, 27 अक्तूबर) पढ़ा। इसमें विदेशी निवेशकों की बढ़ती निकासी, रुपए की कमजोरी और वैश्विक अनिश्चितता के बीच ठीक ही रेखांकित किया गया है कि बाजार का भरोसा लौटाने के लिए स्थिर नीतियां, पारदर्शी नियम और त्वरित प्रशासनिक फैसले जरूरी हैं। यहां एक सवाल स्वाभाविक है। जब प्रवासी भारतीय एफसीएनआर जमा योजनाओं में भरोसे के साथ धन लगाते हैं, तो उचित अवसर और सुविधाएं मिलने पर वे भारतीय कंपनियों के साझेदार बनकर उद्योग, नवाचार और रोजगार में निवेश क्यों नहीं कर सकते? ऐसी साझेदारी से घरेलू उद्यमों को मजबूती मिलेगी और प्रत्यक्ष विदेशी निवेशकों में भी विश्वास जगेगा। पर यह तभी संभव है, जब राजनीतिक स्थिरता, नियमों में पारदर्शिता, प्रशासनिक दक्षता और नीतिगत निरंतरता सुनिश्चित हो। दूसरों को बुलाने से पहले अपना घर दुरुस्त रखना होगा।

- बृज भूषण गोयल, लुधियाना

स्वच्छता का दायित्व

भारत लोकतांत्रिक देश है, जहां जनता ही सरकार चुनती है। यानी असली शासक हम स्वयं हैं। फिर भी देश को स्वच्छ रखने के लिए हम अक्सर सरकार का मुंह ताकते हैं। यह सही है कि सरकार अभियान चलाती है और नियम बनाती है, लेकिन ये प्रयास तभी सफल होंगे, जब हर नागरिक सक्रिय भागीदारी निभाए। हमारे बीच कुछ लोग ऐसे भी हैं, जो बिना किसी आदेश के सफाई का मोर्चा खुद संभाल लेते हैं। वे हमें याद दिलाते हैं कि स्वच्छता, पौधारोपण जैसी बुनियादी जिम्मेदारियां हमारी अपनी हैं। जिस देश को हम माता कहते हैं और जिस धरती को मां मानते हैं, उसकी सेवा के लिए किसी के निर्देश की प्रतीक्षा क्यों? देश को स्वच्छ और सुंदर रखना हर नागरिक का मूल कर्तव्य है। जिस दिन किसी अभियान के बिना ही हमारी धरती साफ दिखेगी, उसी दिन सही अर्थों में सिद्ध होगा कि हमें अपने देश से सच्चा प्रेम है।

- लक्ष्मी गुप्ता, अयोध्या, उप्र

लापरवाही का आईना

हर वर्ष दीपावली से पहले हरिद्वार के हरकी पैड़ी पर गंगा का जल रोककर सफाई की जाती है। इस बार भी तल में प्लास्टिक, कांच की बोतलें और कपड़ों का भारी कचरा मिला। यह हमारी लापरवाही का आईना है। गंगा केवल नदी नहीं, भारतीय संस्कृति की पहचान है। फिर भी धार्मिक आयोजनों की सामग्री नहरों और नदियों में बहा दी जाती है, कहीं सूखी नहर में ही डाल दी जाती है। गंगा तट पर पुण्य कमाने जाने वाले पालीथीन फेंकने से भी नहीं चूकते। नदियों को माता मानकर पूजने वाले देश में उनकी यह दुर्दशा शर्मनाक है। सवाल है कि 2014 में शुरू हुई नमामि गंगे योजना जैसी कई योजनाओं के बावजूद गंगा की यह हालत कैसे और क्यों है। अगर सरकार और समाज गंभीर न हुए तो सरस्वती की तरह अन्य नदियां भी इतिहास बन सकती हैं। गंगा में डुबकी से पहले मन का मैल धोना जरूरी है।

- राजेश कुमार चौहान, जालंधर

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

सड़क पर विपक्ष

कांग्रेस अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खरगे के आवास पर शनिवार को हुए प्रतीकात्मक 'जन-महाभियोग' कार्यक्रम में जिस तरह से मुख्य चुनाव आयुक्त के विरुद्ध छह बिंदुओं का आरोप पत्र पेश किया गया, उससे तय था कि रविवार की महारैली में विपक्षी 'इंडिया' ब्लॉक केंद्र सरकार पर अधिक हमलावर रहेगा। वही हुआ भी। रामलीला मैदान में करीब 20 दलों की महारैली महज शक्ति प्रदर्शन नहीं थी, बल्कि लोकतांत्रिक संस्थानों की निष्पक्षता के सवालों पर सत्तारूढ़ दलों को घेरने का एक बड़ा मौका बन गया। पहले सड़क मार्च और फिर महारैली- यह बताने की कोशिश थी कि विपक्ष अपनी मांगों से पीछे हटने को कतई तैयार नहीं। वैसे भी, पिछले दिनों जिस तरह से विशेष गहन पुनरीक्षण (एसआईआर) प्रक्रिया को लेकर चुनाव आयुक्तों में मतभेद की खबरें मीडिया में सामने आईं, उसने विपक्षी दलों को इस सवाल पर कहीं अधिक एकजुट कर दिया है। हालांकि, एसआईआर में कथित मनमानी और मतदाता सूचियों से करोड़ों वोट काटे जाने का मामला अब भी शीर्ष अदालत में विचाराधीन है, जहां तथ्यों और तर्कों के आधार पर अंतिम निष्कर्ष तय होगा। फिर भी, सड़कों पर उतरने का विपक्ष का फैसला सियासी नजरिये से समयानुकूल माना जा रहा है।

उधर, एनडीए गठबंधन के घटक दलों की 'लोकतंत्र बचाओ अराजकता हटाओ' पदयात्रा से भी रविवार को देश की सड़कें सियासत का अखाड़ा बनी रहीं। लोकतंत्र और संविधान की दुहाई देने के साथ-साथ यह कार्यक्रम मूलतः विपक्ष को घेरने का मौका बना। विडंबना यह है कि 'जनता के मुद्दों' पर आमने-सामने की लड़ाई लड़ रहे सत्ता पक्ष और विपक्ष के इस सियासी संग्राम में मुश्किलें जनता के सामने ही पेश आईं। कुछ व्यापारी संगठनों ने महारैली के कारण हजारों करोड़ रुपये के आर्थिक नुकसान का दावा किया। हालांकि, नेता प्रतिपक्ष राहुल गांधी ने दिल्ली आए तमाम पार्टी कार्यकर्ताओं से यहां 'शॉपिंग' करने का भी आह्वान किया, लेकिन दिल्ली के कारोबारियों को इसका कितना लाभ मिला, यह तो बाद में ही आंका जा सकेगा। वैसे, इसी तरह के सवाल एनडीए की पदयात्रा को लेकर भी पूछे जा रहे हैं। साफ है, राजनीतिक कार्यक्रम जनजीवन को अधिक प्रभावित न कर सकें, इसकी व्यापक कोशिशें होनी चाहिए। सवाल सुरक्षा पर होने वाले खर्च का भी है। इन राजनीतिक रैलियों के लिए भारी संख्या में सुरक्षा बलों की तैनाती की गई थी, ताकि असामाजिक तत्व भीड़ का फायदा न उठा सकें। परोक्षतः आम नागरिकों की सुरक्षा से समझौता करके ही ऐसे कार्यक्रमों में व्यवस्था की जिम्मेदारी निभाई जाती है। इस पर तमाम दलों को चिंतन करना चाहिए।

विपक्षी एकजुटता और रामलीला मैदान की महारैली के प्रभाव की परख आगामी पांच विधानसभा चुनावों में ही हो जाएगी। क्या यह जन- भावनाओं को छू सकी?

यह सुखद है कि संविधान, लोकतंत्र और नागरिक अधिकारों की रक्षा की बात हमारे राजनीतिक विमर्श का केंद्र-बिंदु बनती जा रही है। विकसित होते भारत के लिए इन कसौटियों पर खरा उतरना आवश्यक भी है। हालांकि, यह काम महज आरोप-प्रत्यारोप से नहीं हो सकेगा। अतीत में हुई गलतियों को गिनाकर आज की कमियों की परदापोशी से भी नहीं होगा। आम मतदाता अब काफी जागरूक हो चला है और उसे आरोपों-प्रत्यारोपों एवं जुमलेबाजी में उलझाया नहीं जा सकता। बहरहाल, विपक्षी दलों की एकजुटता और महारैली के प्रभाव की परख कुछ माह बाद होने जा रहे पांच विधानसभा चुनावों में हो जाएगी। उनके कार्यकर्ताओं को जरूरी ऊर्जा तभी मिल सकेगी, जब ऐसे सियासी अभियान सही अर्थों में जन-भावनाओं को आंदोलित कर सकें।

खाताधारकों का नुकसान बैंक भरें



अमन अग्रवाल | निदेशक, भारतीय वित्त संस्थान

बैंक कर्मचारी ही ऐसी गड़बड़ियां करते हैं। अगर बैंक के आंतरिक हिस्से तक किसी बाहरी व्यक्ति की पहुंच होती भी है, तब भी इसके लिए बैककर्मी ही जिम्मेदार हैं।



पंजाब नेशनल बैंक के ग्रेटर नोएडा स्थित शाखा में अभी जो घोटाला सामने आया है, यह कोई पहली घटना नहीं है। पिछले वर्षों में पीएनबी और दूसरे कई बैंकों में तरह-तरह के घोटाले सामने आ चुके हैं। निस्संदेह, आरबीआई को देखना चाहिए कि बार-बार ऐसे घोटाले क्यों हो रहे हैं? क्या बैंकों की आंतरिक लेखा-जोखा और जांच-निगरानी प्रणाली ठीक से काम नहीं कर रही है या वे आरबीआई के दिशा-निर्देशों का उल्लंघन कर रहे हैं या उनके यहां जो अधिकारी-कर्मचारी हैं, वे काम करने में अक्षम हैं?

ग्रेटर नोएडा के पीएनबी घोटाले से स्पष्ट इसी बैंक के प्रति लोगों का विश्वास नहीं टूटा है, बल्कि बाकी दूसरे बैंकों के प्रति भी उनका भरोसा कम हुआ है। लोग खाते में जो अपना पैसा रखते हैं, वह उनका बैंक को दिया गया ऋण है, जिस पर बैंक उन्हें ब्याज देता है। ऐसे में, अगर उनके पैसे गायब हो जाएं, चाहे वह अधिकारियों के नाकारेपन से हो, या उनके भ्रष्टाचार की वजह से, तो यह अमानत में खयानत ही है।

पिछले पचास-साठ वर्षों में हमने देखा है कि चाहे बड़े बैंक हों, छोटे बैंक हों या सहकारी बैंक, वहां पर बैंकिंग सिस्टम बहुत मजबूती से काम करता रहा है। उन सभी के कार्यों पर रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया ने बहुत पैनी नजर रखी है। किसी भी निवेशक का पैसा कभी डूबा नहीं। कभी-कभी बैंकों से धनशोधन की शिकायतें भी मिलीं या अन्य प्रकार की धोखाधड़ी की घटनाएं भी सामने आईं, मगर आरबीआई ने बड़े अच्छे तरीके से उनको संभाला। यह काम बैंकों को संभालकर, उनका विलय करके या अन्य तरह की सहायता देकर या अन्य तरीकों से बैंकों की स्थिति नियंत्रित करके किया है।

इससे जिन लोगों का पैसा उन बैंकों में जमा था, उस पर कोई असर नहीं पड़ा, क्योंकि आरबीआई जनता के जमा पांच लाख रुपये तक की रक्षा की गारंटी देता है। वित्त मंत्री ने भी अपने बजट भाषण में यह कहा था, पर यह गारंटी तब लागू होती है, जब बैंकों की अपनी प्रणाली में कुछ गड़बड़ी आ जाए या उस पर किसी किस्म की पाबंदियां लग जाएं। यहां भी गवन हुई शाखा पीएनबी को देना पड़ेगी, चाहे वह अपने खाते से दे या कहीं और से, यह बैंक की जवाबदेही होती है।

देखने में आया है कि जो समस्या आ रही है, वह इसलिए कि बैंकों के जो अधिकारी हैं, उनकी कोई जवाबदेही निश्चित नहीं की जाती। किंगफिशर का मामला सामने है। जब किंगफिशर को कर्ज दिया गया और उसने कर्ज को वापस नहीं किया, तब उसे दोबारा कर्ज कैसे दे दिया गया? वह भी इतनी बड़ी रकम कैसे दे दी गई। किंगफिशर पर तो हम कार्रवाई कर रहे हैं, अंतरराष्ट्रीय अदालतों में जाकर उसके खिलाफ मुकदमे भी लड़ रहे हैं, लेकिन बैंक अधिकारियों के खिलाफ क्या कार्रवाई हुई? जब भी कोई घोटाला होता है, तो संबंधित बैंक के चेयरमैन और निदेशकों से भी पूछताछ होनी चाहिए कि आपकी निगरानी-व्यवस्था काम क्यों नहीं कर रही थी? जमाकर्ताओं ने जो पैसे जमा किए हैं, वे सुरक्षित रहें, इसकी जिम्मेदारी बैंक अधिकारियों की है। इसके लिए उन्हें प्रशिक्षित किया जाना बहुत जरूरी है। सामान्य सुरक्षा प्रणाली के साथ-साथ दोहरी जांच की व्यवस्था भी बैंकों के अंदर लागू की जानी चाहिए। ज्यादातर बैंकों में, जहां बड़ी धनराशियों का अंतरण होता है, दोहरी जांच की व्यवस्था होती है। कुछ सरकारी बैंकों में यह देखा गया है कि बड़े बैंक होने के बावजूद उनमें दोहरी जांच व्यवस्था लागू नहीं है। इसलिए इसे सुनिश्चित किया जाना बहुत जरूरी है।

पीएनबी के वर्तमान मामले में साफ दिखता है कि अधिकारियों की मिलीभगत है। पहले बैंकों में जब भी बड़ी राशि का अंतरण होता था, तो जमाकर्ता को फोन करके इसकी पुष्टि की जाती थी। क्रेडिट कार्ड से भी बड़ी राशि के अंतरण पर फोन कर पुष्टि की जाती है। पिछले दिनों सरकार ने यह चेक प्रणाली समाप्त कर दी है। मेरे विचार में यह सही फैसला नहीं था। यह प्रणाली रहनी चाहिए थी। ऐसे में, जमाकर्ता में भी सुरक्षा का भाव रहेगा। आरबीआई के दिशा-निर्देश बहुत स्पष्ट हैं कि कैसी सुरक्षा व्यवस्था हो, निवेशकों को कैसे भरोसा दिलाया जाए, पर आरबीआई ने उनके परिचालन का सारा दारोमदार बैंकों पर डाल दिया है। वह परिचालन पर अलग से टिप्पणी नहीं कर सकता। ऐसे घोटाले जब हो जाते हैं, तब आरबीआई एक सार्वभौम नियम या दिशा-निर्देश सभी बैंकों के लिए जारी कर देता है।

बैंकिंग प्रणाली पर आरबीआई और भारत सरकार ने अब तक बहुत अच्छा भरोसा बना रखा है। ऐसे घोटाले से बैंकिंग प्रणाली पर कोई असर नहीं पड़ता, पर लोगों को एक झटका जरूर लगता है। ऐसे में, मीडिया की भूमिका बढ़ जाती है। गवन करने वालों की जिम्मेदारी तय कराने के साथ-साथ उसे खाताधारकों को भी जागरूक करना बहुत जरूरी है। कोई दोराय नहीं कि साइबर धोखाधड़ी, ऑनलाइन ट्रांजेक्शन फ्रॉड, बैंकिंग फर्जीवाड़े की घटनाएं हर साल बढ़ रही हैं। बहुत सारी समस्याएं आ रही हैं। कई बार जमाकर्ता को पता नहीं, पर उसके पास क्रेडिट कार्ड आ जाता है। बैंकों द्वारा कई तरह के शुल्क चुपचाप लगा दिए जाते हैं। लोगों को जब तक पता चलता है, तब तक देर हो चुकी होती है। सरकारी बैंक भी कई बार ऐसे काम करते हैं। निजी-सार्वजनिक बैंकों को इन कारगुजारियों पर आरबीआई को शिकंजा कसना चाहिए और उनको हिदायत देनी चाहिए कि वे जमाकर्ताओं के पैसों के साथ कोई खिलवाड़ न करें।

बहरहाल, घोटालों को देखते हुए सुप्रीम कोर्ट के हालिया निर्देश बहुत अहम हैं। पहली बात तो वे बैंक के अधिकारी-कर्मचारी हैं, जो ऐसी गड़बड़ियां कर रहे हैं। बैंक तक पहुंच उन्हीं की है, किसी बाहरी व्यक्ति की नहीं। अगर बैंक के आंतरिक हिस्से तक किसी बाहरी व्यक्ति की पहुंच होती है, तब भी बैंक के कर्मी ही इसके लिए जिम्मेदार हैं। देखा गया है कि सरकारी बैंक ऐसे मामले में आरोपियों पर तो कार्रवाई करते हैं, लेकिन अपने अधिकारियों के खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं करते। हमने विजय माल्या के केस में भी यह देखा है। जरूरी है कि दोषी सभी बैंकों के उच्च अधिकारियों पर कठोर कार्रवाई की जाए। इस दिशा में सुप्रीम कोर्ट के नुकसान की भरपायी बैंक द्वारा ही करने के आदेश को कठोरता से लागू करने की जरूरत है, ताकि पूरे बैंकिंग प्रणाली की और सुरक्षित बनाया जा सके।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

स्कूली शिक्षा को परोपकार जैसे नैतिक मूल्य चाहिए



अनुराग बेहर | सीईओ, अजीम प्रेमजी फाउंडेशन

परोपकार और स्वार्थ मानव विकास के दौरान विकसित प्रवृत्तियां हैं, लेकिन हमने जो दुनिया बनाई है, उसमें स्वार्थ को तो सहेज लिया, लेकिन परोपकार को उसके हाल पर छोड़ दिया। जैसे, स्कूली शिक्षा को ही ले लें। पिछले दो दशकों में यह बात स्पष्ट हो गई है कि अगर बच्चों की आर्थिक पृष्ठभूमि एक समान कर दी जाए, तो उनके सीखने की क्षमता के मामले में निजी स्कूल, सरकारी स्कूलों से बेहतर प्रदर्शन नहीं करते हैं। दुनिया भर में इस प्रवृत्ति को देखते हुए अब बाजार-व्यवस्था के कट्टर समर्थक भी शिक्षा के निजीकरण की वकालत करना बंद कर चुके हैं।

निजी स्कूलों के पक्ष में दिया जाने वाला एक तर्क बहुत सीधा और सरल था। अगर कोई स्कूल अच्छा प्रदर्शन नहीं करता, तो माता-पिता अपने बच्चे को वहां से हटा सकते हैं। दूसरी ओर, सरकारी स्कूलों में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं होती। इस मामले में लोग यह याद रखना भूल गए कि स्कूली शिक्षा के नतीजे बहुत बाद में सामने आते हैं और उनको मापा पाना भी मुश्किल होता है। ऐसे में, माता-पिता अक्सर उन बाहरी संकेतों को देखकर अपनी राय कायम कर लेते हैं, जिनका शिक्षा की गुणवत्ता से कोई लेना-देना नहीं होता। हमने एक ऐसी दुनिया बनाई है, जो इस धारणा पर टिकी है कि स्वहित और तर्कसंगत सोच ही दुनिया को चलाती है। हमने बाजार को इसी तरह तैयार किया है कि वह इन दोनों का इस्तेमाल करे। अलबत्ता हकीकत यह है कि हम सबमें स्वार्थी होने के साथ-साथ परोपकारी बनने की भी उतनी ही प्रबल प्रवृत्ति होती है, जिसे हमारी व्यवस्थाएं अक्सर अनदेखा कर देती हैं।

एक अच्छा स्कूल ऐसे बच्चे तैयार कर सकता है, जो दूसरों का ख्याल रखें, मिलकर काम करें और इसकी जिम्मेदारी महसूस करें।

प्रयोग के तौर पर 1960 के दशक में एक प्रयोग के तहत भूखे रीसस बंदरों को भोजन के लिए जंजीर खींचना सिखाया गया। जब उन बंदरों को यह पता चला कि जंजीर खींचने पर बगल के पिंजरे में कैद दूसरे बंदर को बिजली का झटका लगता है, तो ज्यादातर बंदरों ने जंजीर खींचना बंद कर दिया। एक बंदर ने तो अपने साथी को चोट न पहुंचाने के पश्चाताप में लगभग दो हफ्तों तक भूखा रहना पसंद किया। प्रसिद्ध जीव विज्ञानी फ्रांस डी वाल ने इन व्यवहारों का अध्ययन किया है। उन्होंने ब्रिटेन के एक चिड़ियाघर में 'कुनी' नाम के मादा वनमानुष को ऐसा करते देखा। इससे वह यह मानने को मजबूर हो गए कि जानवरों में भी हम इंसानों की तरह ही अपनी तर्कशक्ति और स्वार्थ को सर्वोपरि मानकर हमने ऐसी दुनिया गढ़ ली है, जो इन्हीं बातों को बढ़ावा देती है।

अब हमें इस सोच को छोड़ना होगा कि हम कुछ 'खास' हैं। हमें हर प्राणी के प्रति विनम्र होने की जरूरत है। हमें ऐसे सामाजिक-सांस्कृतिक तंत्र बनाने होंगे, जो हममें परोपकार की भावना को बढ़ावा दें। धर्मों ने अपने नैतिक नियमों के जरिये ऐसा ही किया है। इस प्रक्रिया में स्कूली शिक्षा की अहम भूमिका है। एक अच्छा स्कूल ऐसे बच्चे तैयार कर सकता है, जो दूसरों का ख्याल रखें, उनके साथ मिलकर काम करें और दूसरों के प्रति जिम्मेदारी महसूस करें। वे यह समझें कि भावना और तर्क मिलकर काम करते हैं, वे खूब पढ़ें, अपनी पक्की मान्यताओं पर भी सवाल उठाना सीखें और विनम्र हों। अगर हम हर स्कूल और हर नई पीढ़ी को ऐसा बना सकें, तो एक बेहतर मानवीय दुनिया का निर्माण कर पाएंगे।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

बहुत बार आई दीपावली

दीवाली देश की उस परंपरा का हिस्सा है, जिसने इंसान की खुशहाली के लिए देवताओं का सृजन किया। लोग इस अथाह अस्तित्व में जीने के लिए सहारा या किसी से आशीष चाहते थे, जो उनको आत्म-विश्वास दे।

दीवाली इतनी पुरानी है कि वात्स्यायन के कामसूत्र में इसका उल्लेख है। इसे 'यक्ष-रात्रि' कहा जाता था, जो काफी हद तक दीवाली से मिलता-जुलता था। त्योहार की पूर्व संध्या (चतुर्दशी) पर, घरों की साफ-सफाई की जाती थी और पवित्र स्नान किया जाता था; रास्तों व घरों में दीयों की कतारें लगाई जाती थीं; कुबेर के लिए वेदी बनाई जाती थी और उसे फूलों से सजाया जाता था; मिठाइयां बनाई जाती थीं, नृत्य और काव्य-पाठ किया जाता था; रात के समय जुआ खेलने और मदिरा पान का दौर चलता था; सुबह होने पर दीयों को बुझा दिया जाता और जलाशय में विसर्जित कर दिया जाता। इसमें उत्सव के अलावा कुबेर की पूजा भी शामिल है।

आज के विज्ञान और तकनीक के युग में इस उत्सव की सार्थकता कैसे होगी? उत्सव-प्रियता मानव स्वभाव है, वह जीवन का बहुमूल्य हिस्सा है। दीवाली के मूल में यही भाव था कि वर्ष ऋतु के बाद जब फसल कटती थी, तब स्त्री-पुरुष उत्सव मनाने के लिए मुक्त हो जाते थे। अब दीवाली का समूचा त्योहार ही लक्ष्मी पूजन के आस-पास केंद्रित हो गया है, क्योंकि आज धन साधन नहीं रहा, साध्य हो गया है। धन के साथ आदमी का रिश्ता बहुत विकृत हो गया है। लोग अब यही चाहते हैं कि पैसा आए तो, लेकिन जाए नहीं। यह तो लक्ष्मी के स्वभाव के विपरीत है। लोग लक्ष्मी की कृपा चाहते हैं, लेकिन भूल जाते हैं कि लक्ष्मी के दो विशेषण हैं- चंचला और चपला; इसका आशय है कि लक्ष्मी को बांधकर नहीं रख सकते। धन एक बहती धारा है।

जिस लक्ष्मी की लोग पूजा करते हैं, उनको पाने के लिए हर तरह का अपराध करते हैं। क्या यह लक्ष्मी का अपमान नहीं है? धन पर जो पकड़ है, वह हवा को मुट्ठी में बांधने जैसी निष्फल कवायद है। बचपन में मैंने देखा है, घर के बुजुर्ग चांदी के लोटे में सिक्कों को रखकर उस पर हाथ रखते थे और सब मिलकर चिल्लाते थे- 'स्थिरो भव, स्थिरो भव।' यानी, स्थिर हो जा, स्थिर हो जा। जो अस्थिर है, उसे स्थिर होने के लिए कहा जा रहा है।

चार पुरुषार्थ बताए गए हैं- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इनमें से एक चौथाई ही अर्थ (धन) है। अगर उसे ही जीवन का लक्ष्य मान लिया, तो आपके पास लक्ष्मी नहीं आएगी; और आईं, तो टिकेंगी नहीं।

इस दीवाली कुछ नया करें। लक्ष्मी जी से अपना रिश्ता सुधार लें, उन्हें बांधने की कोशिश न करें। चार पुरुषार्थ बताए गए हैं- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इनमें से सिर्फ एक चौथाई अर्थ, यानी धन है। अगर उसे ही जीवन का लक्ष्य मान लिया, तो आपके पास लक्ष्मी नहीं आएगी; और आईं, तो टिकेंगी नहीं। जरा सोचें, बहुत बार आई गई दीवाली, मगर तम जहां था, वहीं पर खड़ा है। अबकी बार मन के दीप जलाएं।

अमृत साधना

ओम बिरला | लोकसभा अध्यक्ष



एआई और डिजिटल तकनीकी हमारे काम करने के तरीकों को बदल रही हैं। जिम्मेदार तकनीकी के इस्तेमाल से संसदीय कार्यप्रणाली प्रभावी बनाई जा सकती है और नागरिकों की सहभागिता भी मजबूत की जा सकती है।

हिन्दुस्तान | 75 साल पहले | 02 नवम्बर, 1951

काश्मीर का भविष्य

काश्मीर की संविधान-सभा का अधिवेशन जेहलम के तट पर एक भव्य भवन में जिस अभूतपूर्व उत्साह तथा उल्लास के साथ प्रारंभ हुआ उसे बेजोड़ कहा जाये तो शायद अत्युक्ति न होगी। भारतीय संविधान-सभा के उद्घाटन के समय ऐसा हर्षोल्लास नहीं दिखाई दिया था क्योंकि उस समय मुस्लिम लीग की रीढ़ा अटकाने की नीति से भारतीय राजनीतिक क्षेत्रमें एक परेशानी अनुभव की जा रही थी। यद्यपि काश्मीर भी इस समय संकट से मुक्त नहीं और उसका एक भाग 'आजाद काश्मीर' के नाम से वस्तुतः 'गुलाम काश्मीर' बना हुआ है किन्तु यह नहीं भूलना चाहिये कि काश्मीर के बहुत बड़े हिस्से में, जहां कि शासनसूत्र अब्दुल्ला सरकार के हाथों में है, सांप्रदायिकता का नाम भी नहीं है और तीस लाख नर-नारी स्वतंत्रता के वरदान को ग्रहण करने के लिए अपने हाथ फैला रहे हैं। युद्ध-विराम पंक्ति के पार दस लाख काश्मीरी भी अपने भाई-बहनों के साथ सम्मिलित होने के लिए विकल हैं।...

यह विचार सर्वथा युक्तिसंगत है कि इस संविधान-सभा में संपूर्ण चालीस लाख काश्मीरियों के प्रतिनिधि होने चाहिये थे। लेकिन इस तथ्य की ओर से आंखें नहीं फेरी जा सकतीं कि जबकि सुरक्षा परिषद अपने कर्तव्यपालन में हिचकिचाती रही है, तीस लाख व्यक्तियों के प्रशासन तथा उनकी उन्नति का कार्य अवरुद्ध नहीं रखा जा सकता। इस संबंध में संविधान-सभा के अस्थायी अध्यक्ष मौलाना मुहम्मद सैय्यद मसूदी ने अपने भाषण में इस प्रश्न का पूर्ण समाधान किया। उन्होंने कहा: 'राज्य को एक नवीन संविधान की आवश्यकता है। चार वर्ष तक राज्य एक वैधानिक शरणार्थी रहा है। राजनीतिक मौसम बदल गया है और हम अधिक दिनों तक गुहलीन नहीं रह सकते। अतएव नई स्थिति के अनुकूल एक संविधान आवश्यक है।'

यदि कोई निष्पक्ष भाव से काश्मीर की स्थिति पर विचार करे तो वह इस परिणाम पर पहुंचे बिना नहीं रह सकता कि काश्मीर की यह संविधान-सभा समस्त काश्मीरी जनता की आकांक्षाओं तथा उसके दृढ़ निश्चय की मूर्त रूप है। काश्मीर के इतिहास में 31 अक्तूबर का दिन स्वर्णाक्षरों में लिखा जायेगा। जनता ने अपने स्वतः स्फूर्त उल्लास को विविध रूपों में प्रकट किया। स्त्रियों ने मंगलगान गाये और जनता ने जय-जयकार से आकाश गुंजाया।

स्थानीय दुकानों से देश का विकास होगा

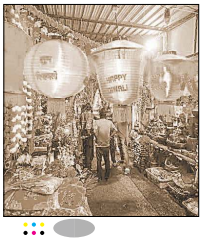
आगामी त्योहारी सीजन में विभिन्न ऑनलाइन शॉपिंग प्लेटफॉर्म ग्राहकों को लुभाने के लिए आकर्षक ऑफर दे रहे हैं, किंतु समझदार उपभोक्ताओं को इनके झांसे में आने से बचना चाहिए। उनको अपने आसपास की दुकानों से ही सामान खरीदना चाहिए। बेशक, उनके पास ऑफर नहीं होते और न ही अधिक पूंजी, फिर भी वे दो पैसे कमाने के लिए अपने स्वाभिमान की खातिर दुकान लगाते हैं। यह कटु सत्य है कि बड़ी मछली छोटी मछलियों को खा जाती है, परंतु यह भी सच है कि सबका अपना-अपना महत्व है। ठेलेवाले, फेरीवाले, फल-फूल वाले, सब्जीवाले, गुमटी वाले, सड़क किनारे दुकान लगाने वाले आदि सभी भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं। भले ही ये पूंजी के मामले में बड़ी-बड़ी कंपनियों, शॉपिंग मॉलों को टक्कर न दे रहे हों, लेकिन ईमानदारी, मेहनत और स्वाभिमान से व्यापार करने में ये किसी से कम नहीं हैं। अतः खरीदारी इनसे ही करें। इनसे सामान खरीदकर आपको जो सुकून मिलेगा, उसे शब्दों में बयां नहीं कर सकेंगे। स्वदेशी और स्थानीय व्यापार को बढ़ावा देकर हम देश की तरक्की में भी योगदान दे सकते हैं।

मोहित सोनी, टिप्पणीकार

दीपावली के त्योहार में बाजारों की रौनक, दुकानों की सजावट और ग्राहकों की चहल-पहल का अपना अलग आनंद होता है, लेकिन मॉल के बढ़ते आकर्षण के बीच स्थानीय दुकानदारों के सामने कारोबार बचाने की चुनौती बढ़ गई है। ऐसे में, स्थानीय बाजारों से खरीदारी केवल परंपरा निभाने का सवाल नहीं, बल्कि छोटे कारोबारियों और स्थानीय अर्थव्यवस्था को मजबूत करने का अवसर भी है। स्थानीय दुकानों से खरीदारी का सबसे बड़ा लाभ यह है कि पैसा सीधे छोटे कारोबारियों तक पहुंचता है। गली-मोहल्ले की कपड़े की दुकान, मिट्टी के दीये बेचने वाले कुम्हार, सजावटी सामान बनाने वाले कारीगर और मिठाई की दुकान चलाने वाले परिवार, त्योहार के कारोबार पर काफी हद तक निर्भर रहते हैं। दीपावली के दौरान होने वाली बिक्री इनके लिए काफी मायने रखती है। इसलिए यदि ग्राहक अपनी खरीदारी स्थानीय बाजारों से करे, तो छोटे व्यापारियों को आर्थिक सहारा मिल सकता है। यह समझना चाहिए कि दीपावली का संदेश दूसरों के जीवन में खुशियां लाना भी है। इसलिए खरीदारी का कुछ हिस्सा स्थानीय दुकानदारों, कारीगरों और छोटे उद्यमियों से जरूर सुरक्षित रखना एक सार्थक पहल हो सकती है। कुल मिलाकर, त्योहार की असली चमक तभी बढ़ेगी, जब बड़े कारोबार के साथ छोटे दुकानदारों के घरों में भी खुशहाली पहुंचे।

अमित चौहान, टिप्पणीकार

अनुलोम-विलोम
स्थानीय खरीदारी



जहां मिले फायदा, वहीं खरीदें सामान

दीपावली केवल दीप जलाने और मिठाइयां बांटने का त्योहार नहीं, बल्कि घर सजाने, नए कपड़े खरीदने और अपनों को उपहार देने का अवसर भी है। ऐसे में, खरीदारी के लिए मॉल का आकर्षण लगातार बढ़ रहा है। एक ही छत के नीचे कपड़े, आभूषण, घरेलू सजावट, खान-पान जैसी तमाम सुविधाएं मिलने से खरीदारी में लगने वाला समय बचता है, इसलिए व्यस्त जीवन-शैली में मॉल खरीदारी का पसंदीदा ठिकाना बन गया है।

कुछ लोग स्थानीय दुकानों से खरीदारी की बात कहते हैं, लेकिन सच यह भी है कि स्थानीय दुकानदार अपेक्षाकृत अधिक कीमतों पर सामान बेचते हैं। यह उपभोक्ताओं के साथ धोखा ही है। ज्यादा पुरानी बात नहीं है। स्थानीय दुकानदार एमआरपी से एक रुपया कम लेने को तैयार नहीं होते थे, लेकिन अब, जबसे मॉल संस्कृति शुरू हुई है, वे सामान पर छूट भी देने लगे हैं। वैसे भी, यदि किसी परिवार को कपड़े, बच्चों के खिलौने, रसोई के उपकरण व उपहार खरीदने हों और अलग-अलग बाजारों में भटकने के बजाय उसकी जरूरतें किसी एक मॉल में पूरी हो रही हो, तो वह वहां क्यों न जाए? उसे स्थानीय दुकानों से ही क्यों खरीदारी करनी चाहिए? इतना ही नहीं, मॉल में विभिन्न ब्रांडों के उत्पाद एक ही स्थान पर उपलब्ध होने से गुणवत्ता, डिजाइन और कीमत की तुलना करना आसान होता है। दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष छूट और विशेष त्योहारी ऑफर है। मॉल में दुकानदार ग्राहकों को आकर्षित करने के लिए मूल्य में कटौती, केशबैक, अतिरिक्त उत्पाद और लॉयल्टी अंक जैसी सुविधाएं देते हैं। उपभोक्ता इसका लाभ भी उठा सकते हैं।

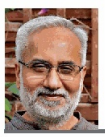
मॉल का तीसरा लाभ सुरक्षा और खरीदारी का व्यवस्थित माहौल है। पार्किंग, वातानुकूलित परिसर, लिफ्ट, बच्चों के लिए सुविधाएं और भुगतान के कई विकल्प परिवारों की खरीदारी को सुविधाजनक बनाते हैं। सच यह भी है कि मॉल अब केवल खरीदारी के केंद्र नहीं रहे, बल्कि मनोरंजन और पारिवारिक मेल-मिलाप के स्थल भी बन गए हैं। दीपावली के समय रोशनी, सजावट, सांस्कृतिक कार्यक्रम और बच्चों की गतिविधियां त्योहार का उत्साह बढ़ाती हैं। बेशक यह आरोप लगाया जाता है कि मॉल का शौक महंगा होता है, लेकिन मॉल में खरीदारी को केवल दिखावे से जोड़ना उचित नहीं है। यदि ग्राहक बजट तय करके, वास्तविक छूट की तुलना करके और जरूरत के अनुसार सामान खरीदें, तो मॉल सुविधाजनक विकल्प साबित हो सकते हैं। जाहिर है, त्योहारी मौसम में सुविधा, विकल्प तथा व्यवस्थित सेवाएं मॉल के पक्ष को मजबूत बनाती हैं।

समिधा, टिप्पणीकार

www.jagran.com राष्ट्रीय संस्करण
दैनिक जागरण
सोमवार, 02 नवंबर, 2026

दैनिक जागरण
जीवन संघर्ष का दूसरा नाम है

ट्रंप की परीक्षा लेने वाले चुनाव



शिवकांत शर्मा

मध्यावधि चुनावों में अगर अमेरिकी संसद में रिपब्लिकन दलों का बहुमत हो गया तो ट्रंप के लिए शेष कार्यकाल में सरकार चलाना मुश्किल होगा



अवधेश राजपूत

अमेरिका के इतिहास में शायद ही कोई ऐसा मध्यावधि चुनाव हुआ हो, जिस पर दुनिया ने इतना ध्यान दिया हो। इसकी वजह कोई और नहीं, बल्कि अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप हैं। उनकी पलटू और अटपटी नीतियों ने उनके ही देश द्वारा स्थापित विश्व व्यवस्था में ऐसी उथल-पुथल मचाई है कि हर कोई उनसे निजात पाने की राह देख रहा है। हालांकि इस चुनाव में उनका भाग्य पूरी तरह दांव पर नहीं है। उनका आधा कार्यकाल अभी बाकी है, लेकिन अमेरिकी संसद यानी कांग्रेस की समूची प्रतिनिधि सभा और सीनेट की एक तिहाई से अधिक सीटों का फैसला इन्हीं चुनावों में होना है। यह चुनाव प्रतिनिधि सभा के चुनाव क्षेत्रों के परिसीमन के बाद हो रहा है, जिससे ट्रंप की रिपब्लिकन पार्टी को लगभग नौ सीटों पर लाभ होने की आशा है। फिर भी जनमत सर्वेक्षणों के अनुसार उनकी पार्टी का प्रतिनिधि सभा में तो हारना तय है ही, सीनेट भी हाथ से जा सकती है।

राष्ट्रपतियों की पार्टी ने पिछले 20 मध्यावधि चुनावों में से 18 में प्रतिनिधि सभा की सीटें गंवाई हैं। इस समय ट्रंप की रिपब्लिकन पार्टी के पास प्रतिनिधि सभा में मात्र दो सीटों का बहुमत है और सीनेट में तीन सीटों का। इसलिए उनकेसे पार्टी उम्मीदवारों के लिए ऐसे प्रचार किया है मानो वे स्वयं चुनाव लड़ रहे हों। मतदाताओं से अपील की है कि वे उन्हें ही उम्मीदवार मानकर वोट दें। यही नहीं, उन्होंने भारत के चुनावों की तरह वोटरों को लुभाने के लिए पांच हजार डालर की रेवड़ी बांटने का वादा भी किया है। फिर भी एक ताजा सर्वेक्षण के अनुसार उनके काम से संतुष्टों का दायरा घटकर 31 प्रतिशत पर आ गया है और इतिहास बताता है कि यह आंकड़ा 50 से नीचे गिर जाने पर राष्ट्रपति की पार्टी को प्रतिनिधि सभा में औसतन 37 सीटों का नुकसान होता है। 2018 के मध्यावधि चुनाव में ट्रंप से संतुष्ट रहने वालों का प्रतिशत 41 पर आ जाने से रिपब्लिकन पार्टी को 40 सीटों का नुकसान हुआ था। अनुमान है कि रिपब्लिकन पार्टी को प्रतिनिधि सभा की कम से कम 15 सीटों का नुकसान तो होना तय है और सीनेट की भी तीन-चार सीटें जा सकती हैं।

कांग्रेस के दोनों सदनों में विपक्ष का बहुमत होने पर राष्ट्रपति के लिए सरकार चलाना कठिन हो जाता है। प्रतिनिधि सभा की सभी संसदीय और स्थाई समितियां विपक्ष के हाथों में चली जाती हैं जो हर विधान के बजट, खर्च और कर्ज की सीमा निर्धारित करती हैं और विदेशी मामलों की नीतियां बनाती हैं। ये समितियां ट्रंप और उनके मंत्रियों पर जांच बिठा सकती हैं, उन्हें तलब कर सकती हैं और महाभियोग भी चला सकती हैं। राष्ट्रपति की महाभियोग से हटाने के लिए तो सीनेट में दो तिहाई बहुमत चाहिए। इसीलिए एंड्रयू जॉनसन, बिल क्लिंटन और ट्रंप पर महाभियोग चलाने के बावजूद आज तक किसी राष्ट्रपति को हटाया नहीं जा सका है। इस बीच यह भी सुनने में आया है कि डेमोक्रेटिक पार्टी ने युद्ध मंत्री पीट हेगसेथ पर महाभियोग की तैयारी कर रखी है। ट्रंप पर महाभियोग तो शायद ही चलाया जाए, लेकिन उनके तथा उनके परिवार के सदस्यों पर पद का अनुचित लाभ उठाने की और घुष्टाचार की जांच बिठाई जा सकती है। ट्रंप परिवार की क्रिप्टो कंपनी ने पाकिस्तानी सरकार के साथ उस समय सौदा किया था, जब अमेरिका की क्रिप्टो नीति बन रही थी।

कांग्रेस में विपक्ष का बोलबाला होने पर अमेरिकी राष्ट्रपति अपने पूरा ध्यान विदेश नीति पर लगाते आए हैं। लगता है ट्रंप भी इसकी तैयारी कर चुके हैं। ईरान को समझौते पर मजबूर करने के लिए उन्होंने अपनी सेना पहले ही मैदान में उतार रखी है, ताकि डेमोक्रेट कांग्रेस में चलती लड़ाई को रुकवाने या उसके लिए पैसा रोकने का राजनीतिक जोखिम न उठा सके। इस महीने के उत्तरार्ध में वे एपैक की शिखर बैठक में भाग लेने चीनी शहर शेनजेन जा रहे हैं, जहां रूसी राष्ट्रपति पुतिन के आग्रह पर शी चिनफिंग और पुतिन के साथ बैठकर नई विश्व व्यवस्था पर विचार करेंगे। इसे नई दिल्ली में हुई मोदी-शी-पुतिन शिखर बैठक के जवाब के रूप में भी देखा जा सकता है, मगर लगता है असली उद्देश्य यूक्रेन को पुतिन की शर्तों पर युद्धविराम समझौते के लिए मजबूर करना है। यूरोप में इसे तानाशाही तिकड़ी के उदय के रूप में देखा जा रहा है, जो पूरी दुनिया को अपने-अपने प्रभाव क्षेत्रों में बांट कर मनमानी करना चाहती है।

चीन को जी-2 का सदस्य बताने और शी चिनफिंग के साथ मुलाकातों का सिलसिला बढ़ाने से लगता है कि ट्रंप की दिलचस्पी अब हिंद-प्रशांत क्षेत्र को चीनी विस्तारवाद से मुक्त रखने से अधिक चीन के साथ लंबित व्यापार सौदा सिरे चढ़ाने में हो गई है। पाकिस्तान के साथ वे अपने और अपने परिवार के निजी आर्थिक हितों के कारण मधुर संबंध रखना चाहते हैं। भारत के लिए यह अच्छी बात नहीं है। उसे अपने सामरिक और आर्थिक रिश्तों के समीकरणों में निरंतर संतुलन बिठाते रहना होगा। भारत में अमेरिका पर भरोसे की कमी का पुराना इतिहास है। उसे दूर करने के लिए हुए गत 25 वर्षों के प्रयासों पर ट्रंप की विशुद्ध लेन-देन परक और पलटू नीतियों ने पानी फेर दिया है। यूरोप और एशिया में अमेरिका के पारंपरिक मित्र देश भारत से भी अधिक स्तब्ध हैं। प्यू शोध केंद्र के हाल 35 देशों में किए एक सर्वेक्षण के अनुसार यूरोप और हिंदप्रशांत के अधिकांश देश और इंडोनेशिया अब अमेरिका से अधिक चीन पर भरोसा करने लगे हैं।

ट्रंप प्रशासन की कोशिश रहेगी कि जनवरी में नई कांग्रेस के शपथ लेने से पहले भारत के साथ व्यापार सौदा कर ले, पर भारत को अपने ऊंचे हितों और कमजोर आर्थिक क्षेत्रों के हितों की रक्षा के लिए अडिग रहना होगा। नई कांग्रेस ट्रंप की टैरिफ नीतियों को भी नहीं रोक पाएगी, क्योंकि वे अब अनुचित व्यापार नीतियों को आधार बनाकर धारा 232 और 301 का प्रयोग कर रहे हैं, जिन्हें अदालतों में ही चुनौती दी जा सकती है। एचवनबी वीजा की शर्तों में ढील या नौकरी आधारित ग्रीन कार्ड सुविधा बहाल होने के आसार भी कम हैं, क्योंकि ट्रंप ने वोटों के लिए भारतीय प्रतिभाओं को लेकर संदेह का ऐसा बीज बो दिया है, जिसके खिलाफ जाने का राजनीतिक जोखिम शायद ही कोई लेना चाहे।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)
response@jagran.com

वोट चोरी का बहाना

कांग्रेस ने सहयोगी दलों के सहयोग से दिल्ली के रामलीला मैदान में तथाकथित वोट चोरी के बहाने भीड़ तो जुटा ली, लेकिन यह भीड़ दस लाख के दावे के मुकाबले कहीं अधिक कम रही। इस रैली में राहुल गांधी समेत अन्य विपक्षी नेताओं ने मतदाता सूचियों के विशेष गहन पुनरीक्षण अर्थात एसआइआर को लेकर वही सब कहा, जो पिछले लंबे समय तक कहते चले आ रहे हैं। इसमें संदेह है कि यह रैली विपक्ष के इस नैरेटिव को विश्वसनीयता प्रदान कर सकेगी कि एसआइआर के जरिये विपक्षी दलों के समर्थकों के नाम जानबूझकर वोटर लिस्ट से हटाए जा रहे हैं। आश्चर्य नहीं कि वोट चोरी का शोर मचाकर जो माहौल बनाया जा रहा है, उसका वही हश्र हो, जो इस दुष्प्रचार का हुआ था कि ईवीएम के कारण विपक्ष को हार का सामना करना पड़ रहा है। कांग्रेस को वोट चोरी का अपना अभियान तेज करने का जरिया कुछ दिन पहले की उस खबर से मिला, जिससे यह संदेश देने की कोशिश की गई थी कि एसआइआर के मामले में मुख्य चुनाव आयुक्त ज्ञानेश कुमार दोनों चुनाव आयुक्तों की आपत्तियों पर ध्यान नहीं दे रहे हैं। हालांकि चुनाव आयोग ने सुप्रीम कोर्ट में शपथपत्र देकर स्पष्ट रूप से कहा कि एसआइआर पर सभी फैसले तीनों चुनाव आयुक्तों की सहमति से हुए। इसके बाद भी विपक्षी दल अपने इस हठ पर कायम हैं कि वोट चोरी हो रही है। वे इस तथ्य पर भी ध्यान देने के लिए तैयार नहीं कि जिन 13 करोड़ लोगों के नाम वोटर लिस्ट हटाए गए हैं, वे उनके हैं जो अन्यत्र जा बसे हैं या जिनकी मृत्यु हो गई है अथवा जिनके नाम दो-तीन जगह दर्ज थे। सच यह भी है कि 13 करोड़ लोगों का नाम हटाने का फैसला अंतिम नहीं है और वैध मतदाता अपना नाम वोटर लिस्ट में अभी भी शामिल करा सकते हैं।

विपक्ष इस सच से भी मुंह मोड़ रहा है कि एसआइआर की सुनवाई कर रहे सुप्रीम कोर्ट ने इस प्रक्रिया में सुधार के कई सुझाव देने के साथ लोगों को अपना नाम वोटर लिस्ट में शामिल कराने के लिए अतिरिक्त सुविधा एवं समय प्रदान करने के भी निर्देश दिए हैं। इस सबके बावजूद विपक्षी दल वोट चोरी का राग अलापने में लगे हुए हैं। विडंबना यह है कि सुप्रीम कोर्ट में एसआइआर के खिलाफ याचिका दायर करने वाले विपक्षी नेता कथित वोट चोरी के खिलाफ कोई प्रमाण कोर्ट के समक्ष पेश करने के बजाय दिखावटी संसद बुलाकर मुख्य चुनाव आयुक्त के खिलाफ जन महाभियोग पारित करने जैसे स्वांग कर अपना ही उपहास उड़ा रहे हैं। एक विडंबना यह भी है कि वोट चोरी का आरोप लगा रहे कई विपक्षी दल और खासकर कांग्रेस बूथ लेवल अफसरों की ओर से होने वाली त्रुटियों को रोकने के लिए अपने कार्यकर्ताओं को बूथ लेवल एजेंट के तौर पर नियुक्त करने को लेकर उदासीन है।

जरूरी है जांच

औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों (आइटीआइ) में विद्यार्थी बड़ी संख्या में पढ़ाई कर रहे हैं। प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद उन्हें विभिन्न औद्योगिक प्रतिष्ठानों में काम करने का अवसर मिलता है। औद्योगिक परिवेश की आवश्यकता के अनुसार प्रशिक्षण प्राप्त युवाओं के लिए नौकरी और रोजगार के अच्छे अवसर भी हैं। बिहार सरकार ने इस बात पर भी जोर दिया है कि आइटीआइ में आज की आवश्यकता के अनुसार विषयों को शामिल किया जाए, जिनमें रोबोटिक्स भी है। इस पर काम भी हो रहा है। यह भी देखना होगा कि विद्यार्थियों की एक बहुत बड़ी संख्या निजी संस्थानों में है, पर वहां मानक के अनुरूप सुविधा नहीं है, न ही पढ़ाई की व्यवस्था। प्रशिक्षण का प्रमाण पत्र भी मिल जाता है, पर वे औद्योगिक प्रतिष्ठानों की आवश्यकता पर खरे नहीं उतर पाते, जिस कारण उन्हें अवसर नहीं मिल पाता है। सरकार ने इन सबको देखते हुए निजी आइटीआइ की जांच का निर्णय किया है। यह बिल्कुल सही फैसला है और पूरी पारदर्शिता के साथ इसे शीघ्रता से किया जाना चाहिए। ऐसे संस्थान भरे पड़े हैं, जो कहीं एक तो कहीं दो कमरों में चल रहे हैं, जबकि इसके लिए मानक तय है। दो सौ प्रशिक्षणार्थियों के लिए गांव में कम से कम दो एकड़ और शहरी क्षेत्र में सवा एकड़ में संस्थान होना चाहिए। पक्के भवन, प्रयोगशाला आदि की व्यवस्था अनिवार्य शर्त है, पर अधिसंख्य संस्थानों में इसका अनुपालन शायद ही हो रहा हो।

जांच के बाद निजी आइटीआइ की कड़ी निगरानी करनी होगी, ताकि सही तस्वीर सामने आने के बाद सुधार किया हो सके

लोकतंत्र के लिए खतरा है भीड़तंत्र



रमाकांत

जब असहमति सार्वजनिक जीवन को बाधित करने का काम करने लगती है, तब लोकतंत्र भीड़तंत्र में बदलने लगता है



लोकतंत्र में हिंसा की नहीं है कोई जगह। फाइल

आधुनिक राजनीतिक दर्शन में लोकतंत्र को केवल बहुमत का शासन नहीं, बल्कि संवाद, विमर्श और असहमति के सह-अस्तित्व की सतत प्रक्रिया माना जाता है। परिपक्व लोकतांत्रिक व्यवस्थाएं अपनी वैधता और स्थायित्व तब प्राप्त करती हैं, जब नागरिकों को व्यवस्था की कमियों पर सवाल उठाने और शांतिपूर्ण प्रतिरोध का पर्याप्त अवसर मिलता है। असहमति को लोकतंत्र का सुरक्षा-वाल्व माना जाता है। इसके वैधानिक रास्ते बंद होने पर राजनीतिक व्यवस्था में अव्यवस्था की आशंका बढ़ जाती है। इक्कीसवीं सदी के तीसरे दशक में भारत सहित दुनिया के कई हिस्सों में एक स्पष्ट बदलाव दिखाई दे रहा है। शांतिपूर्ण, सत्याग्रह-प्रेरित और कानून के दायरे में होने वाले जन आंदोलनों की जगह धीरे-धीरे आक्रामक, अनियंत्रित और व्यवस्था-विरोधी भीड़तंत्र लेता जा रहा है। जब असहमति सार्वजनिक जीवन को बाधित करने, राष्ट्रीय संपत्ति को नुकसान पहुंचाने और प्रशासनिक तंत्र को बंधक बनाने का रूप लेती है, तब लोकतंत्र भीड़तंत्र में बदलने लगता है। कानूनों में संशोधन, विकास योजनाओं और संवैधानिक संस्थाओं के विरोध में हुए प्रदर्शनों ने वैध जनविरोध और अराजक भीड़तंत्र के बीच अंतर निर्धारित करने का प्रश्न खड़ा कर दिया है।

दक्षिण एशिया से पश्चिमी यूरोप तक की घटनाएं दर्शाती हैं कि जब जनांदोलन संवैधानिक मर्यादाओं का उल्लंघन करते हैं, तो लोकतंत्र भीड़तंत्र में बदलने लगता है। वर्ष 2022 में श्रीलंका के 'अरगलाया' आंदोलन और नेपाल में लगातार हुई नाकेबंदियों ने संस्थागत स्थिरता को कमजोर किया। वहीं अगस्त 2024 में बांग्लादेश का आरक्षण-विरोधी आंदोलन हिंसक सत्ता-परिवर्तन में बदल गया, जिसके बाद संसद, न्यायपालिका और अल्पसंख्यकों की सुरक्षा से जुड़ी व्यवस्थाएं गंभीर संकट में आ गईं। पश्चिमी लोकतंत्र भी इस संकट से अछूते नहीं हैं। फ्रांस, इटली, बेल्जियम, पुर्तगाल, स्पेन और अल्बानिया में लोग सरकारी नीतियों के विरोध में प्रदर्शन कर रहे हैं। फ्रांस में महंगाई, शिक्षा व्यवस्था की बदहाली और सार्वजनिक सेवाओं में कटौती के विरोध में शुरू हुए प्रदर्शन कुछ स्थानों पर आगजनी, लूटपाट और पुलिस के साथ झड़पों में बदल गए। इटली और बेल्जियम में भी प्रदर्शनकारियों द्वारा सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुंचाने की घटनाएं सामने आईं। परिपक्व लोकतांत्रिक व्यवस्था वाले इन देशों में वैधानिक प्रक्रियाओं के बजाय सड़क पर अराजकता के जरिये निर्णय हासिल करने की कोशिश चिंताजनक है। भारत के लिए भी यह गंभीर चिंता का विषय है कि कुछ घरेलू तत्व इस अराजकता से कुप्रेरणा लेकर 'ढाका की तर्ज पर दिल्ली में 'रिजीम चेंज' का आह्वान कर रहे हैं।

गहरे मतभेदों और लंबे आंदोलनों के बावजूद भारत तीन प्रमुख आधारों पर अपने पड़ोसी देशों (श्रीलंका, बांग्लादेश और नेपाल) की तरह संस्थागत पतन या तख्तापलट से बचा रहा है। पहला, पड़ोसी देशों से अलग भारतीय सेना पूरी तरह गैर-राजनीतिक रही है और उसने हमेशा निर्वाचित नागरिक सरकार तथा संविधान के अधीन अपनी भूमिका निभाई है। दूसरा, संघीय ढांचा और केंद्र तथा राज्यों में होने वाले नियमित चुनाव सुरक्षा वाल्व का काम करते हैं। इनके माध्यम से जनता का असंतोष सड़कों पर लंबे समय तक बने रहने के बजाय मतपेटियों के जरिये अभिव्यक्त होता है। तीसरा, सक्रिय न्यायपालिका ने कार्यपालिका और प्रदर्शनकारियों के बीच संवैधानिक मध्यस्थ की भूमिका निभाई है। यही संस्थागत लचीलापन और संतुलन भारत को राजनीतिक अराजकता से बचाए रखने में मदद करता है।

लोकतंत्र की भीड़तंत्र से बचाने और जनांदोलनों को संवैधानिक दायरे में रखने के लिए चार संस्थागत सुधार जरूरी हैं। पहला, 'पूर्व-विधायी परामर्श नीति, 2014' को सख्ती से लागू करते हुए विधेयकों को कम से कम 30 दिनों तक सार्वजनिक विमर्श के लिए रखा जाए, ताकि नीतिगत असंतोष समय रहते दूर हो सके। दूसरा, प्रकाश सिंह बाद (2006) के निर्देशों के अनुरूप पुलिस को राजनीतिक हस्तक्षेप से मुक्त किया जाए और उसे आधुनिक, गैर-घातक भीड़-नियंत्रण तकनीकों तथा मनोवैज्ञानिक प्रशिक्षण से लैस किया जाए। तीसरा, प्रदर्शनों के दौरान सार्वजनिक संपत्ति को हुए नुकसान की भरपाई के लिए कठोर और पारदर्शी केंद्रीय कानून बनाया जाए। चौथा, हिंसा भड़काने वाले दुष्प्रचार पर अंकुश लगाने और एल्गोरिदम की जवाबदेही तय करने के लिए इंटरनेट मीडिया प्लेटफार्म की कानूनी जिम्मेदारी निर्धारित की जाए।

लोकतांत्रिक संतुलन बनाए रखने के लिए राज्य को अपनी शक्तियों का दुरुपयोग नहीं करना चाहिए एवं नागरिकों को अपने संवैधानिक कर्तव्य निभाने चाहिए। सरकार का दायित्व है कि वह असहमति के स्वरों को संवेदनशीलता से सुने, वहीं प्रदर्शनकारियों को हिंसा का रास्ता छोड़कर कानूनी और शांतिपूर्ण संवाद अपनाना चाहिए। अधिकार और कर्तव्य जब तक एक-दूसरे के पूरक बने रहेंगे, तब तक भारत का लोकतंत्र भीड़ के क्षणिक उन्माद से अप्रभावित रहते हुए अपने संवैधानिक आदर्शों की रक्षा कर सकेगा।

(लेखक बिहार स्टेट बार काउंसिल के चेयरमैन हैं)
response@jagran.com



ऊर्जा

जीवन

जन्म और मृत्यु के बीच की अवधि ही जीवन है, लेकिन जीवन की सार्थकता केवल सांसों की संख्या या भौतिक उपलब्धियों से निर्धारित नहीं होती। वास्तविक सफल जीवन वह है, जिसमें मन प्रसन्न हो, विचार निर्मल हों और व्यवहार में सद्भावना हो। धन-संपत्ति का अभाव होने पर भी यदि मन में आनंद, संतोष और उमंग है, तो जीवन अपनी सुंदरता बनाए रखता है। इसके विपरीत, भौतिक सुविधाओं की प्रचुरता के बावजूद मन अशांत हो तो जीवन का वास्तविक सुख अधूरा रह जाता है।

शरीर नश्वर है, जबकि आत्मा को शाश्वत माना गया है। आत्मा कर्मों के बंधन के कारण जन्म-मरण के चक्र में भटकती रहती है। क्रोध, मान, माया और लोभ इस बंधन को मजबूत करते हैं। जब तक मोहनीय कर्म का क्षय नहीं होता, तब तक आत्मा की संसार-यात्रा जारी रहती है। इस दृष्टि से जीवन केवल वर्तमान का उपभोग नहीं, बल्कि आत्मा की शुद्धि और मुक्ति की दिशा में आगे बढ़ने का अवसर भी है। यदि मनुष्य अपने कर्मों के परिणाम के प्रति सजग रहे, तो वह पाप, छल और अनैतिकता से बचने का प्रयास करेगा।

सौभाग्य केवल धन, प्रतिष्ठा या जन्म से नहीं मिलता। सच्चा सौभाग्य उस व्यक्ति का है जिसकी जीवनशैली सादा, विचार उच्च और व्यवहार करुणापूर्ण है। सद्विचार जब आचरण में उतरते हैं, तभी सद्चरित्र का निर्माण होता है। दूसरों के प्रति सहानुभूति, सभी के प्रति प्रेम और धर्माचरण के प्रति निष्ठा ही मनुष्य के चरित्र को श्रेष्ठ बनाते हैं। भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रयास करना जरूरी है, लेकिन जीवन को केवल इसी दौड़ तक सीमित कर देना उचित नहीं। शरीर, मन और आत्मा के बीच संतुलन स्थापित करना ही सार्थक जीवन का आधार है। मानवीयता, अहिंसा, संयम, नैतिकता और सद्भावना से युक्त जीवन ही वास्तव में अच्छा जीवन है।

प्रदीप छाजेड़

खुशियों में 'मीठा जहर' घोलती मिलावटखोरी

लेखराज सुथार

जब तक मिलावटखोरों को कठोर सजा नहीं दी जाएगी, तब तक यह जानलेवा खेल बंद नहीं होगा

हरियाणा के सोनीपत में फूड सेफ्टी विभाग की टीम द्वारा एक रसगुल्ला फैक्ट्री से करीब पांच सौ किलो दूषित एवं खुले में रखे रसगुल्लों और छेना को जमीन में दबाकर नष्ट करने की घटना कोई अकेली बानगी नहीं है। यह हमारे समूचे खाद्य सुरक्षा तंत्र और त्योहारी अर्थव्यवस्था के भीतर तक पैठ बना चुके उस सिंडिकेट की पोल खोलती है, जो चंद रुपये के मुनाफे के लिए इंसानी जिंदगी को दांव पर लगाने से भी गुरेज नहीं करता। अकेले दिल्ली जैसे महानगर में त्योहारों के दिनों में रोजाना करीब बारह हजार किलो मावे और पंद्रह हजार किलो पनीर की भारी-भरकम खपत होती है। वर्ष 2024-25 के दौरान देशभर में दूध और दुग्ध उत्पादों के लिए गए तैंतीस हजार चार सौ पांच नमूनों में से बारह हजार खत सौ अस्सी नमूने तय मानकों पर पूरी तरह फेल पाए गए। यानी बाजार में बिकने वाले देसी प्रोडक्ट्स का लगभग अड़तीस प्रतिशत हिस्सा हमारी सेहत के लिए पूरी तरह असुरक्षित, संदिग्ध और मिलावटी है।

दिल्ली और इसके आसपास के इलाकों में नकली मावे, यूरिया युक्त पनीर और सिंथेटिक घी के खिलाफ चल रही मौजूदा धरपकड़ यह साबित करती है कि यह केवल त्यौहारी की तात्कालिक मांग का असर नहीं है, बल्कि एक संगठित आपराधिक नेटवर्क है जो पूरे साल सक्रिय रहता है। रासायनिक डिटर्जेंट, स्टार्च, यूरिया और घटिया दर्जे के स्किम्ड मिल्क पाउडर से तैयार होने वाला यह नकली पनीर और मावा हमारे त्योहारों की खुशियों में धीरे-धीरे 'मीठा जहर' घोल रहा है। विडंबना यह है कि फूड सेफ्टी विभाग की टीमें त्योहारों के ठीक पहले सक्रिय तो होती हैं, लेकिन उनकी यह सक्रियता केवल सैंपल लेने और कुछ सौ किलो मिठाइयां नष्ट करने तक सीमित रह जाती है। अंतिम निष्कर्ष सैंपल की रिपोर्ट आने के बाद तय होता है और तब तक त्योहार बीत चुके होते हैं और वह जहरीली मिठास लोगों के पेट में जाकर उनके स्वास्थ्य को स्थाई नुकसान पहुंचा चुकी होती है।

जब तक मिलावटखोरी को 'गैर-जमानती' और 'हत्या के प्रयास' जैसी गंभीर आपराधिक श्रेणियों में शामिल करके त्वरित अदालतों के जरिए कड़ी सजा नहीं दी जाएगी, तब तक यह जानलेवा खेल बंद नहीं होगा। केवल छापे मारना और माल नष्ट करना इस मर्ज का स्थाई इलाज नहीं है। इसके साथ ही, आम उपभोक्ताओं को भी अपनी सतर्कता बढ़ानी होगी और ब्रांडेड या अत्यधिक सस्ती मिठाइयों के आकर्षण से बचकर स्थानीय शुद्धता और गुणवत्ता से समझौता बंद करना होगा। त्योहारों की असली मिठास केवल पकवानों के स्वाद में नहीं, बल्कि अपनों की अच्छी सेहत और जीवन की सुरक्षा में निहित है।

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

न्याय में देरी

'असहनीय हो चुकी है न्याय में देरी' शीर्षक से लिखे अपने आलेख में संजय गुप्त ने एक महत्वपूर्ण विषय उठाते हुए समयबद्ध न्याय की जरूरत पर जोर दिया है। सुधार की जिम्मेदारी न्यायाधीशों की है। उन्हें अधिवक्ताओं की बहानेबाजी, पुलिस की कमजोर विवेचना और बार-बार स्थगन की कोशिशों के बावजूद दृढ़ता से सुनवाई आगे बढ़ानी होगी। सिंगापुर की न्याय व्यवस्था से सीख लेते हुए न्यायाधीशों को मुकदमों की समय-सारिणी तय करने, अनावश्यक स्थगनों पर रोक लगाने और जवाबदेही सुनिश्चित करने की दिशा में काम करना चाहिए। साथ ही पंचायती राज संस्थाओं को विवादों के समझौतापूर्ण निपटारे के लिए प्रोत्साहित किया जाए। विशेष न्यायालयों और लोक-अदालतों का नियमित आयोजन हो तथा छोटे विवादों को सामुदायिक मध्यस्थता से सुलझाने की संस्कृति विकसित की जाए। जर्मनी और जापान जैसे देशों में न्यायिक मध्यस्थता तथा समझौते को प्रोत्साहित करने वाली व्यवस्थाएं उपयोगी उदाहरण हैं। समाज को भी जागरूक करना होगा कि हर विवाद को अदालत तक ले जाना जरूरी नहीं है। सशक्त पंचायतें, विश्वसनीय सामुदायिक संस्थाएं और निष्पक्ष मध्यस्थता समय, धन और आपसी संबंधों को बचा सकती हैं।

वृज भूषण गोयल, लुधियाना

सस्ती दवाओं का असर

केंद्र सरकार ने कैंसर की 137 दवाओं की कीमतें कम करने का महत्वपूर्ण फैसला लिया है, जिससे ब्रेस्ट, प्रोस्टेट और ओवरी कैंसर की 543 ब्रांडेड दवाएं सस्ती होंगी। सरकार का यह कदम मरीजों के लिए राहतकारी है। इससे कैंसर का इलाज करा रहे मरीजों पर आर्थिक बोझ घटेगा और वे अधिक हौसले के साथ बीमारी से लड़ सकेंगे। कैंसर का इलाज लंबी प्रक्रिया है। इसमें मरीजों को कीमोथेरेपी, इम्यूनोथेरेपी, इंजेक्शन और दूसरी महंगी दवाओं की जरूरत पड़ती है। एक और मरीज गंभीर बीमारी से जूझता है तो दूसरी ओर दवाओं की ऊंची कीमतों का सीधा असर उसकी जेब पर पड़ता है। इससे पूरा परिवार आर्थिक और मानसिक परेशानी झेलता है। सस्ती दवाओं की उपलब्धता से मरीजों को इलाज जारी रखने में मदद मिलेगी।

महेश कुमार, राजस्थान

विदेशी मुद्रा भंडार

भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआइ) के आंकड़ों के अनुसार, 23 अक्टूबर 2026 को समाप्त सप्ताह में देश का विदेशी मुद्रा भंडार 1.269 अरब डालर घटकर 719.748 अरब डालर रह गया। विदेशी मुद्रा भंडार में उतार-चढ़ाव के लिए केवल डालर की उपलब्धता या रुपये की मजबूती-कमजोरी जिम्मेदार नहीं होती। वैश्विक बाजार, सोने की कीमतें, विदेशी निवेश और केंद्रीय बैंक की नीतियां भी इस पर असर डालती हैं। आरबीआइ के आंकड़ों के मुताबिक, समीक्षाधीन सप्ताह में विदेशी मुद्रा परिसंपत्तियों 1.358 अरब डालर बढ़कर 593.205 अरब डालर हो गईं। दूसरी ओर, स्वर्ण भंडार का मूल्य 2.65 अरब डालर घटकर 103.15 अरब डालर रह गया। विशेष आहरण अधिकार (एसडीआर) में 27 मिलियन डालर की वृद्धि हुई, जबकि अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आइएमएफ) में मिलने वाली आरक्षित स्थिति चार मिलियन डालर घट गई। इन सभी के मिले-जुले प्रभाव से कुल विदेशी मुद्रा भंडार में 1.269 अरब डालर की गिरावट दर्ज की गई। विदेशी मुद्रा भंडार में विदेशी मुद्रा परिसंपत्तियों के साथ सोना, एसडीआर और आइएमएफ में आरक्षित स्थिति भी शामिल होती है। इसलिए अंतरराष्ट्रीय बाजार में सोने की कीमत घटने से कुल भंडार का डालर मूल्य भी कम हो सकता है, भले ही आरबीआइ के पास रखे सोने की वास्तविक मात्रा में कोई कमी न आई हो।

युगल किशोर राही, छपरा, बिहार

मेलबाक्स

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

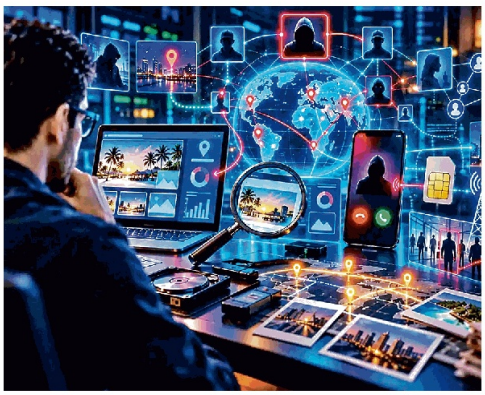
अपने पत्र इस पते पर भेजें:
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: response@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व. नरेन्द्र मोहन. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, अई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा-201309 से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष: नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615600, E-mail: delhi@nda.jagran.com. R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

आजकल

भुगतान की सुविधा बन रही ठगों का हथियार

स्मार्टफोन की स्क्रीन पर कुछ क्षणों में होने वाला डिजिटल भुगतान आज भारत की सबसे बड़ी उपलब्धियों में गिना जाता है। लेकिन यही तेजी अब साइबर ठगों के लिए सबसे बड़ी गुंजाइश बन रही है। किसी को लूटने के लिए अब हथियार लेकर आने की आवश्यकता नहीं। एक फोन काल, एक फर्जी संदेश, एक क्यूआर कोड, एक झूठी पहचान या भय पैदा करने वाली कहानी ही प्राय: पर्याप्त होती है। इसके बाद पीड़ित स्वयं अपने खाते से रकम उस व्यक्ति तक पहुंचा देता है, जिसे उसने कभी देखा तक नहीं। यही डिजिटल वित्तीय ठगी का सबसे खतरनाक चेहरा है, जो निरंतर गहराता जा रहा है



इंटरनेट की दुनिया के विस्तार लेने से भुगतान आसान होने के साथ ही उससे जुड़े जोखिम भी बढ़ते जा रहे हैं। प्रतीकात्मक



शंभु सुमन
तकनीकी मामलों के जानकार

भारत में डिजिटल भुगतान ने आर्थिक व्यवहार को बदल दिया है। छोटी दुकान से लेकर बड़े कारोबारी प्रतिष्ठान तक भुगतान के लिए यूपीआइ स्वीकार करते हैं। नकदी रखने की जरूरत कम हुई है और बैंकिंग सेवाएं उन लोगों तक पहुंची हैं, जिन्हें पहले औपचारिक बैंकिंग व्यवस्था तक पहुंचने में कठिनाई होती थी। लेकिन हर सुविधा अपने साथ एक नई जिम्मेदारी भी लाती है। जिस भुगतान को पूरा करने में कुछ सेकेंड लगते हैं, उसके गलत होने पर नुकसान भी कुछ सेकेंड में हो सकता है। समस्या यह नहीं कि यूपीआइ या डिजिटल भुगतान असुरक्षित हैं। समस्या यह है कि अपराधी सुरक्षित प्रणाली के आसपास मौजूद मानवीय कमजोरियों का फायदा उठा रहे हैं। इसलिए साइबर ठगी को केवल तकनीकी समस्या मानना भूल होगी। यह उतनी ही बड़ी सामाजिक और व्यवहारगत समस्या है।

पुराने जमाने की ठगी में अपराधी सीधे पैसा या सामान छीनता था। डिजिटल युग में तरीका बदल गया है। अब अपराधी पहले भरोसा जीतता है और फिर पीड़ित से ही भुगतान कराता है। वस्तुत: क्यूआर कोड ने भुगतान की प्रक्रिया को बेहद आसान बनाया है। दुकान पर क्यूआर कोड स्कैन किया और भुगतान पूरा। लेकिन यही सुविधा धोखाधड़ी में भी इस्तेमाल की जा सकती है। ठग पुरस्कार, कैशबैक, रिफंड या किसी अन्य लाभ का लालच देकर क्यूआर कोड भेज सकते हैं। एनपीसीआइ (नेशनल पेमेंट कारपोरेशन आफ इंडिया) की सलाह भी है कि अनजान लोगों के भुगतान अनुरोधों के प्रति सावधान रहें।

साइबर ठगी का संसार अब इतना विविध हो चुका है कि अपराधी अलग-अलग वर्गों के लिए अलग-अलग कहानियां गढ़ रहे हैं। नौकरी की तलाश करने वाले व्यक्ति को नौकरी का लालच दिया जाता है। निवेश में रुचि रखने वाले व्यक्ति को तेजी से मुनाफे का सपना दिखाया जाता है। बुजुर्गों को सरकारी अधिकारी या पुलिस बनकर डराया जा सकता है। कर्मचारियों को वरिष्ठ अधिकारी या 'बास' के नाम पर भुगतान करने के लिए दबाव डाला जा सकता है। वर्ष 2026 में गृह मंत्रालय ने 'बास स्कैम' के बारे में भी चेतावनी जारी की है, जिसमें गलत खाता विवरण और फर्जी दस्तावेजों के माध्यम से वित्तीय धोखाधड़ी के प्रयासों का उल्लेख है।

एआइ ने खतरा और बढ़ाया : कृत्रिम बुद्धिमत्ता ने साइबर अपराध को एक नया आयाम दिया है। नकली आवाज, नकली वीडियो, नकली संदेश और किसी परिचित की शैली की नकल से भरोसा पैदा करना पहले की तुलना में आसान हो सकता है। कल्पना कीजिए कि किसी व्यक्ति को उसके परिचित जैसी आवाज में फोन आए और तत्काल आर्थिक सहायता मांगे जाए। सामान्य परिस्थितियों में व्यक्ति शायद फोन करने वाले की पहचान की पुष्टि कर ले, लेकिन संकट का माहौल पैदा होने पर वह जल्दबाजी कर सकता है। इसलिए भविष्य की डिजिटल सुरक्षा केवल पासवर्ड और पिन की सुरक्षा तक सीमित नहीं रह सकती। अब पहचान की पुष्टि और सूचना की सत्यता जांचना भी उतना ही जरूरी है।

यह समस्या केवल छोटे-मोटे आनलाइन अपराध तक सीमित नहीं है। केंद्रीय गृह मंत्रालय के अनुसार, 31 अक्टूबर 2025 तक नागरिक वित्तीय साइबर धोखाधड़ी रिपोर्टिंग एवं प्रबंधन प्रणाली के माध्यम से 23 लाख से अधिक शिकायतों में 7,130 करोड़ रुपये से अधिक की राशि बचाई जा चुकी थी। ये आंकड़े बताते हैं कि साइबर अपराध अब केवल तकनीकी विशेषज्ञों या इंटरनेट के अत्यधिक उपयोग करने वालों की समस्या नहीं हैं। यह आम परिवार के बैंक खाते और उसकी आर्थिक सुरक्षा से जुड़ा प्रश्न बन चुका है।

रकम वापसी की चुनौती : साइबर अपराध में एक बड़ी चुनौती यह है कि रकम डिजिटल माध्यम से तेजी से कई खातों में स्थानांतरित की जा सकती है। अपराधी अक्सर धन को अलग-अलग खातों और माध्यमों से घुमाने की कोशिश करते हैं। इसलिए शिकायत में देरी पीड़ित के लिए नुकसान बढ़ा सकती है। इस व्यवस्था को मजबूत करना जितना जरूरी है, उतना ही जरूरी है कि आम नागरिक को इसके बारे में पता हो। ठगी के बाद शर्म या डर के कारण चुप रहना अपराधी को फायदा पहुंचाता है। सारी जिम्मेदारी ग्राहक पर डाल देना उचित नहीं होगा। बैंक, भुगतान सेवा प्रदाता, दूरसंचार कंपनियां और डिजिटल मंच भी साइबर सुरक्षा की महत्वपूर्ण कड़ी हैं। संदिग्ध लेनदेन की पहचान के लिए उन्नत विश्लेषण प्रणाली, असामान्य गतिविधि पर तत्काल चेतावनी, संदिग्ध खातों पर कार्रवाई और शिकायतों के निपटारे को बेहतर व्यवस्था जरूरी है।

अंतत: साइबर अपराधियों का सबसे बड़ा हथियार कोई अत्याधुनिक कंप्यूटर नहीं, बल्कि हमारी जल्दबाजी है। वे हमारी जेब तक पहुंचने से पहले हमारे दिमाग तक पहुंचते हैं। डर पैदा करते हैं, विश्वास जीतते हैं और फिर हमसे वही करवाते हैं जो वे चाहते हैं। इसलिए डिजिटल भारत की अगली चुनौती केवल तेज भुगतान की नहीं है। चुनौती यह सुनिश्चित करने की है कि भुगतान तेज हो, लेकिन निर्णय सोच-समझकर हो। डिजिटल क्रांति तभी सफल मानी जाएगी जब देश का नागरिक यह जानता हो कि सुविधा का उपयोग कैसे करना है और ठग उसी सुविधा का दुरुपयोग करें तो उससे कैसे बचना है। क्योंकि आज बैंक खाते की सबसे कमजोर कड़ी हमेशा तकनीक नहीं होती- कई बार वह इंसान का एक गलत क्लिक, एक जल्दबाजी भरा विश्वास और एक क्षण का डर होता है।

विश्वसनीयता के संकट से जूझता इंटरनेट मीडिया



आलोक वर्मा
वरिष्ठ पत्रकार

दिल्ली में हुए कुछ हालिया प्रदर्शनों ने फर्जी प्रेस कार्ड और ग्राफिक वीडियो का खतरा दिखाया है। ऐसे में पंजाब एवं हरियाणा हाई कोर्ट का फैसला इंटरनेट मीडिया पर सरकारी कार्रवाई में पारदर्शिता की जरूरत भी याद दिलाता है। वस्तुत: इंटरनेट मीडिया पर आज कोई भी व्यक्ति किसी दूसरे की तस्वीर लगाकर खाता खोल सकता है और कुछ ही मिनटों में लाखों लोगों तक ऐसी सामग्री पहुंचा सकता है, जिसकी सच्चाई परखना आसान नहीं होता। लेकिन जब यही माध्यम खबरों, विरोध प्रदर्शनों और जनमत को प्रभावित करने लगे, तो एक सवाल जरूरी हो जाता है। इंटरनेट मीडिया पर कौन सच बोल रहा, कौन झूठ फैला रहा है और अगर किसी की आवाज बंद की जाए तो उसे इसका कारण कौन बताएगा?

दिल्ली के इन्हीं प्रदर्शनों से जुड़ा एक अन्य मामला तकनीक के दुरुपयोग की गंभीरता बताता है। इसी माह के पहले सप्ताह में इंटरनेट मीडिया पर एक वीडियो प्रसारित हुआ, जिसे दिल्ली पुलिस ने एआइ की मदद से तैयार किया गया फर्जी वीडियो बताया। वीडियो को सीसैटीवी फुटेज के रूप में पेश किया गया था। पुलिस ने इसे प्रसारित करने के आरोप में एक स्वतंत्र पत्रकार को गिरफ्तार किया। इसकी जांच उस महिला पत्रकार की शिकायत से अलग थी, जिसने पुलिस अधिकारी पर अनुचित व्यवहार का आरोप लगाया था। इसलिए दोनों मामलों को एक मानकर देखना सही नहीं होगा।

इस तरह की घटनाएं बताती हैं कि खतरा अब केवल झूठी खबर तक सीमित नहीं है। किसी वास्तविक व्यक्ति का चेहरा, नाम और पद लेकर ऐसा वीडियो बनाया जा सकता है जो देखने वाले को असली लगे। फर्जी प्रेस कार्ड और मनगढ़ंत वीडियो, दोनों में एक समानता है। किसी चीज को विश्वसनीय दिखाने के लिए उसके पीछे जरूरी प्रमाण न होते हुए भी विश्वसनीयता का आभास पैदा किया जाता है। इसका इस्तेमाल किसी को बदनाम करने, लोगों को भड़काने, धमकाने या ठगी करने में हो सकता है। साइबर अपराध में फर्जी पहचान पहले से इस्तेमाल होती रही है। अब कृत्रिम वीडियो और तस्वीरें इस धोखे को और विश्वसनीय बना सकती हैं। इंटरनेट मीडिया पर भ्रामक सामग्री की समस्या का समाधान सभी स्वतंत्र पत्रकारों पर संदेह करना नहीं है। पहचान की जांच होनी चाहिए, परंतु केवल प्रेस कार्ड न होने या छोटे समाचार संस्थान से जुड़े होने के कारण किसी पत्रकार को फर्जी नहीं मान लेना चाहिए। इसी तरह, किसी अकाउंट से गलत सामग्री प्रसारित होने पर कार्रवाई की जा सकती है, लेकिन कानूनी प्रक्रिया का पालन भी उतना ही जरूरी है।

आम नागरिक भी अपनी भूमिका निभा सकता है। किसी वायरल वीडियो को सच मानकर आगे भेजने से पहले उसकी पुष्टि करे। किसी व्यक्ति के पत्रकार होने के दावे पर भरोसा करने से पहले उसके संस्थान और प्रकाशित काम की जांच करे। इंटरनेट मीडिया मंचों, सरकार और उपयोगकर्ताओं, तीनों को अपनी भूमिका निभानी होगी। लेकिन इस पूरी व्यवस्था की बुनियाद जवाबदेही होनी चाहिए। पत्रकारिता के नाम पर लोगों की गुमराह करने का अधिकार किसी को नहीं है और किसी नागरिक की सामग्री हटाने वाली व्यवस्था को भी कानून से ऊपर नहीं माना जा सकता। लोकतंत्र में सवाल पूछने वालों की पहचान की जांच हो सकती है, उनके दावों की पड़ताल हो सकती है और गैरकानूनी काम पर कार्रवाई भी हो सकती है। परंतु किसी की आवाज रोकने का फैसला हो तो उसका कारण भी सामने आना चाहिए। इंटरनेट मीडिया पर भरोसा बचाने के लिए सच बोलने वालों की पहचान जितना जरूरी है, उतना ही जरूरी है कि गलत कार्रवाई के खिलाफ आवाज उठाने का रास्ता खुला रहे।

खरी-खरी

फार्म भरता आदमी

ब्रजेश कानूनगो

भारत के आम आदमी की सबसे बड़ी व्यस्तता क्या है? इंटरनेट मीडिया, रोजगार की जद्दोजहद, परिवार की देखभाल, महंगाई से निपटना, बच्चों की पढ़ाई? नहीं। फार्म भरना। स्कूल में प्रवेश के लिए फार्म। परीक्षा के लिए फार्म। छात्रवृत्ति के लिए फार्म। नौकरी के लिए फार्म। नौकरी लगने के बाद भी फार्म। छुट्टी के लिए फार्म। पेंशन के लिए फार्म। नाम जुड़वाना हो- फार्म। फार्म नाम कटवाना हो- फार्म। नाम में गलती हो- संशोधन का फार्म। आम आदमी का जीवन अब जीवन कम और आवेदन-पत्र अधिक है।

काम करवाना हो तो फार्म। शिकायत करनी हो तो फार्म। शिकायत पर कार्रवाई न हो तो फिर फार्म। कार्रवाई क्यों नहीं हुई, यह पूछने के लिए भी फार्म। फार्म भरते-भरते आदमी को अपने बारे में इतना कुछ बताना पड़ता है कि कभी-कभी लगता है, सरकार नागरिक से अधिक परिचित हो गई है, नागरिक खुद से नहीं। नाम, पता, उम्र, आय, व्यवसाय, परिवार, मोबाइल, पहचान। फिर इनके प्रमाण। आधार का आधार बताइए। पहचान का प्रमाण, पते का प्रमाण, आय का प्रमाण।

डिजिटल युग आया तो लगा, अब फार्म से मुक्ति मिलेगी। मुक्ति नहीं मिली, फार्म स्क्रीन पर आ गया। अब लाइन में खड़े होने के बजाय वेबसाइट के खुलने की प्रतीक्षा है। ओटीपी की प्रतीक्षा है। सर्वर की कृपा की प्रतीक्षा है। फोटो के सही आकार की प्रतीक्षा है। दस्तावेज अपलोड होने की प्रतीक्षा है। पहले बाबू फाइल रोकता था, लेकिन अब फाइल आगे बढ़ने से सर्वर रोकता है।

फर्मों की दुनिया में हर सुविधा के साथ पात्रता जुड़ी है और हर पात्रता के साथ एक नया फार्म। सुविधा चाहिए तो आवेदन कीजिए। पात्रता के लिए प्रमाण दीजिए। प्रमाण के लिए दूसरा प्रमाण दीजिए। फिर प्रमाणित कीजिए कि आपने प्रमाण सही दिया है। फार्म भरते-भरते आदमी इतना व्यस्त हो जाता है कि देश और समाज के बड़े प्रश्न उसकी नजर से ओझल हो जाते हैं। उसे अगला फार्म दिखाई देता है, अगला सवाल नहीं। शायद यही आधुनिक प्रशासन का सबसे बड़ा कौशल है- नागरिक को सुविधा देने से पहले उसे सुविधा के फार्म भरने में व्यस्त कर देना।

पोस्ट

पंछियों के पास न कोई जीपीएस होता है और न ही कोई मैप, लेकिन वे साइबेरिया से दिल्ली तक पहुंच जाते हैं। जबकि जिनके पास सारे नक्शे होते हैं, वे अक्सर गलत जगह लैंड कर जाते हैं।

रजत शर्मा@RajatSharmaLive

विधान परिषद चुनाव परिणाम के तुरंत बाद अमित शाह लखनऊ पहुंच गए। एक बड़ी लड़ाई जीतने की तैयारी के सिलसिले में।

प्रभु चावला@PrabhuChawla

क्या राहुल गांधी को अपनी पार्टी के छात्र संगठन में एक भी ऐसा नेता नहीं दिख रहा, जिसे आगे किया जा सके। जबकि वामपंथी छात्र संगठनों के नेताओं को बढ़ावा दिया जा रहा है। पार्टी को अपने समर्पित कार्यकर्ताओं के साथ भी न्याय करना चाहिए।

विशेष@7_vishesh



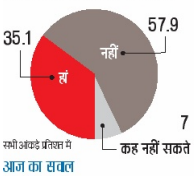
राहुल गांधी के साथ एक बुनियादी समस्या है कि उन्हें अभी तक यह अंदाजा नहीं हो पाया है कि ये क्या है। कभी वे थ्यूरोक्रेट बन जाते हैं, कभी शहंशाह तो कभी न्यायाधीश और लगते हैं फैसला सुनाने। अब कह रहे हैं कि 2024 का चुनाव अंतिम है। यह लोकतंत्र और जनादेश सबका अपमान है।

अनुरंजन झा@anuranjanj

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या मोदी सरकार की जनकल्याणकारी नीतियां गरीबी घटाने में सहायक बनी हैं?



सभी आंकड़े प्रतिशत में

आज का सवाल

क्या अंतिम दो मैचों में वैभव सूर्यवंशी को खिलाया जाना चाहिए था?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है

जनपथ

ठंड्क दिल में दे पड़ गई करि चौपट व्यापार,
राजा बाबू ख्वा गए लौहारी रविवार।
लौहारी रविवार हुआ ना धंधा-पानी,
कमा सकें ना लाभ हो गई उल्टे हानी।
तीन माह से रोज हो रही दिल्ली कंपक,
करि सबका नुकसान इन्हें पड़ती है ठंड्क!

-ओम प्रकाश तिवारी

उत्तर प्रदेश डायरी

शाह का यूसीसी पर दांव



अजय जायसवाल
उप राजनीतिक संपादक, उत्तर प्रदेश

उत्तर प्रदेश में वर्ष 2027 के विधानसभा चुनाव से पहले भाजपा और सपा के बीच मुकाबला अब सिर्फ सरकार के कामकाज और विपक्ष के आरोपों तक सीमित नहीं दिख रहा है। दोनों दल अपने-अपने समर्थक वर्ग में चुनावी भरोसा मजबूत करने और प्रतिद्वंद्वी के मनोबल को प्रभावित करने में जुट गए हैं। भाजपा की प्रदेश कार्यसमिति में केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने तीसरी बार सत्ता में वापसी पर समान नागरिक संहिता (यूसीसी) लागू करने का एलान कर चुनावी बिगुल को वैचारिक मुद्दे की ओर मोड़ने का संकेत दिया। साथ ही, उन्होंने कार्यकर्ताओं को नाराजगी दूर कर उन्हें एकजुट होकर चुनावी मोर्चे पर सक्रिय होने को भी कहा। वहीं, विधान परिषद चुनाव में प्रधानमंत्री के संसदीय क्षेत्र वाराणसी की दो सीटों समेत पांच सीटों पर सपा की जीत को विधानसभा चुनाव के लिए बड़ा संकेत बताने वाले विपक्ष के दावों को भी खारिज करने की कोशिश की। हालांकि, सपा इन नतीजों को भाजपा के मुकाबले अपनी बढ़ती राजनीतिक ताकत के प्रमाण के रूप में पेश कर रही है।

सपा लगातार यह पैरिटेब मजबूत करने में जुटी है कि भाजपा के मजबूत संगठन और सत्ता के बावजूद मुकाबले में विपक्ष की जगह बनी हुई है। इन दोनों घटनाक्रमों में 2027 की लड़ाई के दो अलग-अलग रास्ते दिखाई दे रहे हैं, सत्ताधारी भाजपा जहां अपने एजेंडे और संगठन के जरिये बढ़त कायम रखना चाहती है, वहीं सपा चुनावी सफलता के उदाहरणों से विपक्ष के पक्ष में माहौल बना रही है। जो भी अपने रास्ते पर सफलता से आगे बढ़ेगा, वही चुनाव में सत्ता तक पहुंच पाएगा।

अमित शाह ने सरकार बनने पर प्रदेश में यूसीसी लागू करने की घोषणा के साथ विधानसभा चुनाव के लिए अपने एजेंडे का एक प्रमुख हिस्सा सार्वजनिक किया और उसे राज्य की राजनीति से जोड़ा। इस रणनीति के कई मायने दिख रहे हैं।



बीते सप्ताह लखनऊ में प्रदेश भाजपा कार्यसमिति को संबोधित करते गृहमंत्री अमित शाह। फाइल

पहला, अपने परंपरागत समर्थकों को यह संदेश देना कि पार्टी अपने वैचारिक मुद्दों पर पीछे नहीं हट रही। दूसरा, विपक्ष को ऐसे मुद्दे पर प्रतिक्रिया देने के लिए बाध्य करना। तीसरा, चुनावी बहस को केवल बेरोजगारी, महंगाई, स्थानीय असंतोष और सरकार की जवाबदेही तक सीमित नहीं रहने देना। अब इसके स्वरूप, विभिन्न समुदायों की आशंकाओं और कानूनी पहलुओं पर भी बहस होगी ही। विपक्ष के सामने भी चुनौती होगी कि वह केवल विरोध की राजनीति करने की जगह अपना स्पष्ट पक्ष रखे।

नई प्रदेश कार्यसमिति के जरिये पार्टी संगठन को चुनावी मोड में लाने की कोशिश भी इसी रणनीति का हिस्सा है। भाजपा की ओर से कार्यकर्ताओं से विपक्ष के आरोपों का तथ्यों के साथ जवाब देने को कहा गया। कोशिश यही कि योगी आदित्यनाथ सरकार के विकास और कानून-व्यवस्था के कामकाज को उपलब्धि के रूप में स्थापित किया जाए, दूसरी तरफ विपक्ष के पीडीए और जातीय राजनीति के पैरिटेब का मुकाबला राष्ट्रवाद के मुद्दे से किया जाए।

कार्यसमिति की बैठक से पहले विधान परिषद चुनाव के आए नतीजों ने सपा को उत्साहित होने का पूरा अवसर दिया है। भाजपा ने जहां अपनी पुरानी छह सीटों की जीत कर आंकड़ा बरकरार रखा, वहीं सपा ने दो सीटें अधिक जीत कर अपना आंकड़ा तीन से पांच कर लिया। इसमें भी प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के संसदीय क्षेत्र की दो सीटों, आगरा-अलीगढ़ शिक्षक सीट पर जबर्दस्त विवाद के बाद जीत और दूसरी तरफ गोरखपुर में भाजपा से नजदीकी हार ने विधानसभा चुनाव से पहले यह संकेत दिया कि संगठनात्मक प्रभाव के बावजूद कई क्षेत्रों में विपक्ष मजबूत चुनौती दे सकता है। इस चुनाव में शिक्षक और स्नातक, यानी पढ़ा-लिखा वर्ग मतदान करता है, ऐसे में सपा इसे भाजपा के खिलाफ राजनीतिक माहौल बनने के तौर पर पेश कर रही है। हालांकि, पांच सीटों की जीत को विधानसभा चुनाव का पूर्वानुमान नहीं माना जा सकता, लेकिन इसका लाभ मनोबल और राजनीतिक नैरेटिव में तो जरूर दिखाई देगा।

फिलहाल, भाजपा के सामने चुनौती अपने वैचारिक एजेंडे को चुनावी उपलब्धियों और जनसमर्थन के साथ जोड़ने की है। यूसीसी का मुद्दा समर्थकों को एकजुट करने में मदद कर सकता है, लेकिन चुनाव में केवल वैचारिक मुद्दे ही निर्णायक नहीं होंगे। सरकार के कामकाज, रोजगार, महंगाई, किसान, कानून-व्यवस्था और स्थानीय विकास जैसे सवालों पर मतदाताओं का रुख भी अहम होगा। भाजपा को उन कार्यकर्ताओं को भी सक्रिय रखना होगा, जो संगठन में भूमिका और सम्मान को लेकर असंतुष्ट हैं। वहीं, सपा के सामने चुनौती कुछ अलग है। उसे पांच सीटों पर जीत से पैदा हुए उत्साह को विधानसभा के व्यापक चुनावी आधार में बदलना होगा। पिछड़े, दलित, अल्पसंख्यक और अन्य सामाजिक समूहों के बीच भी व्यापक समर्थन जुटाना होगा। इसके लिए केवल पीडीए का नारा पर्याप्त नहीं होगा। बूथ स्तर पर संगठन, स्थानीय नेतृत्व और उम्मीदवारों के चयन में सामाजिक संतुलन भी महत्वपूर्ण है। ऐसे में दोनों मुख्य प्रतिद्वंद्वियों के बीच ये प्रतिस्पर्धा और दिलचस्प होती दिख रही है।

छत्तीसगढ़ डायरी

राज्योत्सव में विपक्ष की अनुपस्थिति की चिंता



सतीश चंद्र श्रीवास्तव
संपादकीय प्रभारी, रायपुर

प्रदेश अपनी स्थापना के 27वें वर्ष में प्रवेश का उत्सव मना रहा है। राजधानी का आकाश रविवार की सुबह वायुसेना के शौर्य और पराक्रम का साक्षी बना। मुख्यमंत्री विष्णु देव साय ने मंत्रिमंडल और संगठन के वरिष्ठ सदस्यों के साथ छत्तीसगढ़ महतारी की आरती उतारकर राज्योत्सव की शुरुआत की। महिला पायलटों के अदभुत हवाई करतबों में साहस और अनुशासन का शानदार प्रदर्शन नया रायपुर पहुंचे लोगों के लिए चमत्कृत करने वाला रहा।

यद्यपि मुख्यमंत्री का आयोजन में विपक्ष के नेताओं की अनुपस्थिति पर संदेश अवश्य राजनीतिक चर्चा का विषय बन गया है। साय का कहना है कि यह विपक्ष के नेताओं का दुर्भाग्य है कि वे ऐतिहासिक अवसर पर अपने प्रदेश में नहीं रह सके। उनके शीर्ष नेतृत्व ने एसआइआर, ईवीएम और चुनाव आयोग के विरुद्ध प्रदर्शन के लिए दिल्ली बुला लिया। यह दर्शाता है कि कांग्रेस को देश की संवैधानिक संस्थाओं पर भी विश्वास नहीं है। उधर दिल्ली की भीड़ से उत्साहित कांग्रेस के नेता उम्मीद कर रहे हैं कि 'वोट बचाओ देश बचाओ' महामार्च राजनीति को नई दिशा देगा।

राजनीतिक बयानबाजियां आगे बढ़ेंगी। फिलहाल प्रदेशवासी राज्योत्सव का आनंद ले रहे हैं। केंद्रीय युवा और खेल मंत्री मनसुख मांडविया को उपस्थिति में शुरू हो रहा आयोजन मंगलवार को केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह की उपस्थिति में विभिन्न क्षेत्रों में उत्कृष्ट योगदान देने वालों के सम्मान समारोह के साथ संपन्न होगा। इस दौरान प्रदेश की विकास यात्रा के साथ-साथ योजनाओं और उपलब्धियों की प्रदर्शनियों में पूरे प्रदेश की भागीदारी पर जोर दिया गया है।



छत्तीसगढ़ महतारी के चित्र के समक्ष आरती करते विष्णु देव साय (मध्य में) एवं सहयोगी। डीपीआर

धान पर उलझन : प्रदेश के किसानों के लिए धान अगर आर्थिक सशक्तीकरण का मुद्दा है तो नेताओं के लिए वोट बैंक व राजनीति तथा कारोबारियों और बिचौलियों के लिए मुनाफाखोरी का विषय बन चुका है। ऐसे में खेती पर मौसम के प्रभाव के आकलन की प्रक्रिया के बीच राज्योत्सव का आयोजन राहत भी दे रहा है। 3,100 रुपये क्विंटल की दर से प्रति एकड़ 21 क्विंटल धान की खरीदी की पुरानी व्यवस्था पर मतभेद और बदलाव के संकेत हैं। मंत्रिमंडल ने 15 नवंबर से धान खरीदी शुरू करने का निर्णय ले लिया है, परंतु अभी अंतिम रूप से यह तय किया जाना है कि धान के किसानों को प्रति एकड़ एकमुश्त लगभग 14 हजार रुपये दिए जाएं या प्रति क्विंटल 3100 रुपये के भाव से खरीदी की जाए। कृषि मंत्री राम विचार नेताम के अनुसार इस विषय में चर्चा जारी है।

प्रदेश सरकार के तीसरे वर्ष में धान का विषय काफी उलझाऊ हो गया है। सत्ता में वापसी के लिए वर्ष 2023-24 में भाजपा ने 3,100 रुपये क्विंटल के भाव से प्रति एकड़ 21 क्विंटल धान खरीदी की घोषणा की थी। उसके पहले कांग्रेस के शासनकाल में वर्ष 2022-23 में केंद्र द्वारा तय न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) 2,040 रुपये के साथ प्रति एकड़ नौ हजार रुपये राजीव गांधी किसान न्याय योजना के तहत आदान सहायता की व्यवस्था थी और 15 क्विंटल धान खरीदी की जा रही थी। ऐसे में किसानों को प्रति क्विंटल छह सौ रुपये एमएसपी के अलावा मिल रहे थे।

भाजपा ने तब लगभग 450 रुपये अधिक पर खरीदी का भरोसा दिया था। अब विपक्ष तीन वर्ष में एमएसपी 2,441 रुपये पहुंचने के बाद भी 3,100 रुपये की दर से खरीदी की मुद्दा बना रहा है। दूसरी तरफ चुनौती यह भी है कि प्रदेश में लगभग 110 लाख क्विंटल धान का उत्पादन होता है, जबकि मुनाफाखोरों और बिचौलियों के चक्कर में 140 से 150 लाख क्विंटल तक धान मंडियों में पहुंच रहा है। इसका बड़ा कारण उत्तर प्रदेश, ओडिशा, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, तेलंगाना और आंध्र प्रदेश से अवैध रूप से धान परिवहन है। बस्तर और सरगुजा में धान का प्रति एकड़ वास्तविक उत्पादन 10 से 12 क्विंटल है, परंतु 21 क्विंटल धान पहुंच रहा है। इस दोहरी मार से बचने के लिए सरकार प्रदेश के 27.50 लाख किसानों को लगभग 14 हजार रुपये प्रति एकड़ का भुगतान कर भी देती है तो फायदे में रहेगी।

कांग्रेस ने एक नवंबर से ही धान खरीदी शुरू करने की मांग की थी। ऐसे में 15 नवंबर से खरीदी का प्रदेश सरकार की घोषणा को विपक्ष मुद्दा तो बना ही रहा है, कीमत भी उसके आरोपों में शामिल हो चुकी है। अगर सरकार की तरफ से किसानों को मंडी में 21 क्विंटल की जगह वास्तविक उत्पादन बेचने पर भी 14 हजार रुपये प्रति एकड़ अंतर की राशि का भुगतान किया जाए तो गणित बताता है कि तब भी सरकारी खजाने को 10 हजार करोड़ तक की राहत ही मिलेगी। राजनीति भी मजबूत रहेगी। पड़ोसी राज्यों से धान लाने वाले बिचौलिये हतोत्साहित होंगे, मुनाफाखोरी नियंत्रित होगी।

संपादकीय जागरण

(8) सोमवार, 2 नवंबर 2026 : कार्तिक कृष्ण - 8 वि. 2083

जीवन संघर्ष का दूसरा नाम है

वोट चोरी का बहाना

कांग्रेस ने सहयोगी दलों के सहयोग से दिल्ली के रामलीला मैदान में तथाकथित वोट चोरी के बहाने भीड़ तो जुटा ली, लेकिन वह भीड़ दस लाख के दावे के मुकाबले कहीं अधिक कम रही। इस रैली में राहुल गांधी समेत अन्य विपक्षी नेताओं ने मतदाता सूचियों के विशेष गहन पुनरीक्षण अर्थात एसआइआर को लेकर वही सब कहा, जो पिछले लंबे समय तक कहते चले आ रहे हैं। इसमें संदेह है कि यह रैली विपक्ष के इस नैरेटिव को विश्वसनीयता प्रदान कर सकेगी कि एसआइआर के जरिये विपक्षी दलों के समर्थकों के नाम जानबूझकर वोटर लिस्ट से हटाए जा रहे हैं। आश्चर्य नहीं कि वोट चोरी का शोर मचाकर जो माहौल बनाया जा रहा है, उसका वही हश्र हो, जो इस दुष्प्रचार का हुआ था कि ईवीएम के कारण विपक्ष को हार का सामना करना पड़ रहा है। कांग्रेस को वोट चोरी का अपना अभियान तेज करने का जरिया कुछ दिन पहले की उस खबर से मिला, जिससे यह संदेश देने की कोशिश की गई थी कि एसआइआर के मामले में मुख्य चुनाव आयुक्त ज्ञानेश कुमार दोनों चुनाव आयुक्तों की आपत्तियों पर ध्यान नहीं दे रहे हैं। हालांकि चुनाव आयोग ने सुप्रीम कोर्ट में शपथपत्र देकर स्पष्ट रुख से कहा कि एसआइआर पर सभी फैसले तीनों चुनाव आयुक्तों की सहमति से हुए। इसके बाद भी विपक्षी दल अपने इस हठ पर कायम हैं कि वोट चोरी हो रही है। वे इस तथ्य पर भी ध्यान देने के लिए तैयार नहीं कि जिन 13 करोड़ लोगों के नाम वोटर लिस्ट हटाए गए हैं, वे उनके हैं जो अन्यत्र जा बसे हैं या जिनकी मृत्यु हो गई है अथवा जिनके नाम दो-तीन जगह दर्ज थे। सच यह भी है कि 13 करोड़ लोगों का नाम हटाने का फैसला अंतिम नहीं है और वैध मतदाता अपना नाम वोटर लिस्ट में अभी भी शामिल करा सकते हैं। विपक्ष इस सच से भी मुंह मोड़ रहा है कि एसआइआर की सुनवाई कर रहे सुप्रीम कोर्ट ने इस प्रक्रिया में सुधार के कई सुझाव देने के साथ लोगों को अपना नाम वोटर लिस्ट में शामिल कराने के लिए अतिरिक्त सुविधा एवं समय प्रदान करने के भी निर्देश दिए हैं। इस सबके बावजूद विपक्षी दल वोट चोरी का राग अलापने में लगे हुए हैं। विडंबना यह है कि सुप्रीम कोर्ट में एसआइआर के खिलाफ याचिका दायर करने वाले विपक्षी नेता कथित वोट चोरी के खिलाफ कोई प्रमाण कोर्ट के समक्ष पेश करने के बजाय दिखावटी संसद बुलाकर मुख्य चुनाव आयुक्त के खिलाफ जन महाभियोग पारित करने जैसे स्वांग कर अपना उपहास ही उड़ा रहे हैं। एक विडंबना यह भी है कि वोट चोरी का आरोप लगा रहे कई विपक्षी दल और खासकर कांग्रेस बूथ लेवल अफसरों की ओर से होने वाली त्रुटियों को रोकने के लिए अपने कार्यकर्ताओं को बूथ लेवल एजेंट के तौर पर नियुक्त करने को लेकर उदासीन है।

रोजगार की नई राह

बदलते दौर में रोजगार के अवसर केवल पारंपरिक शिक्षा और डिग्रियों तक सीमित नहीं रह गए हैं। डिजिटल तकनीक, कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआइ) और संवाद कौशल अब रोजगार की अनिवार्य जरूरत बनते जा रहे हैं। ऐसे में बिहार सरकार की कुशल युवा कार्यक्रम के तहत प्रस्तावित डिजिटल मित्र योजना एक सराहनीय पहल साबित हो सकती है। राज्य के 871 कौशल प्रशिक्षण केंद्रों के माध्यम से युवाओं को डिजिटल दक्षता, अंग्रेजी में संवाद और साक्षात्कार की तैयारी कराना रोजगारपरक शिक्षा की दिशा में सकारात्मक कदम है। हालांकि, इस योजना की सफलता केवल प्रशिक्षण केंद्रों की संख्या बढ़ाने से सुनिश्चित नहीं होगी। इसके लिए प्रशिक्षण की गुणवत्ता, प्रशिक्षकों की दक्षता और बाजार की मांग के अनुरूप पाठ्यक्रम तैयार करना जरूरी है। युवाओं को एआइ के साथ साइबर सुरक्षा, डेटा एनालिटिक्स, डिजिटल मार्केटिंग, कोडिंग और ई-कामर्स का व्यावहारिक ज्ञान भी दिया जाना चाहिए। प्रशिक्षण के दौरान माक इंटरव्यू, व्यक्तित्व विकास और समूह चर्चा को अनिवार्य बनाया जाए। इसके अलावा निजी कंपनियों से साझेदारी कर इंटर्नशिप और प्लेसमेंट की व्यवस्था होनी चाहिए। डिजिटल मित्र केंद्रों को केवल प्रशिक्षण स्थल नहीं, बल्कि रोजगार और उद्यमिता के मार्गदर्शक केंद्र के रूप में विकसित करना होगा।

प्रशिक्षण के बाद युवाओं को रोजगार मिलने की नियमित निगरानी भी जरूरी है।

कह के रहेंगे

माधव जोशी



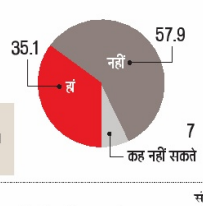
जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या मोदी सरकार की जनकल्याणकारी नीतियां गरीबी घटाने में वाकई सहायक साबित हुई हैं?

आज का सवाल

क्या अंतिम दो मैचों में वैभव सूर्यवंशी को खिलाया जाना चाहिए था?



परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। (सभी आंकड़े प्रतिशत में)

ट्रंप की परीक्षा लेने वाले चुनाव



शिवकांत शर्मा

मध्यावधि चुनावों में अगर अमेरिकी संसद में विपक्षी दलों का बहुमत हो गया तो ट्रंप के लिए शेष कार्यकाल में सरकार चलाना मुश्किल होगा



अवधेश राजपूत

अमेरिका के इतिहास में शायद ही कोई ऐसा मध्यावधि चुनाव हुआ हो, जिस पर दुनिया ने इतना ध्यान दिया हो। इसकी वजह कोई और नहीं, बल्कि अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप हैं। उनकी पलटू और अटपटी नीतियों ने उनके ही देश द्वारा स्थापित विश्व व्यवस्था में ऐसी उथल-पुथल मचाई है कि हर कोई उनसे निजात पाने की राह देख रहा है। हालांकि इस चुनाव में उनका भाग्य पूरी तरह दांव पर नहीं है। उनका आधा कार्यकाल अभी बाकी है, लेकिन अमेरिकी संसद यानी कांग्रेस की समूची प्रतिनिधि सभा और सीनेट की एक तिहाई से अधिक सीटों का फैसला इन्हीं चुनावों में होना है। यह चुनाव प्रतिनिधि सभा के चुनाव क्षेत्रों के परिसीमन के बाद हो रहा है, जिससे ट्रंप की रिपब्लिकन पार्टी को लगभग नौ सीटों पर लाभ होने की आशा है। फिर भी जनमत सर्वेक्षणों के अनुसार उनकी पार्टी का प्रतिनिधि सभा में तो हारना तय है ही, सीनेट भी हाथ से जा सकती है।

राष्ट्रपतियों की पार्टी ने पिछले 20 मध्यावधि चुनावों में से 18 में प्रतिनिधि सभा की सीटें गंवाई हैं। इस समय ट्रंप की रिपब्लिकन पार्टी के पास प्रतिनिधि सभा में मात्र दो सीटों का बहुमत है और सीनेट में तीन सीटों का। इसलिए उन्होंने पार्टी उम्मीदवारों के लिए ऐसे प्रचार किया है मानो वे स्वयं चुनाव लड़ रहे हों। मतदाताओं से अपील की है कि वे उन्हें ही उम्मीदवार मानकर वोट दें। यही नहीं, उन्होंने भारत के चुनावों की तरह वोटरों को लुभाने के लिए पांच हजार डालर की रेवड़ी बांटने का वादा भी किया है। फिर भी एक ताजा सर्वेक्षण के अनुसार उनके काम से संतुष्टों का दायरा घटकर 31 प्रतिशत पर आ गया है और इतिहास बताता है कि यह आंकड़ा 50 से नीचे गिर जाने पर राष्ट्रपति की पार्टी को प्रतिनिधि सभा में औसतन 37 सीटों का नुकसान होता है। 2018 के मध्यावधि चुनाव में ट्रंप से संतुष्ट रहने वालों का प्रतिशत 41 पर आ जाने से रिपब्लिकन पार्टी को 40 सीटों का नुकसान हुआ था। बिल्लेघेर्कों का अनुमान है कि रिपब्लिकन पार्टी को प्रतिनिधि सभा की कम से कम 15 सीटों का नुकसान तो होना तय है और सीनेट की भी तीन-चार सीटें जा सकती हैं।

कांग्रेस के दोनों सदनों में विपक्ष का बहुमत होने पर राष्ट्रपति के लिए सरकार चलाना कठिन हो जाता है। प्रतिनिधि सभा की सभी संसदीय और स्थाई समितियां विपक्ष के हाथों में चली जाती हैं जो हर विभाग के बजट, खर्च और कर्ज की सीमा निर्धारित करती हैं और विदेशी मामलों की नीतियां बनाती हैं। ये समितियां ट्रंप और उनके मंत्रियों पर जांच बिठा सकती हैं, उन्हें तलब कर सकती हैं और महाभियोग भी चला सकती हैं। राष्ट्रपति को महाभियोग से हटाने के लिए तो सीनेट में दो तिहाई बहुमत चाहिए। इसीलिए एंड्रयू जॉनसन, बिल क्लिंटन और ट्रंप पर महाभियोग चलाने के बावजूद आज तक किसी राष्ट्रपति को हटाया नहीं जा सका है। इस बीच यह भी सुनने में आया है कि डेमोक्रेटिक पार्टी ने युद्ध मंत्री पीट हेगसेथ पर महाभियोग की तैयारी कर रखी है। ट्रंप पर महाभियोग तो शायद ही चलाया जाए, लेकिन उनके तथा उनके परिवार के सदस्यों पर पद का अनुचित लाभ उठाने की और भ्रष्टाचार की जांच बिठाई जा सकती है। मिसाल के तौर पर ट्रंप परिवार की क्रिप्टो कंपनी ने पाकिस्तानी सरकार के साथ उस समय सौदा किया था, जब अमेरिका की क्रिप्टो नीति बन रही थी।

कांग्रेस में विपक्ष का बोलबाला होने पर अमेरिकी राष्ट्रपति अपना पूरा ध्यान विदेश नीति पर लगाते आए हैं। लगता है ट्रंप भी इसकी तैयारी कर चुके हैं। ईरान को समझौते पर मजबूर करने के लिए उन्होंने अपनी सेना पहले ही मैदान में उतार रखी है, ताकि डेमोक्रेट कांग्रेस में चलती लड़ाई को रुकवाने या उसके लिए पैसा रोकने का राजनीतिक जोखिम न उठा सके। इस महीने के उत्तरार्ध में वे एपैक की शिखर बैठक में भाग लेने चीनी शहर शेनजेन जा रहे हैं, जहां रूसी राष्ट्रपति पुतिन के आग्रह पर शी चिनफिंग और पुतिन के साथ बैठकर नई विश्व व्यवस्था पर विचार करेंगे। इसे नई दिल्ली में हुई मोदी-शी-पुतिन शिखर बैठक के जवाब के रूप में भी देखा जा सकता है, मगर लगता है असली उद्देश्य यूक्रेन को पुतिन की शर्तों पर युद्धविराम समझौते के लिए मजबूर करना है। यूरोप में इसे तानाशाही तिकड़ी के उदय के रूप में देखा जा रहा है, जो पूरी दुनिया को अपने-अपने प्रभाव क्षेत्रों में बांट कर मनमानी करना चाहती है।

चीन को जी-2 का सदस्य बताने और शी चिनफिंग के साथ मुलाकातों का सिलसिला बढ़ाने से लगता है कि ट्रंप की दिलचस्पी अब हिंद-प्रशांत क्षेत्र को चीनी विस्तारवाद से मुक्त रखने से अधिक चीन के साथ लंबित व्यापार सौदा सिरे चढ़ाने में हो गई है। पाकिस्तान के साथ वे अपने और अपने परिवार के निजी आर्थिक हितों के कारण मधुर संबंध रखना चाहते हैं। भारत के लिए यह अच्छी बात नहीं है। उसे अपने सामरिक और आर्थिक रिश्तों के सम्भीकरणों में निरंतर संतुलन बिठाते रहना होगा। भारत में अमेरिका पर भरोसे की कमी का पुराना इतिहास है। उसे दूर करने के लिए हुए गत 25 वर्षों के प्रयासों पर ट्रंप की विशुद्ध लेन-देन परक और पलटू नीतियों ने पानी फेर दिया है। यूरोप और एशिया में अमेरिका के पारंपरिक मित्र देश भारत से भी अधिक त्रस्तथ हैं। प्यू शोध केंद्र के द्वारा 35 देशों में किए एक सर्वेक्षण के अनुसार यूरोप और हिंदचीन के अधिकांश देश और इंडोनेशिया अब अमेरिका से अधिक चीन पर भरोसा करने लगे हैं।

ट्रंप प्रशासन की कोशिश रहेगी कि जनवरी में नई कांग्रेस के शपथ लेने से पहले भारत के साथ व्यापार सौदा कर ले, लेकिन भारत को अपने ऊर्जा हितों और कमजोर आर्थिक क्षेत्रों के हितों की रक्षा के लिए अडिग रहना होगा। नई कांग्रेस ट्रंप की टैरिफ नीतियों को भी नहीं रोक पाएगी, क्योंकि वे अब अनुचित व्यापार नीतियों को आधार बनाकर धारा 232 और 301 का प्रयोग कर रहे हैं, जिन्हें केवल अदालतों में ही चुनौती दी जा सकती है। एप्पल्बी बीजा की शर्तों में ढील या नौकरी आधारित ग्रीन कार्ड सुविधा बहाल होने के आसार भी कम हैं, क्योंकि ट्रंप ने वोटों के लिए भारतीय प्रतिभाओं को लेकर संदेह का ऐसा बीज बो दिया है, जिसके खिलाफ जाने का राजनीतिक जोखिम शायद ही कोई लेना चाहे।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)
response@jagran.com

लोकतंत्र के लिए खतरा है भीड़तंत्र



रमाकांत शर्मा

जब असहमति सार्वजनिक जीवन को बाधित करने का कारण बनने लगती है, तब लोकतंत्र भीड़तंत्र में बदलने लगता है



लोकतंत्र में हिंसा की नहीं है कोई जगह ● शाइल

आधुनिक राजनीतिक दर्शन में लोकतंत्र को केवल बहुमत का शासन नहीं, बल्कि संवाद, विश्वास और असहमति के सह-अस्तित्व की सतत प्रक्रिया माना जाता है। परिपक्व लोकतांत्रिक व्यवस्थाएं अपनी वैधता और स्थायित्व तब प्राप्त करती हैं, जब नागरिकों को व्यवस्था की कमियों पर सवाल उठाने और शांतिपूर्ण प्रतिरोध का पर्याप्त अवसर मिलता है। असहमति को लोकतंत्र का सुरक्षा-वाल्व माना जाता है। इसके वैधानिक रास्ते बंद होने पर राजनीतिक व्यवस्था में अव्यवस्था की आशंका बढ़ जाती है। इक्कीसवीं सदी के तीसरे दशक में भारत सहित दुनिया के कई हिस्सों में एक स्पष्ट बदलाव दिखाई दे रहा है। शांतिपूर्ण, सत्याग्रह-प्रेरित और कानून के दायरे में होने वाले जन आंदोलनों की जगह धीरे-धीरे आक्रामक, अनियंत्रित और व्यवस्था-विरोधी भीड़तंत्र लेता जा रहा है। जब असहमति सार्वजनिक जीवन को बाधित करने, राष्ट्रीय संपत्ति को नुकसान पहुंचाने और प्रशासनिक तंत्र को बंधक बनाने का रूप लेती है, तब लोकतंत्र भीड़तंत्र में बदलने लगता है। कानूनों में संशोधन, विकास योजनाओं और संवैधानिक संस्थाओं के विरोध में हुए प्रदर्शनों ने वैध जनविरोध और अराजक भीड़तंत्र के बीच अंतर निर्धारित करने का बुनियादी प्रश्न खड़ा कर दिया है।

दक्षिण एशिया से पश्चिमी यूरोप तक की घटनाएं दर्शाती हैं कि जब जनांदोलन संवैधानिक मर्यादाओं का उल्लंघन करते हैं, तो लोकतंत्र भीड़तंत्र में बदलने लगता है। वर्ष 2022 में श्रीलंका के 'अरगलाया' आंदोलन और नेपाल में लगातार हुई नाकेबंदियों ने संस्थागत स्थिरता को कमजोर किया। वहीं अगस्त 2024 में बांग्लादेश का आरक्षण-विरोधी आंदोलन हिंसक सत्ता-परिवर्तन में बदल गया, जिसके बाद संसद, न्यायपालिका और अल्पसंख्यकों की सुरक्षा से जुड़ी व्यवस्थाएं गंभीर संकट में आ गईं। पश्चिमी लोकतंत्र भी इस संकट से अछूते नहीं हैं। फ्रांस, इटली, बेल्जियम, पुर्तगाल, स्पेन और अल्बानिया में लोग सरकारी नीतियों के विरोध में प्रदर्शन कर रहे हैं। फ्रांस में महंगाई, शिक्षा व्यवस्था की बदहाली और सार्वजनिक सेवाओं में कटौती के विरोध में शुरू हुए प्रदर्शन कुछ स्थानों पर आगजनी, लूटपाट और पुलिस के साथ झड़पों में बदल गए। इटली और बेल्जियम में भी प्रदर्शनकारियों द्वारा सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुंचाने की घटनाएं सामने आईं। परिपक्व लोकतांत्रिक व्यवस्था वाले इन देशों में वैधानिक प्रक्रियाओं के बजाय सड़क पर अराजकता के जरिये निर्णय हासिल करने की कोशिश चिंताजनक है। भारत के लिए भी यह गंभीर चिंता का विषय है कि कुछ घरेलू तत्व इस अराजकता को कुप्रेरणा लेकर 'ढाका की तर्ज पर दिल्ली में 'रिजीम चेंज' का आह्वान कर रहे हैं।

गहरे मतभेदों और लंबे आंदोलनों के बावजूद भारत तीन प्रमुख आधारों पर अपने पड़ोसी देशों (श्रीलंका, बांग्लादेश और नेपाल) की तरह संस्थागत पतन या तख्तापलट से बचा रहा है। पहला, पड़ोसी देशों से अलग भारतीय सेना पूरी तरह गैर-राजनीतिक रही है और उसने हमेशा निर्वाचित नागरिक सरकार तथा संविधान के अधीन अपनी भूमिका निभाई है। दूसरा, संघीय ढांचा और केंद्र तथा राज्यों में होने वाले नियमित चुनाव सुरक्षा वाल्व का काम करते हैं। इनके माध्यम से जनता का असंतोष सड़कों पर लंबे समय तक बने रहने के बजाय मतपेटियों के जरिये अभिव्यक्त होता है। तीसरा, सक्रिय न्यायपालिका ने कार्यपालिका और प्रदर्शनकारियों के बीच संवैधानिक मध्यस्थ की भूमिका निभाई है। यही संस्थागत लचीलापन और संतुलन भारत को राजनीतिक अराजकता से बचाए रखने में मदद करता है।

लोकतंत्र को भीड़तंत्र से बचाने और जनवेदनाओं को संवैधानिक दायरे में रखने के लिए चार संस्थागत सुधार जरूरी हैं। पहला, 'पूर्व-विधायी परामर्श नीति, 2014' को सख्ती से लागू करते हुए विधेयकों को कम से कम 30 दिनों तक सार्वजनिक विमर्श के लिए रखा जाए, ताकि नीतिगत असंतोष समय रहते दूर हो सके। दूसरा, प्रकाश सिंह बादल (2006) के निर्देशों के अनुरूप पुलिस को राजनीतिक हस्तक्षेप से मुक्त किया जाए और उसे आधुनिक, गैर-घातक भीड़-नियंत्रण तकनीकों तथा मनोवैज्ञानिक प्रशिक्षण से लैस किया जाए। तीसरा, प्रदर्शनों के दौरान सार्वजनिक संपत्ति को हुए नुकसान की भरपाई के लिए कठोर और पारदर्शी केंद्रीय कानून बनाया जाए। चौथा, हिंसा भड़काने वाले दुष्प्रचार पर अंकुश लगाने और एल्गोरिदम की जवाबदेही तय करने के लिए इंटरनेट मीडिया प्लेटफार्म की कानूनी जिम्मेदारी निर्धारित की जाए।

पड़ोसी देशों और यूरोप में हुई हिंसक अशांति भारत के लिए गंभीर चेतावनी है। ऐसे में लोकतांत्रिक संतुलन बनाए रखने के लिए राज्य को अपनी शक्तियों का दुरुपयोग नहीं करना चाहिए एवं नागरिकों को अपने संवैधानिक कर्तव्य निभाने चाहिए। सरकार का दायित्व है कि वह असहमति के स्वरों को संवेदनशीलता से सुने, वहीं प्रदर्शनकारियों को हिंसा का रास्ता छोड़कर कानूनी और शांतिपूर्ण संवाद अपनाना चाहिए। अधिकार और कर्तव्य जब तक एक-दूसरे के पूरक बने रहेंगे, तब तक भारत का लोकतंत्र भीड़ के क्षणिक उन्माद से अप्रभावित रहते हुए अपने संवैधानिक आदर्शों की रक्षा कर सकेगा।

(लेखक बिहार स्टेट बार काउंसिल के चेयरमैन हैं)
response@jagran.com

ऊर्जा

जीवन

जन्म और मृत्यु के बीच की अवधि ही जीवन है, लेकिन जीवन की सार्थकता केवल सांसों की संख्या या भौतिक उपलब्धियों से निर्धारित नहीं होती। वास्तविक सफल जीवन वह है, जिसमें मन प्रसन्न हो, विचार निर्मल हों और व्यवहार में सद्भावना हो। धन-संपत्ति का अभाव होने पर भी यदि मन में आनंद, संतोष और उमंग है, तो जीवन अपनी सुंदरता बनाए रखता है। इसके विपरीत, भौतिक सुविधाओं की प्रचुरता के बावजूद मन अशांत हो तो जीवन का वास्तविक सुख अधूरा रह जाता है।

शरीर नश्वर है, जबकि आत्मा को शाश्वत माना गया है। आत्मा कर्मों के बंधन के कारण जन्म-मरण के चक्र में भटकती रहती है। क्रोध, मान, माया और लोभ इस बंधन को मजबूत करते हैं। जब तक मोहनीय कर्म का क्षय नहीं होता, तब तक आत्मा की संसार-यात्रा जारी रहती है। इस दृष्टि से जीवन केवल वर्तमान का उपभोग नहीं, बल्कि आत्मा की शुद्धि और मुक्ति की दिशा में आगे बढ़ने का अवसर भी है। यदि मनुष्य अपने कर्मों के परिणाम के प्रति सजग रहे, तो वह पाप, छल और अनैतिकता से बचने का प्रयास करेगा।

सौभाग्य केवल धन, प्रतिष्ठा या जन्म से नहीं मिलता। सच्चा सौभाग्य उस व्यक्ति का है जिसकी जीवनशैली सादा, विचार उच्च और व्यवहार करुणापूर्ण है। सहिष्णुता जब आचरण में उतरते हैं, तभी सदाचार का निर्माण होता है। दूसरों के प्रति सहानुभूति, सभी के प्रति प्रेम और धर्माचरण के प्रति निष्ठा ही मनुष्य के चरित्र को श्रेष्ठ बनाते हैं। भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रयास करना जरूरी है, लेकिन जीवन को केवल इसी दौड़ तक सीमित कर देना उचित नहीं। शरीर, मन और आत्मा के बीच संतुलन स्थापित करना ही सार्थक जीवन का आधार है। मानवीयता, अहिंसा, संयम, नैतिकता और सद्भावना से युक्त जीवन ही वास्तव में अच्छा जीवन है। ऐसा जीवन वर्तमान को शांतिमय बनाता है और आत्मकल्याण की दिशा में भी आगे बढ़ाता है।

प्रदीप छाजेड़

पाठकनामा

pathaknama@pat.jagran.com

न्याय में देरी

'असहनीय हो चुकी है न्याय में देरी' शीर्षक से लिखे अपने आलेख में संजय गुप्त ने एक महत्वपूर्ण विषय उठाते हुए समयबद्ध न्याय की जरूरत पर जोर दिया है। सुधार की जिम्मेदारी न्यायाधीशों की है। उन्हें अधिवक्ताओं की बहानेबाजी, पुलिस की कमजोर विवेचना और बार-बार स्थगन की कोशिशों के बावजूद दृढ़ता से सुनवाई आगे बढ़ानी होगी। सिंगापुर की न्याय व्यवस्था से सीख लेते हुए न्यायाधीशों को मुकदमों की समय-सारिणी तय करने, अनावश्यक स्थगनों पर रोक लगाने और जवाबदेही सुनिश्चित करने की दिशा में काम करना चाहिए। साथ ही पंचायती राज संस्थाओं को विवादों के समझौतापूर्ण निपटारे के लिए प्रोत्साहित किया जाए। विशेष न्यायालयों और लोक-अदालतों का नियमित आयोजन हो तथा छोटे विवादों को सामुदायिक मध्यस्थता से सुलझाने की संस्कृति विकसित की जाए। जर्मनी और जापान जैसे देशों में न्यायिक मध्यस्थता तथा समझौते को प्रोत्साहित करने वाली व्यवस्थाएं उपयोगी उदाहरण हैं। समाज को भी जागरूक करना होगा कि हर विवाद को अदालत तक ले जाना जरूरी नहीं है। सशक्त पंचायतें, विश्वसनीय सामुदायिक संस्थाएं और निष्पक्ष मध्यस्थता समय, धन और आपसी संबंधों को बचा सकती हैं।

कुंज भूषण गोयल, लुधियाना

नया केंद्र बनता हिंद-प्रशांत

हिंद-प्रशांत क्षेत्र अब केवल समुद्री सीमाओं और सामरिक वर्चस्व तक सीमित नहीं रह गया है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता, अर्धचालक, महत्वपूर्ण खनिज और साइबर सुरक्षा जैसी तकनीकें भी वैश्विक शक्ति का नया आधार बन रही हैं। भारत, अमेरिका, जापान और आस्ट्रेलिया के क्वाड सहयोग में इन क्षेत्रों को मिल रही प्राथमिकता इसी बदलाव का संकेत है। अटलांटा की हालिया बैठक ने भी स्पष्ट किया है कि भविष्य की प्रतिस्पर्धा केवल युद्धपोतों से नहीं, बल्कि प्रयोगशालाओं और औद्योगिक उत्पादन क्षमता से तय होगी। ऐसे में भारत के सामने बड़ी संभावना के साथ जिम्मेदारी भी है। हिंद महासागर में भौगोलिक स्थिति, विशाल बाजार और कुशल मानव संसाधन उसकी ताकत हैं। जरूरत है कि इनका उपयोग तकनीकी आत्मनिर्भरता बढ़ाने में किया जाए। अर्धचालक निर्माण, एआइ अनुसंधान, साइबर सुरक्षा और महत्वपूर्ण खनिजों के पुनर्चक्रण में घरेलू क्षमता विकसित करनी होगी। क्वाड में भागीदारी तभी सार्थक होगी, जब भारत केवल सहयोगी नहीं, बल्कि तकनीक और समाधान देने वाला देश बने। आने वाले समय में समुद्री शक्ति के साथ तकनीकी सामर्थ्य भी वैश्विक नेतृत्व तय करेगी। हिंद महासागर में भारत को सामरिक रूप से अपने आप मजबूत करते रहना होगा। हालांकि इस दिशा में सतत प्रयास चल रहे हैं। तकनीकी आत्मनिर्भरता बढ़ाने से निश्चित रूप से हम आज के परिवेश में मजबूत स्थिति में होते जाएंगे।

अवनीश कुमार गुप्ता, पटना

छोटे उद्योगों को राहत दें

देश के एल्युमिनियम उद्योग में बड़े उत्पादकों और इसी कच्चे माल से उपयोगी वस्तुएं बनाने वाले छोटे उद्यमों के हितों के बीच संतुलन जरूरी है। महंगे कच्चे माल और सस्ते विदेशी उत्पादों की प्रतिस्पर्धा ने सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों (एमएसएमई) के सामने संकट खड़ा कर दिया है। एल्युमिनियम एक्सट्रूजन मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन आफ इंडिया ने वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण को पत्र लिखकर एल्युमिनियम पर 7.5 प्रतिशत मूल सीमा शुल्क समाप्त करने की मांग की है। यह मांग इसलिए महत्वपूर्ण है कि देश में एल्युमिनियम उत्पादों के निर्माण की सालाना क्षमता करीब 30 लाख टन है, जबकि वास्तविक उत्पादन महज 12 लाख टन के आसपास है। यानी आधी से भी कम क्षमता का उपयोग हो रहा है। डोर-विंडो, साइकिल पार्ट्स, आटोमोबाइल कलपुर्जे और पैकेजिंग जैसे क्षेत्रों में एल्युमिनियम की व्यापक जरूरत है। कच्चा माल महंगा होने से छोटे निर्माता तैयार उत्पादों की लागत कम नहीं कर पा रहे। इसका सीधा असर उत्पादन, निवेश और रोजगार पर पड़ता है। सरकार को शुल्क नीति बनाते समय बड़े उत्पादकों के साथ छोटे उद्योगों की प्रतिस्पर्धात्मकता का भी ध्यान रखना चाहिए। सस्ता कच्चा माल मिलेगा, तभी घरेलू विनिर्माण और रोजगार को गति मिलेगी। केवल शुरुआत में आर्थिक मदद मात्र से काम नहीं चलने वाला है।

युगल किशोर राही, छपरा

पोस्ट

पंछियों के पास न कोई जीपीएस होता है और न ही कोई मैप, लेकिन वे साइबेरिया से दिल्ली तक पहुंच जाते हैं। जबकि जिनके पास सारे नक्शे होते हैं, वे अक्सर गलत जगह लैंड कर जाते हैं।

रजत शर्मा@RajatSharmaLive

विधान परिषद चुनाव परिणाम के तुरंत बाद अमित शाह लखनऊ पहुंच गए। एक बड़ी लड़ाई जीतने की तैयारी के सिलसिले में। प्रभु चावला@PrabhuChawla

क्या राहुल गांधी को अपनी पार्टी के छात्र संगठन में एक भी ऐसा नेता नहीं दिख रहा, जिसे आगे किया जा सके। जबकि वामपंथी छात्र संगठनों के नेताओं को बढ़ावा दिया जा रहा है। पार्टी को अपने समर्पित कार्यकर्ताओं के साथ भी न्याय करना चाहिए। विशेष@7_vishesh



राहुल गांधी के साथ एक बुनियादी समस्या है कि उन्हें अभी तक यह अंदाजा नहीं हो पाया है कि वे क्या हैं। कभी वे ब्यूरोक्रेट बन जाते हैं, कभी शहंशाह तो कभी न्यायाधीश और लगते हैं फैसला सुनाने। अब कह रहे हैं कि 2024 का चुनाव अंधेरे है। यह लोकतंत्र और जनादेश सबका अपमान है।

अनुरंजन झा@anuranjanj

जनपथ

ठंडक दिल में पड़ गई करि चौपट व्यापार,
राजा बादू ला गए त्यौहरी रविवार।
त्यौहरी रविवार हुआ ना धंधा-पानी,
कमा सकें ना लाभ ही गई उलटे हानी।
तीन माह से रोजी रही दिल्ली बंधक,
करि सबका नुकसान इन्हें पड़ती है ठंडक!

-ओम प्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व.पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान सम्पादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, प्रधान सम्पादक -संजय गुप्त

जागरण प्रकाशन लिमिटेड के लिये आनन्द त्रिपाठी द्वारा दैनिक जागरण प्रेस C-5,C-6 & 15 इंडस्ट्रियल एरिया, पातलिपुत्र, पटना-800013 से प्रकाशित एवं मुद्रित, सम्पादक (बिहार/प.बंगाल)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी, स्थानीय सम्पादक - आलोक मिश्र * दूरभाष :0612-2277071, 2277072, 2277073

E.mail:Patna@pat.jagran.com, R.N.I. NO. BIHHIN/2000/03097* इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं सम्पादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी पटना जीपीओ रजि नं. R-10/NP-18/14-16 समस्त विवाद पटना न्यायालय के अधीन ही होंगे। पृष्ठ 27 अंक 200

अमर उजाला
प्रवाह
निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना : 18 अप्रैल 1948 ■ आगरा
नई दिल्ली ■ सोमवार, 2 नवंबर 2026

प्रगति की कला यह है कि परिवर्तन के बीच व्यवस्था और व्यवस्था के बीच परिवर्तन को बनाए रखा जाए। -अल्फ्रेड नॉर्थ व्हाइटहेड

पिछले काफी समय से निर्वाचन आयोग और केंद्र सरकार पर हमलावर रही कांग्रेस ने अब रामलीला मैदान पर विपक्ष की संयुक्त शक्ति का प्रदर्शन कर 'मोदी बनाम सभी' का आख्यान गढ़ने की कोशिश की है। देखना होगा कि उसकी यह रणनीति आसन्न चुनावों में उसके लिए कितनी फायदेमंद साबित होगी।

शक्ति प्रदर्शन



पहले दिल्ली में मार्च, फिर मॉक संसद और अब रामलीला मैदान में विपक्षी दलों के जमावड़े के जरिये कांग्रेस ने सरकार के खिलाफ विरोध की एक लहर पैदा करने और 'मोदी बनाम सभी' का आख्यान गढ़ने की कोशिश की है। जाहिर है, इस पूरी कवायद का मकसद केवल चुनावी प्रक्रिया को लेकर अपनी आपत्तियां दर्ज कराना नहीं, बल्कि विपक्ष की संयुक्त राजनीतिक शक्ति का प्रदर्शन करना भी है। कांग्रेस लंबे समय से चुनावी प्रक्रिया की पारदर्शिता पर सवाल उठा रही है। कभी ईवीएम की विश्वसनीयता को लेकर संदेह जताया गया, तो कभी वीवीपैट की पर्चियों के मिलान और चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति की प्रक्रिया पर सवाल उठे। अब एसआईआर को लेकर 'वोट चोरी' का आरोप लगाया जा रहा है। लेकिन यहां विपक्ष के लिए कुछ सवाल भी हैं। जिन राज्यों में मतदाता सूचियों में बड़े पैमाने पर नाम काटे जाने का आरोप है, वहां अब तक मताधिकार से वंचित लोगों की ओर से व्यापक विरोध क्यों दिखाई नहीं दिया है? यह मान भी लिया जाए कि ऐसे असंतोष को सामने आने में समय लगता है, तब भी क्या विपक्षी दलों की तरफ से प्रभावित मतदाताओं को संगठित करने की कोई ठोस पहल हुई ? देश के चार राज्यों में हाल में हुए विधान परिषद चुनावों के नतीजों को अगर जनमत का एक नमूना माना जाए, तो मतपत्रों के जरिये हुए इन चुनावों से भी ऐसा कोई स्पष्ट संकेत नहीं मिलता, जिससे लगे कि मतदाता पूरी तरह विपक्ष के साथ खड़े हैं। यह भी ध्यान देने योग्य है कि चुनावी व्यवस्था पर सवाल उठाने के बावजूद कांग्रेस और उसके सहयोगी दलों को अलग-अलग राज्यों में चुनावी सफलताएं मिली हैं। इससे यह सवाल जरूर उठता है कि यदि व्यवस्था पूरी तरह पक्षपातपूर्ण है, तो विपक्ष की चुनावी सफलताओं की व्याख्या कैसे की जाए? इन अंतर्विरोधों के पीछे झांकने की जरूरत है। दरअसल, चुनावी प्रक्रिया में सुधार और उसकी निष्पक्षता सुनिश्चित करना किसी एक राजनीतिक दल का नहीं, बल्कि सभी दलों और संस्थाओं का साझा दायित्व है। चुनाव आयोग को अपनी कार्यप्रणाली में अधिक पारदर्शिता और संवाद के जरिये भरोसा मजबूत करना चाहिए, वहीं विपक्ष को भी अपने आरोपों के समर्थन में ठोस प्रमाण सामने रखने चाहिए। मॉक संसद और सांकेतिक महाभियोग जैसी कवायदें राजनीतिक विरोध का एक तरीका हो सकती हैं, लेकिन उन्हें तथ्यों और सुधार की स्पष्ट रूपरेखा का विकल्प नहीं बनाया जा सकता। आखिरकार, चुनावी लोकतंत्र की मजबूती केवल निष्पक्ष मतदान से नहीं, बल्कि पूरी प्रक्रिया में सभी पक्षों के भरोसे से सुनिश्चित होती है।

विचारधारा ही काफी नहीं है

जनादेश को कमजोर किए बिना सत्ता में लंबे समय तक बने रहने के लिए विचारधारा का रचनात्मक पालन जरूरी है। चाहे वह वामपंथी हो या दक्षिणपंथी, लूला हों या मेलोनी—इनमें से जो सबसे अधिक लोकप्रिय होते हैं, वे वैचारिक लचीलेपन को अपने करिश्मे के साथ जोड़ लेते हैं।



भगोड़ा 'कट्टरपंथी' शायद कोई प्रतिनिधि उदाहरण न हो। चुनाव हारने के बाद ब्राजील के बोल्सोनारो जूनियर का मियामी पहुंचने के लिए देश की सीमा पार करना एक कहानी बयां करता है: लोगों का दिल जीतने के लिए केवल वैचारिक कट्टरता ही काफी नहीं है। लैटिन अमेरिकी वामपंथ के अमर पुरोधा लूला इसलिए सफल रहे, क्योंकि उनके पास मार्क्सवाद से भी कुछ अधिक था: एक ऐसा करिश्मा, जो सत्ता की अधिकता के बावजूद कभी फीका नहीं पड़ा। दूसरी ओर, दक्षिणपंथी खेमा सत्ता के साथ पूरी तरह सहज हो चुका है—और उसने सत्ता की होड़ को ही 'विकल्प' की सबसे स्वाभाविक अभिव्यक्ति बना दिया है। फिर भी, उनका संघर्ष पहले से कहीं अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा है, और यह संघर्ष पहचान तथा अनुकूलन से जुड़ा है।



एस प्रसन्नराजन
ओपन मैगजीन के संपादक

यह स्थिति फ्रांस में सबसे नाटकीय ढंग से सामने आ रही है, जहां एक हिंसक विरोध-प्रदर्शन ने छात्रों की चिंताओं और देश की जनसांख्यिकीय विस्फोटक स्थिति को एक साथ ला खड़ा किया है—जिसकी सीमाएं प्रवासियों को सबसे अधिक अनुकूल लगती हैं। जैसा कि *वॉल स्ट्रीट जर्नल* के एक स्तंभकार ने गौर किया, लुई वुइटन की कांच की खिड़कियां सड़क पर भड़के गुस्से के सामने राज्य की तुलना में कहीं अधिक मजबूत साबित होती हैं—जिसने हाल ही में एक खास इस्लामी रंग ले लिया है। गॉल (फ्रांस) के खंडहरों पर दो आकृतियां खड़ी हैं—एक डगमगाती हुई और दूसरी स्थिर—जो निरर्थकता और पुनरुत्थान के बीच के अंतर को दर्शाती हैं। कभी मैक्रों पूरे यूरोप में एक ऐसे नेता के रूप में उभरे थे, जो महाद्वीप में एक नया पुनर्जागरण ला सकते थे। इस मध्यमार्गी राष्ट्रपति की बौद्धिक ऊर्जा, पारंपरिक और रूढ़िवादी नेताओं के बीच एक ताजा बदलाव की तरह थी।

यूरोप के सबसे परिष्कृत मध्यमार्गी नेता की आधुनिकता एक कठोर धर्मनिरपेक्षता पर टिकी है, जो चर्च और राज्य के अलगाव को पूरी तरह से अटूट बनाती है। इसीलिए, मुसलमानों और यहूदियों का जनसांख्यिकीय मिश्रण कुछ ऐसा है कि अब ईश्वर भी सड़कों पर उमड़ते आकर्षणों (या प्रलोभनों) से खुद को दूर नहीं रख सकते। मैक्रों संगीत कार्यक्रम में इतने मग्न थे कि उन्हें यह दिखाई ही नहीं दिया। यूरोपीय उदारवाद के इस आखिरी परिष्कृत प्रतिनिधि का अब अपमानजनक अंत दिख रहा है।

मध्यमार्गी के सामने दक्षिणपंथ के धैर्यवान ध्वजवाहक खड़े हैं, जो लंबे समय से अपनी बारी का इंतजार कर रहे हैं। इस सफर के दौरान, 'नेशनल रैली' की मरीन ले पेन ने दक्षिणपंथी चरमपंथ की अपनी पुरानी विरासत को पीछे छोड़ दिया है। 'राष्ट्र सर्वोपरि' वाली रिपब्लिकन विचारधारा को बनाए रखते हुए, व्यापक स्वीकार्यता पाने की उनकी छटपटाहट ही एकमात्र कारण नहीं है, जिसने उन्हें फ्रांसीसी राष्ट्रपति भवन की दौड़ में एक स्वाभाविक दावेदार बना दिया है। जब सड़कों पर हंगामा भड़क उठा, तो वह उसे भड़काने वालों की भूमिका में नहीं थीं—यह भूमिका उनके वामपंथी साथी ने निभाई थी। उन्हें समझ आ गया है कि सत्ता पाने की किसी भी गंभीर कोशिश में, कट्टरता के बजाय हालात के अनुसार खुद को ढाल लेना कहीं बेहतर गुण है।

यही बात सत्ता में बने रहने पर भी लागू होती है। अटलांटिक के उस पार, ट्रंप का फिजूलखर्ची वाला राष्ट्रपति-काल उदारवादियों की घृणा और रिपब्लिकन के समर्थकों की नाराजगी को अनदेखा कर सकता है। हो सकता है कि उन्होंने एक आत्ममुग्ध राष्ट्रपति-काल की अनैतिकताओं को सामान्य बना दिया हो। फिर भी, विचारधारा का गुलाम बनने से इन्कार करने की उनकी इसी आदत ने उनके समर्थकों को मजबूत किया है। मध्यावधि चुनावों के नतीजे उस व्यक्ति के महत्व (या बदनामी) को कम नहीं कर सकते, जिसने पूरे अमेरिका को हिलाकर रख दिया था। उन्होंने ऊंचे आदर्शों वाले 'रीगनवाद' की जगह सहज रूढ़िवाद को अपना लिया है, और इस प्रक्रिया में राष्ट्रीय हित और निजी हित को एक-दूसरे का पर्याय बना दिया है। हो सकता है कि उदारवादी सोच रखने वालों के लिए यह बात सही न हो। पर यह अब तक उनके लिए कारगर रहा है।

जनादेश को कमजोर किए बिना सत्ता में लंबे समय तक बने रहने के लिए विचारधारा का रचनात्मक पालन जरूरी है, और यही बात कट्टरपंथी शासकों में नहीं होती। शी हों या पुतिन, जो खुद को राष्ट्र के भाग्य का स्थायी विधाता मानते हैं, उनकी सत्ता का आधार डर है। विचारधारा इनके लिए अधिकतम लाभ उठाने का एक साधन है। चाहे वह वामपंथी हो या दक्षिणपंथी, लूला हों या मेलोनी—इनमें से जो सबसे अधिक लोकप्रिय होते हैं, वे वैचारिक लचीलेपन को अपने करिश्मे के साथ जोड़ लेते हैं। यहां लचीलेपन का अर्थ अवसरवाद नहीं है। यह उन्हें सबको साथ लेकर चलने की क्षमता देता है, ताकि वे किसी एक बड़े नारे के बहकावे में आकर, आम लोगों की आवाजों को अनसुना न कर दें।

यह हमें स्वाभाविक रूप से लोकतंत्र में सबसे टिकाऊ माने जाने वाले उस व्यक्तित्व की ओर ले जाता है, जिस पर सत्ता के जरिये निजी लाभ उठाने का एक भी आरोप नहीं लगा है। यह एक ऐसी खूबी है, जिसका दावा आज बहुत कम लोग कर सकते हैं। पश्चिमी मीडिया में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को अक्सर एक 'हिंदू राष्ट्रवादी' के रूप में पेश किया जाता है। यह बात गलत तो नहीं है, लेकिन इस शब्द का इस्तेमाल सांस्कृतिक और प्रशासनिक 'अनन्यतावाद' (एक ऐसी मान्यता, जिसके अनुसार केवल एक विशेष प्रणाली, समूह या मान्यताओं का समूह ही सत्य और वैध है, जबकि बाकी सभी को असत्य माना जाता है।)' के अर्थ में किया जाता है, मानो भारत का शासन-प्रशासन उनकी सांस्कृतिक पहचान के अधीन हो।

मोदी भारत पर केवल एक कट्टर हिंदू राष्ट्रवादी के रूप में शासन नहीं करते, जिनका हिंदुत्व साम्यवाद की तरह ही वैचारिक रूप से पूरी तरह परिभाषित है। वे कोई पारंपरिक दक्षिणपंथी भी नहीं हैं। कहा जाता है कि चुनाव प्रचार के दौरान आपके मुद्दे चाहे जो भी हों, सत्ता में आने के बाद आप मध्यमार्गी विचारधारा से ही शासन चलाते हैं। नैतिक व्यावहारिकता, सामाजिक संवेदना और एक आधुनिक सोच रखने वाले नेता का दृढ़ विश्वास—ये सब मोदी की सत्ता को परिभाषित करते हैं, और ये उनकी वैचारिक विरासत को उनके लिए कोई बोझ नहीं बनने देते। एक रचनात्मक राजनेता अपनी सांस्कृतिक मान्यताओं से समझौता किए बिना अपनी विचारधारा को समय के साथ अद्यतन कर लेता है, और मोदी ने दिखाया है कि ऐसा कैसे किया जाता है। इतिहास विचारधारा की अति को दंडित करता है। जो लोग इसका उपयोग रचनात्मक उद्देश्य के लिए करते हैं, वे इतिहास में भी जीतते हैं। edit@amarujala.com

जीवन धारा



तुईस हे

हम अक्सर जीवन में बदलाव चाहते हैं, लेकिन पुरानी आदतों और डर से बाहर नहीं निकल पाते। बदलाव की शुरुआत अपनी सोच और मान्यताओं को पहचानने से होती है।

बदलाव की शुरुआत खुद से हो



हम सभी अपने जीवन में कुछ न कुछ बदलना चाहते हैं। कोई अपनी आदतें सुधारना चाहता है, कोई अपने रिश्तों को बेहतर बनाना चाहता है और कोई अपने डर से उबरकर आगे बढ़ना चाहता है। कई बार हम यह भी समझते हैं कि हमारे जीवन में क्या गलत हो रहा है और उसे ठीक करने के लिए हमें क्या करना चाहिए। इसके बावजूद हम वही पुराने ढर्रे पर चलते रहते हैं। हम बदलाव के बारे में सोचते हैं, उसके फायदे भी जानते हैं, पर जब उसे अपने जीवन में उतारने की बारी आती है, तो किसी न किसी बहाने से पीछे हट जाते हैं। बदलाव के प्रति विरोध कई बार हमारी अपनी सोच और उन मान्यताओं से पैदा होता है, जिन्हें हमने लंबे समय से अपने भीतर जगह दे रखी है। हम अक्सर मान लेते हैं कि अब कुछ नहीं बदला जा सकता। धीरे-धीरे ये विचार हमारे व्यवहार का हिस्सा बन जाते हैं और हम अपनी ही बनाई सीमाओं में सिमटकर रह जाते हैं।

यह विरोध हमेशा सीधे दिखाई नहीं देता। कई बार इसके संकेत हमारी रोजमर्रा की आदतों में छिपे होते हैं। जरूरी काम को बार-बार टालना या काम शुरू करने के बजाय दूसरे कामों में उलझे रहना भी बदलाव से बचने के तरीके हो सकते हैं। हम अपने व्यवहार को सही ठहराने के लिए तरह-तरह के तर्क गढ़ते हैं। और अपने परिवार, दोस्तों, परिस्थितियों या समाज को जिम्मेदार ठहराते हैं। इस तरह बदलाव की जिम्मेदारी अपने हाथ में लेने के बजाय हम उसके लिए बाहर कोई कारण खोजने लगते हैं। बदलाव के रास्ते की सबसे बड़ी बाधाओं में से एक अज्ञात का भय है।

हमें इस बात का डर सताता रहता है कि पुरानी आदतें छोड़ने पर भविष्य में क्या होगा और लोग क्या कहेंगे। यही अनिश्चितता का भय हमें ऐसी जानी-पहचानी परिस्थितियों में ही उलझाए रखता है, जो हमारे लिए हितकर न होने पर भी एक झूठी सुरक्षा का एहसास कराती हैं। हमारी बार-बार दोहराई जाने वाली आदतें और परेशानियां भी हमारे भीतर मौजूद कुछ अधूरी जरूरतों या मान्यताओं की ओर इशारा करती हैं। इसलिए केवल किसी आदत को जबर्दस्ती छोड़ देना पर्याप्त नहीं है। उसके पीछे छिपे कारण को समझना भी जरूरी है। बदलाव का पहला कदम यह स्वीकार करना है कि हमारे भीतर भी कुछ ऐसा है, जिसे बदलने की जरूरत है। इसके लिए स्वयं को दोषी ठहराने की नहीं, बल्कि ईमानदारी से अपने विचारों को परखना जरूरी है। जब हम पुराने डर और मान्यताओं को पहचानकर उनसे आगे बढ़ने की इच्छा रखते हैं, तभी नए रास्तों की संभावना बनती है। जीवन में आगे बढ़ने के लिए कभी-कभी सबसे जरूरी काम यही होता है कि हम उस चीज को छोड़ने के लिए तैयार हों, जिसे अब तक कसकर पकड़े हुए हैं।

- यू कैन हील योर लाइफ के अनूदित अंश

छोटे कदम उठाएं

सूत्र

अक्सर हमें आगे बढ़ने से परिस्थितियां नहीं, बल्कि हमारे अपने डर और पुरानी मान्यताएं रोकती हैं। जब तक हम उन्हें सच मानकर पकड़े रहेंगे, नए रास्ते हमारे सामने नहीं खुलेंगे। इसलिए बीते हुए अनुभवों और असफलताओं को अपनी सीमाएं न बनने दें। अपनी सोच को बदलने की इच्छा जगाएं, छोटे कदम उठाएं और खुद को एक नया अवसर दें।

दूसरा पहलू

अनियंत्रित हंसी लंबी व ऊंची होती हैं। शोधकर्ताओं ने पाया कि इन दोनों प्रकार की हंसी में मस्तिष्क के अलग-अलग तंत्रिका-तंत्र सक्रिय होते हैं।

हंसी के पीछे छिपे हैं दिमाग के अनोखे रहस्य

■ *सोफी स्कॉट*

क्या आपको याद है कि पिछली बार आप कब हंसते-हंसते लोटपोट हो गए थे और आपकी हंसी रुकने का नाम ही नहीं ले रही थी? शायद वह ऐसी स्थिति थी, जब आपको बिल्कुल भी नहीं हंसना चाहिए था। ऐसा हममें से एक व्यक्ति के साथ हुआ, जब वह तालाब के एक अप्रिय मामले में अपने मित्र के साथ पारिवारिक न्यायालय गया था। वहां उसे इतनी हंसी आई कि वह खुद को रोकने की कोशिश करते हुए बाथरूम की ओर भागा, पर असफल रहा। यह उसके मित्र को भावनात्मक सहारा देने का बिल्कुल सही तरीका नहीं था। वहीं क्रिकेट कमेंटेटर ब्रायन जॉनस्टन व जोनाथन एग्न्यू भी 1991 में मैच का वर्णन करते समय इतना हंसे कि बोल नहीं पाए। आखिर ऐसा क्यों होता है?



आमतौर पर हम हंसी को मनोरंजन से जोड़ते हैं, जबकि अधिकांश हंसी सामाजिक कारणों से आती है। दूसरों के साथ होने पर हमारे हंसने की संभावना अकेले होने की तुलना में 30 गुना अधिक होती है। किसी परिचित और प्रिय व्यक्ति के साथ हम अधिक हंसते हैं। बातचीत में हंसी संक्रामक भी होती है। किसी को हंसते देखकर या सुनकर हम खुद-ब-खुद हंसने लगते हैं। इससे सामाजिक जुड़ाव बढ़ता है। हम सहमति जताने, समझ प्रदर्शित करने, दोस्ती को मजबूत करने और तनाव घटाने के लिए भी हंसते हैं। बातचीत में ऐसी सामान्य हंसी औसतन हर दस मिनट में छह बार आती है। यह छोटी और अपेक्षाकृत धीमी होती है। इसके विपरीत, अनियंत्रित हंसी लंबी व ऊंची होती है। शोधकर्ताओं ने पाया कि इन दोनों प्रकार की हंसी में मस्तिष्क के अलग-अलग तंत्रिका-तंत्र सक्रिय होते हैं। मस्तिष्क की विद्युत उत्तेजना से कुछ क्षेत्रों में हंसी उत्पन्न की जा सकती है। एक तंत्र खुशी से जुड़ा है, जबकि दूसरा ऐच्छिक गतिविधियों को नियंत्रित करता है। स्वाभाविक हंसी से ओपिओइड्स प्रणाली सक्रिय हो सकती है, जो आनंद और सुखद अनुभूति से जुड़ी है। सेरोटोनिन प्रणाली पर इसके प्रभाव से दर्द कुछ समय के लिए कम महसूस हो सकता है। यह प्राचीन तंत्र मनुष्यों और अन्य स्तनधारियों में काफी हद तक समान है। इसके विपरीत, स्वैच्छिक हंसी सामाजिक संवाद में भूमिका निभाती है। यह बोलने, गाने और बीटबॉक्सिंग जैसी जटिल गतिविधियों से जुड़े मस्तिष्कीय तंत्र पर निर्भर करती है। शोध के अनुसार, हंसी केवल मनोरंजन नहीं है। इसका अध्ययन सामाजिक संबंधों, सहानुभूति, भाषा, भावनात्मक संक्रामकता और दर्द नियंत्रण को समझने में महत्वपूर्ण योगदान देता है। -साथ में फाउंटो कारूआना (द कन्वर्सेशन)

आंकड़े

रूफटॉप सोलर

देश में पीएम सूर्य घर योजना का चलन तेजी से बढ़ रहा है। अब अधिक से अधिक लोग बिजली की बचत के लिए अपने घरों की छतों पर सोलर पैनल लगवा रहे हैं।



आंकड़े पीएम सूर्य घर योजना के तहत राज्यों में रूफटॉप सोलर लगवाने वालों के, प्रतिशत में। | स्रोत : एचटी

शंख की धन-संपत्ति समाप्त हो गई और परिवार कष्टों से घिर गया, फिर भी उसने भगवान विष्णु की पूजा और सेवा जारी रखी।

अतिथि सेवा और धर्म-कर्म

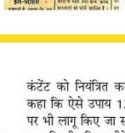
पौराणिक कथाओं के अनुसार, शंख नाम का एक धर्मपरायण भक्त था। उसकी दिनचर्या भगवान विष्णु के स्मरण, अतिथि सेवा और धर्म-कर्म में ही व्यतीत होती थी। वह मानता था कि चाहे जीवन में कितने ही संकट क्यों न आएं, मनुष्य को कभी धर्म और भक्ति का मार्ग नहीं छोड़ना चाहिए। एक समय उसके जीवन में अत्यंत कठिन परिस्थितियां आ गईं।

धन-संपत्ति समाप्त हो गई, घर में अन्न का अभाव हो गया और परिवार भी अनेक कष्टों से घिर गया। फिर भी शंख ने भगवान की पूजा करना नहीं छोड़ा। वह भगवान विष्णु से केवल इतनी प्रार्थना करता कि उसका मन कभी धर्म से विचलित न हो। एक दिन एक अतिथि उसके द्वार पर भोजन की आशा लेकर पहुंचा। घर में खाने के लिए केवल थोड़ा-सा अन्न शेष था। शंख ने सारा अन्न अतिथि को खिला दिया। उसकी निःस्वार्थ सेवा व श्रद्धा से प्रसन्न होकर भगवान विष्णु ने उसे दर्शन दिए। भगवान बोले, 'हे भक्त! विपत्ति में भी जिसने अपने धर्म और परोपकार का त्याग नहीं किया, वह मुझे अत्यंत प्रिय है।' भगवान की कृपा से उसके जीवन के कष्ट दूर हुए और उसे परम सुख की प्राप्ति हुई।

अंतर्यात्रा
संकलित

अमर उजाला
पुराने पन्नों से — 2 नवंबर, 1954

भारत से दुनिया उम्मीद कर सकती है



रूस स्वयं को तो सर्वश्रेष्ठ मानता ही है, साथ ही उसका मत है कि भारत वह देश है, जिससे दुनिया आशा कर सकती है। यह बात उत्तर प्रदेश के कृषि विभाग के उपमंत्री जगनप्रसाद रावत ने कही।

बच्चों को इंटरनेट से दूर कर देना ठीक नहीं



न्यायालय का तर्क है कि बच्चों को हानिकारक ऑनलाइन सामग्री से बचाना और उन्हें पूरी तरह से डिजिटल दुनिया से बाहर कर देना, इन दोनों में फर्क है।

विनय झैलावत — मुद्दा



बच्चों की ऑनलाइन सुरक्षा को लेकर सर्वोच्च न्यायालय का दृष्टिकोण इंटरनेट तक पहुंच पर पूर्ण प्रतिबंध के बजाय, हानिकारक सामग्री, जवाबदेही और उचित सुरक्षा उपायों पर केंद्रित है। सर्वोच्च न्यायालय ने बच्चों की इंटरनेट, विशेष रूप से सोशल मीडिया तक पहुंच को उम्र के आधार पर सीमित करने की प्रवृत्ति पर विचार करते हुए ऑनलाइन खतरों से निपटने के उपाय के तौर पर ऐसी पाबंदियों का समर्थन करने से इन्कार कर दिया।

न्यायालय का तर्क है कि बच्चों को हानिकारक ऑनलाइन सामग्री से बचाना और उन्हें पूरी तरह से डिजिटल दुनिया से बाहर कर देना, इन दोनों में फर्क है। न्यायालय ने माना कि इंटरनेट, अपने मौजूदा रूप में, बच्चों के लिए बिल्कुल सुरक्षित नहीं है। न्यायालय की चिंता यह थी कि बच्चों की सुरक्षा के उपायों में नुकसान की जड़ पर ध्यान दिया जाना चाहिए, न कि उस नुकसान का बोझ खुद बच्चों पर डाल दिया जाना चाहिए। न्यायालय ने यौन शोषण और दुर्व्यवहार से जुड़ी सामग्री तैयार करने, प्रसारित करने, फैलाने, बेचने या खोजने वालों के साथ-साथ, इसे पहचानने और हटाने में नाकाम रहने वाले मध्यस्थों को भी दोषी माना। न्यायालय का तर्क था कि बच्चों को इंटरनेट से दूर रखने का मतलब होगा पीड़ित को ही समस्या मान लेना।

न्यायालय ने चिंता जताई कि बच्चों को ऑनलाइन खतरों से बचाने के उपायों में अनिवार्य रूप से उपयोगकर्ताओं की पहचान करना और उनकी उम्र का पता लगाना, संवेदनशील डाटा इकट्ठा करना और उसकी निगरानी करना शामिल होता है। इससे डाटा के दुरुपयोग और निगरानी का जोखिम पैदा हो जाता है। ये चिंताएं निजता के अधिकार के तहत मिलने वाली सुरक्षा के विपरीत हैं।

न्यायालय ने दूर-दराज के इलाकों में रहने वाले बच्चों के लिए, सीखने के स्रोत के रूप में इंटरनेट के महत्व को रेखांकित करते हुए कहा कि यह एक ऐसा माध्यम है, जिसके जरिये विशेष जरूरतों वाले बच्चे, समान अनुभवों वाले अन्य लोगों से जुड़ सकते हैं। इसलिए इंटरनेट तक पहुंच पर पाबंदियां केवल सोशल मीडिया तक ही सीमित नहीं रहतीं। इनका असर बच्चों की जानकारी पाने, सीखने और अपनी बात व्यक्त करने की क्षमता पर भी पड़ सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि पाबंदियों को खारिज करने का मतलब यह नहीं है कि उम्र के आधार पर कोई पाबंदी नहीं होनी चाहिए। बच्चों तक पहुंचने वाले कंटेंट को नियंत्रित करने की जरूरत है, लेकिन माता-पिता की सहमति, मार्गदर्शन और निगरानी जरूरी है। साथ ही, सोशल मीडिया अकाउंट्स के लिए एक विशेष 'चाइल्ड मोड' बनाने की बात भी कही गई। इसमें अकाउंट को डिफॉल्ट रूप से 'प्राइवेट' रखना, अनजान वयस्कों से संपर्क और संदेशों पर रोक लगाना, और बच्चों तक पहुंचने वाले विज्ञापनों व कंटेंट को नियंत्रित करना शामिल है। न्यायालय ने कहा कि ऐसे उपाय 13 साल से कम उम्र के बच्चों पर भी लागू किए जा सकते हैं, बशर्ते माता-पिता की सहमति की उचित तरीके से पुष्टि की जाए। इन उपायों को कैसे लागू किया जाए, यह न्यायालय ने केंद्र सरकार पर छोड़ दिया है। इन निर्देशों से केंद्र सरकार को इसलिए नहीं रोका गया है कि वह बच्चों को कुछ खास तरह के कंटेंट या सेवाओं तक पहुंचने से रोके, जो उनके लिए हानिकारक हैं।

इन उपायों का उद्देश्य हानिकारक सामग्री की पहचान और उसे हटाने की प्रक्रिया में सुधार करना, तथा कानूनी दायित्वों का पालन सुनिश्चित करना है। इसका मतलब यह नहीं कि केवल तकनीकी साधनों के जरिये ही बच्चों को ऑनलाइन खतरों से बचाया जा सकता है। साथ ही, यह आदेश अपने सभी प्रस्तावित नीतिगत उपायों को अपने-आप लागू होने वाला नहीं बनाता है। कई पहलुओं के लिए दिशा-निर्देशों, मानक संचालन प्रक्रियाओं या केंद्र सरकार द्वारा आगे और कार्रवाई किए जाने की जरूरत है।

इसका मतलब न तो यह है कि हर ऑनलाइन सेवा तक निर्बाध पहुंच होनी चाहिए, और न ही यह सभी सुरक्षात्मक सीमाओं को खारिज करता है। यह एक अधिक सटीक दृष्टिकोण की मांग करता है, जिसमें निजता, जानकारी तक पहुंच और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का सम्मान करते हुए बच्चों की सुरक्षा सुनिश्चित की जा सके।

-लेखक पूर्व असिस्टेंट सॉलिसिटर जनरल एवं वरिष्ठ अधिवक्ता हैं।

राजस्थान पत्रिका
संस्थापक
कर्पूर चन्द्र कुलिश

हवाई सफर में सुरक्षा और सुविधा से समझौता क्यों?

जयपुर एयरपोर्ट पर दुबई जाने वाली एक फ्लाइट का 21 घंटे की देरी से उड़ान भरना महज विमान के विलंब की घटना नहीं, बल्कि हमारे विमानन तंत्र की बदहाल व्यवस्था का आईना है। इन 21 घंटों में फ्लाइट का शेड्यूल तीन बार बदला गया। यात्री परेशान होते रहे और हर बार तकनीकी खामी का हवाला देकर इंतजार करने को कहा जाता रहा। सवाल है कि निजी एयरलाइंस को यात्रियों को इस तरह परेशान करने की छूट किसने दी है? ऐसी घटनाएं अब अपवाद नहीं, बल्कि विमानन क्षेत्र की आम समस्या बनती जा रही हैं। बीते साल एक निजी एयरलाइन की सैकड़ों उड़ानें अचानक रद्द होने से हजारों यात्रियों को परेशानी उठानी पड़ी।

कर्मचारियों और पायलटों की कमी, रोस्टर प्रबंधन की खामियां तथा परिचालन संबंधी अव्यवस्थाएं इसके प्रमुख कारण बनकर सामने आईं। कंपनियों की लापरवाही का खामियाजा यात्री कब तक भुगतेंगे? उड़ानें रद्द होने से लेकर घंटों की देरी तक, जवाबदेही तय करने की ठोस व्यवस्था क्यों नहीं है? अब सर्दियों में कोहरे का मौसम दस्तक दे रहा है। हर साल कम दृश्यता के कारण उड़ानें प्रभावित होती हैं। जब मौसम की यह चुनौती पहले से मालूम है तो एयरलाइंस और हवाई अड्डे तैयारी क्यों नहीं करते? सुरक्षित लैंडिंग के लिए कैट-3 जैसी आधुनिक तकनीक, जरूरी उपकरण और प्रशिक्षित पायलटों की पर्याप्त व्यवस्था क्यों नहीं की जाती? यात्रियों को हर साल मौसम के नाम पर परेशानी झेलने के लिए छोड़ देना कहां तक उचित है? कर्मचारियों की कमी और पायलटों के कार्य घंटों का मुद्दा भी गंभीर है। यदि पर्याप्त पायलट और क्रू उपलब्ध नहीं हैं तो एयरलाइंस को अपनी क्षमता से अधिक उड़ानें संचालित करने की अनुमति कैसे मिल जाती है? निर्धारित कार्य अवधि से अधिक काम कराने की शिकायतें विमानन सुरक्षा पर सवाल खड़े करती हैं। यात्रियों की सुरक्षा किसी भी कंपनी के मुनाफे से अधिक महत्वपूर्ण होनी चाहिए। उड़ानें रद्द होने या देरी के दौरान टिकटों के दाम आसमान छूने लगते हैं। निजी कंपनियां मांग और आपूर्ति का तर्क देकर किराये में मनमानी बढ़ोतरी करती हैं और सरकार मूकदर्शक बनी रहती है। क्या आम आदमी की मजबूरी कंपनियों के लिए मुनाफा कमाने का अवसर मात्र है?

नागरिक उड्डयन महानिदेशालय (डीजीसीए) की जिम्मेदारी केवल नियम बनाने तक सीमित नहीं है। नियमों का सख्ती से पालन कराना, लापरवाह कंपनियों पर कार्रवाई करना व प्रभावित यात्रियों को उचित मुआवजा दिलाना भी उसकी जिम्मेदारी है। हवाई यात्रा कोई अहसान नहीं, बल्कि भुगतान के बदले मिलने वाली सेवा है। निजी एयरलाइंस को समझना होगा कि उड़ान भरने की आजादी के साथ जवाबदेही भी आती है। सरकार को निजीकरण के नाम पर अपनी जिम्मेदारी से पल्ला झाड़ना बंद करना होगा। आखिर विमानन कंपनियों का मुनाफा जरूरी है या यात्रियों का सम्मान, सुरक्षा और सुविधा?

इजरायल चुनाव : सरकार के गठन को लेकर राजनीतिक सौदेबाजी तेज होने की संभावना

अरब मूल के नागरिकों की ताकत और निर्णायक मोड़

इजरायल में मतगणना पूरी होने के बाद हालिया आम चुनावों के बाद किसी भी गठबंधन को स्पष्ट बहुमत नहीं मिला है, जिससे वहां सियासी गतिरोध और सस्पेंस बना हुआ है। जीत का दावा पक्ष और विपक्ष दोनों ही कर रहे थे लेकिन किसी भी पार्टी या गठबंधन को सरकार बनाने लायक बहुमत नहीं मिला है। सबसे लंबे समय से प्रधानमंत्री पद पर काबिज बेंजामिन नेतन्याहू के गठबंधन को सर्वाधिक 53 सीटें मिली हैं लेकिन नतीजा उनके खिलाफ गया है। नेतन्याहू की लिकुड पार्टी की सीटें कम हुई हैं। वहीं नेतन्याहू की नीतियों के विरोध में चुनाव लड़े पूर्व सेना प्रमुख गादी आइसेनकोट की याशर पार्टी के नेतृत्व वाले गठबंधन को 48 सीटें मिली हैं लेकिन वह बहुमत के आंकड़े 61 को छूने के लिए 19 सीटों पर जीती अरब पार्टियों से बात कर रहे हैं।

खुद को दुनिया का इकलौता यहूदी राष्ट्र बताने वाले इजरायल में अरब मूल के नागरिकों की राजनीतिक ताकत अब निर्णायक स्थिति में पहुंच गई है। 27 अक्टूबर को हुए संसदीय चुनाव में अरब नेतृत्व वाली दो पार्टियों ने मिलकर 19 सीट जीतीं और किंगमेकर बनी हैं। यह उनका अब तक का सबसे बड़ा चुनावी प्रदर्शन है। ऐसे में इजरायल में चुनावी गणित उलझ चुका है। चुनाव के नतीजों ने नेतन्याहू के उस राजनीतिक समीकरण को बिगाड़ दिया है, जिसके दम पर वह एक बार फिर प्रधानमंत्री की कुर्सी तक पहुंचने की उम्मीद कर रहे थे। सरकार बनाने के लिए 61 सांसदों का समर्थन जरूरी है। ऐसे में अरब पार्टियों की 19 सीटें सरकार गठन की पूरी तस्वीर बदल सकती हैं। यही वजह है कि चुनाव के बाद इजरायल में सरकार गठन को लेकर राजनीतिक सौदेबाजी तेज होने की संभावना है। हालांकि, अरब पार्टियों का समर्थन हासिल करना विपक्ष के लिए भी आसान नहीं होगा। इजरायल की कई प्रमुख विपक्षी पार्टियां पहले ही अरब दलों के साथ गठबंधन करने से इनकार कर चुकी हैं। बहरहाल, इजराइल के चुनाव में इस बार सबसे ज्यादा चर्चा अरब नेतृत्व वाली राआम और जॉइंट लिस्ट की हो रही है। दोनों पार्टियों ने कुल 19 सीटें हासिल की हैं। इनमें जॉइंट लिस्ट को 11 और मंसूर अब्बास की राआम पार्टी को आठ सीटें मिली हैं। इजरायल की राजनीति में अरब नागरिकों की भूमिका लंबे समय तक सीमित रही है। देश की कुल आबादी में उनकी हिस्सेदारी करीब 20 फीसदी है। इसके बावजूद राजनीतिक प्रतिनिधित्व ताकत और सत्ता के फैसलों में उनकी भागीदारी अक्सर कमजोर रही। अरब समुदाय के एक बड़े हिस्से में चुनावी राजनीति को लेकर निराशा भी रही है। लेकिन इस बार तस्वीर बदल गई। अब इन 19 सीटों पर सभी राजनीतिक दलों की नजर रहेगी।

नेतन्याहू को सरकार बनाने के लिए इस सीटों की जरूरत पड़ सकती है। हालांकि अरब पार्टियों का उनके साथ जाना आसान नहीं माना जाता। ऐसे में विपक्ष भी इन दलों का समर्थन पाने की कोशिश कर सकता है। खैर, इस बार इजरायल में अरब मतदाताओं की रिकॉर्ड भागीदारी को फिलिस्तीनी आबादी के प्रति नेतन्याहू की नीतियों को लेकर उनके गुस्से और निराशा से जोड़कर देखा जा रहा है। चुनावी घटनाक्रम का असर अमरीकी की राजनीति पर भी पड़ सकता है। अमरीकी मध्यावधि चुनावों से पहले ईरान के खिलाफ अमरीका और इजरायल के संयुक्त युद्ध को लेकर ट्रंप प्रशासन के प्रति नाराजगी का मुद्दा अहम हो सकता है। इजरायल के केंद्रीय चुनाव आयोग के मुताबिक, इस चुनाव में कुल मतदान 77.9 फीसदी रहा, जो कई दशकों में सबसे ऊंचे स्तरों में से एक है। अरब समुदाय के इलाकों में भी मतदान को लेकर खास उत्साह दिखाई दिया। इस बदलाव के पीछे सिर्फ फिलिस्तीन का मुद्दा ही नहीं, बल्कि इजरायल के भीतर अरब नागरिकों की सुरक्षा, समान अधिकार और राजनीतिक हिस्सेदारी से जुड़े सवाल भी हैं। 27 अक्टूबर को इजरायल में सात अक्टूबर, 2023 को हमास के नेतृत्व में इजरायल पर हमास के घातक हमलों और उसके बाद गाजा, लेबनान और ईरान में हुए युद्धों के बाद पहला चुनाव था। इजरायल के लोगों ने भी इसे देश के इतिहास में सबसे महत्वपूर्ण चुनावों में से एक माना क्योंकि यह न केवल उनके नेतृत्व को फैसला कर सकता था, बल्कि ये भी तय कर सकता था कि देश अपने वर्तमान कठोर, धार्मिक-राष्ट्रवादी दिशा में चलता रहेगा या नहीं। हाल के वर्षों में यह सबसे कड़े मुकाबलों में से एक था।

विश्लेषकों का अनुमान था कि किसी भी पक्ष को स्पष्ट जीत नहीं मिलेगी। और हुआ भी ऐसा। इजरायल में 'आनुपातिक प्रतिनिधित्व' वाली चुनाव प्रणाली है। इसलिए वहां हमेशा कई पार्टियों के गठबंधन से सरकारें बनती रही हैं। खैर, चुनाव के बाद इजरायल में सरकार गठन को लेकर तीन बड़े राजनीतिक विकल्प उभर रहे हैं। पहला, गादी आइजेनकोट का विपक्षी खेमा (48 सीटें) अगर जॉइंट लिस्ट और राआम (19 सीटें) का समर्थन हासिल कर लेता है तो उसके पास 67 सीटें हो सकती हैं। ये बहुमत के आंकड़े से छह सीट ज्यादा हैं। लेकिन इस विकल्प में विपक्षी नेताओं को अरब पार्टियों के साथ काम करने पर सहमति बनानी होगी। दूसरा, विकल्प राष्ट्रीय एकता की सरकार बनाने का है। इसमें नेतन्याहू और आइजेनकोट के खेमे साथ आ सकते हैं। दोनों के पास कुल 101 सीटें हैं, लेकिन आइजेनकोट पहले ही नेतन्याहू के साथ सरकार बनाने का विरोध कर चुके हैं। इसलिए ये रास्ता भी आसान नहीं है। तीसरा, अगर कोई भी खेमा 61 सांसदों का समर्थन जुटाने में नाकाम रहता है तो इजरायल में एक बार फिर चुनाव कराने पड़ सकते हैं।

ऐसी स्थिति में नेतन्याहू की मौजूदा सरकार नई सरकार बनने तक कार्यवाहक सरकार के रूप में काम करती रहेगी। सबसे बड़ी बात ये है कि नेतन्याहू ने अरब-नेतृत्व वाले समूहों के साथ काम करने से इनकार कर दिया है, लेकिन क्या विपक्षी गठबंधन उनके साथ कोई समझौता कर सकता है? या फिर, जब तक गाजा और कब्जे वाले वेस्ट बैंक पर इजराइली सेना के हमले जारी हैं, तब तक उनके साथ सहयोग करना मुमकिन नहीं होगा? कुल मिलाकर, इजरायल के चुनाव ने नेतन्याहू को सबसे बड़ी राजनीतिक चुनौती दे दी है। उनकी पार्टी सबसे बड़ी पार्टी बनकर उभरी है, लेकिन गठबंधन बहुमत से आठ सीट दूर है। दूसरी तरफ विपक्ष के पास भी सरकार बनाने के लिए पर्याप्त संख्या नहीं है। ऐसे में अरब नागरिकों के वोट से मिली 19 सीटें इजरायल की अगली सरकार का भविष्य तय करने में अहम भूमिका निभा सकती हैं। हालांकि, अरब पार्टियों को किंगमेकर बनने के लिए स्पष्ट सीटों की संख्या नहीं, बल्कि इसे दूसरे दलों की राजनीतिक सहमति भी हासिल करनी होगी।

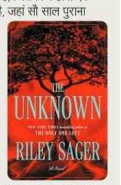
रवि शंकर
स्वतंत्र पत्रकार एवं स्तंभकार
@patrika.com
ravishankar.5107@gmail.com

अरब नागरिकों के वोट से मिली 19 सीटें इजरायल की अगली सरकार का भविष्य तय करने में अहम भूमिका निभा सकती हैं। हालांकि अरब पार्टियों को किंगमेकर बनने के लिए सिर्फ सीटों की संख्या नहीं, बल्कि दूसरे दलों की राजनीतिक सहमति भी हासिल करनी होगी।

बुक इनसाइट

द अननोन

राजी सेगर की किताब 'द अननोन' रहस्य और रोमांच से भरा उपन्यास है, जिसकी कहानी एक ऐसे द्वीप के इर्द-गिर्द घूमती है, जहां सौ साल पुराना रहस्य फिर से जीवित होता नजर आता है। कहानी की शुरुआत वर्ष 1926 में अमरीका के वरमोंट स्थित न्यू एवलॉन नाम के एक दूरदराज द्वीप से होती है। यहां रहने वाली पांच महिलाएं अचानक लापता हो जाती हैं। इस उपन्यास की खासियत इसका रहस्यमयी वातावरण और अतीत तथा वर्तमान के बीच जुड़ती कहानी है। लेखिका ने पुराने रहस्य, डर और संदेह को इस तरह जोड़ा है कि पाठक के मन में लगातार नए सवाल उठते हैं।



नेतृत्व

गोदान: सदाशयता से आगे का नेतृत्व

वास्तविक परिणामों के आधार पर भी लीडर्स संस्थाओं का करें मूल्यांकन

नेतृत्व से जुड़ा एक अत्यंत असहज सत्य यह है कि अच्छी नीयत से किए गए कार्यों के परिणाम आवश्यक नहीं कि अच्छे ही हों। संस्थाएं लोगों को पीड़ा पहुंचाती रह सकती हैं, भले ही उनमें कार्यरत अनेक व्यक्ति स्वयं को सज्जन और उत्तरदायी मानते हों। मुंशी प्रेमचंद का उपन्यास गोदान इस विरोधाभास को असाधारण संवेदनशीलता के साथ उजागर करता है। इसमें ग्रामीण भारत का ऐसा चित्र प्रस्तुत किया गया है, जहां निर्धनता, ऋणग्रस्तता, सामाजिक ऊंच-नीच और संस्थागत शोषण मिलकर उन लोगों का जीवन निर्धारित करते हैं, जिनका अपनी परिस्थितियों पर बहुत कम नियंत्रण है। उपन्यास का मुख्य पात्र होरी महतो है।

होरी की त्रासदी आज के नेतृत्वकर्ताओं को एक महत्वपूर्ण सीख देती है कि व्यक्तिगत प्रयास सदैव संरचनात्मक विषमता पर विजय नहीं पा सकते। आज के संगठन धैर्य, पहल और व्यक्तिगत उत्तरदायित्व का गुणगान करते हैं, किंतु जब संस्थागत व्यवस्थाएं ही व्यक्तियों को सफलता के लिए आवश्यक साधनों, अवसरों या निष्पक्षता से व्यवस्थित रूप से वंचित करती हों, तब ऐसी प्रशंसा खोखली हो जाती है। जो लीडर उन परिस्थितियों की पड़ताल किए बिना लोगों से बार-बार अधिक परिश्रम करने की अपेक्षा करता है, जिनमें वे काम करते हैं, वह अनजाने में स्वयं समस्या का हिस्सा बन सकता है।

धनिया का प्रेमचंद द्वारा किया गया चित्रण इस विषय को एक और आयाम देता है। उसकी व्यावहारिक बुद्धि, नैतिक साहस और अन्याय का विरोध करने की तत्परता प्रायः होरी की स्थापित सत्ता के सामने झुक जाने की प्रवृत्ति के ठीक विपरीत दिखाई देती है। उसका सामर्थ्य हमें याद दिलाता है कि नेतृत्व सदैव औपचारिक पदों या मान्य उपाधियों में ही नहीं होता। कभी-कभी सबसे स्पष्ट नैतिक विवेक उन लोगों से प्रकट होता है, जिनके पास संस्थागत शक्ति सबसे कम होती है। इसका कारण यह है कि वे प्रायः उन निर्णयों के परिणामों को सीधे भोगते हैं, जिन्हें दूसरे लोग लेते हैं। यह उपन्यास इस बात को भी उजागर करता है कि व्यवस्थाएं प्रत्येक सहभागी से जानबूझकर क्रूर व्यवहार करवाए बिना भी अन्याय को बनाए रख सकती हैं। महाजन, जमींदार, जातिगत अधिकार जताने वाले लोग और अन्य प्रभावशाली व्यक्ति ऐसी व्यवस्थाओं के भीतर काम करते हैं, जो स्थापित विशेषाधिकारों की रक्षा करती हैं। लीडर्स को संस्थाओं का मूल्यांकन केवल उन्हें संचालित करने वालों की नीयत के आधार पर नहीं, बल्कि उनके वास्तविक परिणामों के आधार पर भी करना चाहिए।

प्रेमचंद लीडर्स को परोपकार की सुखद भाषा से आगे बढ़कर संरचनात्मक निष्पक्षता के अधिक कठिन उत्तरदायित्व को स्वीकार करने की चुनौती देते हैं। नेतृत्व की कसौटी केवल यह नहीं है कि हम पीड़ा से जूझ रहे लोगों की कितनी उदारता से सहायता करते हैं, बल्कि यह भी है कि उस पीड़ा को जन्म देने वाली परिस्थितियों का सामना हम कितने साहस के साथ करते हैं।



प्रो. हिमांशु राय
निदेशक
आइआइएम इंदौर
@patrika.com

चीन की वांगशियान घाटी
प्रकृति ने धरती पर उतारा परीलोक



चीन की वांगशियान घाटी किसी जादुई दुनिया जैसी दिखाई देती है। इस घाटी में अपनी पारंपरिक शैली में बने लकड़ी के घर, संकरी गलियां, झरने और हरियाली इसे अनूठा बनाते हैं। शाम ढलते ही यहां की इमारतों पर जगमगाती रोशनी इसे परीलोक में बदल देती है। पहाड़ी ढलानों पर बने घर ऐसे प्रतीत होते हैं, मानो बद्दलों से ही उभर आए हों। नीचे बहती जलधाराएं और आसपास फैली प्राकृतिक सुंदरता इस दृश्य को और आकर्षक बनाती है। यह घाटी लोगों में एक तरह का सम्मोहन पैदा करती है।

दृष्टिकोण अमरीका में मध्यावधि चुनाव तय करेंगे भविष्य

ट्रंप की राजनीतिक ताकत और भारत की 'अमरीका नीति' की कसौटी

तीन नवंबर को अमरीका में मध्यावधि चुनाव का मतदान होना है और ट्रंप ने अपनी पार्टी के प्रचार में कोई कसर नहीं छोड़ी है। यहां तक कि उन्होंने इस चुनाव को सीधे-सीधे अपनी लोकप्रियता से जोड़ दिया है और उसी आधार पर वोट भी मांग रहे हैं। ट्रंप के आक्रामक प्रचार का एक महत्वपूर्ण कारण यह भी है कि इन चुनावों का परिणाम यह तय करेगा कि ट्रंप कितने शक्तिशाली रहेंगे क्योंकि यदि रिपब्लिकन पार्टी दोनों सदनों में (हाउस ऑफ कांग्रेस और सीनेट) बहुमत खो बैठती है तो न केवल उनकी घरेलू राजनीति आहत होगी बल्कि इसका असर ट्रंप की विदेश नीतियों पर होगा। अभी के ताज़ा सर्वेक्षणों की मानें तो हाउस ऑफ कांग्रेस में डेमोक्रेटिक पार्टी को बहुमत मिलने की संभावनाएं अधिक दिखाई पड़ती हैं और सीनेट में भी भले ही ट्रंप की रिपब्लिकन पार्टी का बहुमत हासिल करने का रास्ता इतना मुश्किल न हो लेकिन आसान तो कतई नहीं है। जहां एक ओर सीनेट में बहुमत हासिल करने की विफलता ट्रंप के लिए न्यायिक व अन्य वरिष्ठ सरकारी नियुक्तियों में समस्या पैदा करेगी, वहीं हाउस ऑफ कांग्रेस में भी यदि बहुमत हासिल नहीं कर पाए तो न केवल ट्रंप प्रशासन के सरकारी खर्च पर लगाम लगेगी बल्कि विपक्षी पार्टियों की नेतृत्व वाली हाउस कमेटियों के माध्यम से ट्रंप प्रशासन को अधिक निगरानी और जांच का सामना करना पड़ेगा।

यह कहना गलत नहीं होगा कि यह नतीजे ट्रंप के शेष 2 वर्ष की दिशा और दशा तय करने वाले होंगे। ट्रंप ने राष्ट्रपति के रूप में अपने दूसरे कार्यकाल में अपनी विदेश नीति को मुख्यतः दबाव के माध्यम से ही चलाया है और यदि ट्रंप बहुमत खो देते हैं तो निश्चित ही उनका आत्मविश्वास आहत होगा और बहुमत बना रहा तो वे संभवतः और आक्रामक हो जाएंगे। इसमें एक समझने योग्य पहलू यह भी है कि यदि ट्रंप मध्यावधि चुनावों में दोनों ही सदनों में बहुमत बचा पाने में विफल रहे तो भारत को भी ट्रंप के दबाव से राहत महसूस हो सकती है फिर चाहे वह ट्रेड वार्ता में हो, रूस से खरीद का रहे तेल के संदर्भ में या एच1 बी वीजा का मुद्दा। इससे यह बात साफ है कि कम से कम अब मध्यावधि चुनावों का परिणाम नजदीक है और ट्रंप कार्यकाल के 2 साल मात्र शेष हैं, भारत ट्रंप प्रशासन के साथ भले ही काम करे लेकिन अपनी अमरीका नीति को ट्रंप प्रशासन तक सीमित नहीं रखना चाहिए। हाल में अमरीकी विदेश मंत्री मार्को रूबियो की भारत यात्रा को भी इसी व्यापक संदर्भ में समझने की आवश्यकता है। उनकी यात्रा दर्शाती है कि भारत-अमरीका संबंध ऊर्जा, निवेश, विनिर्माण और निजी क्षेत्र के सहयोग तक विस्तृत हो रहे हैं। हालांकि, अमरीकी मध्यावधि चुनाव इन संबंधों की राजनीतिक पृष्ठभूमि को प्रभावित कर सकते हैं। यदि रिपब्लिकन पार्टी कांग्रेस के किसी एक या दोनों सदनों में अपना बहुमत खो देती है, तो ट्रंप प्रशासन की विधायी प्राथमिकताओं और आर्थिक नीतियों को आगे बढ़ाना अधिक कठिन हो सकता है। इसका अर्थ यह नहीं होगा कि अमरीका की भारत नीति स्वतः बदल जाएगी, लेकिन भारत के लिए यह समझना आवश्यक होगा कि वाशिंगटन में राजनीतिक शक्ति-संतुलन बदलने के बावजूद द्विपक्षीय साझेदारी की संस्थागत निरंतरता कैसे बनाए रखी जाए। ध्यान देने योग्य बात यह भी है कि रूबियो की यात्रा मुंबई में थी, दिल्ली नहीं। पिछले वर्ष ब्रिटेन के तत्कालीन प्रधानमंत्री कीर स्टार्मर भी दिल्ली की बजाय मुंबई ही आए। यह भी एक सोचनीय विषय है कि भारत की आर्थिक क्षमता उसकी कूटनीतिक प्रासंगिकता का भी हिस्सा हो सकती है। भारत में विदेशी राष्ट्राध्यक्षों का उद्योग जगत के प्रमुख चेहरों से मिलना कोई नई परंपरा नहीं है। बदलती वैश्विक अर्थव्यवस्था में ऐसे संवादों का महत्व बढ़ रहा है, जहां ऊर्जा, रक्षा, तकनीक और निवेश जैसे विषय अब केवल सरकारी समझौतों से नहीं, बल्कि निजी क्षेत्र की क्षमताओं और भागीदारी से भी तय हो रही हैं। अंतरराष्ट्रीय कूटनीति में निजी क्षेत्र व उद्योगपतियों का बढ़ता प्रभाव कितना प्रभावी या हानिकारक सिद्ध हो सकता है, इसको लेकर भी हर पक्ष की अपनी धारणाएं हैं। यह अमरीकी आर्थिक कूटनीति की उस प्रवृत्ति को दर्शाता है जिसमें रणनीतिक संबंधों के साथ-साथ निवेश, ऊर्जा और व्यावसायिक हितों को भी प्राथमिकता दी जाती है, लेकिन भारत के लिए यह कितना अनुकूल है, अभी कहा नहीं जा सकता। इन सब में एक बात तय है, मध्यावधि चुनाव का परिणाम जो भी हो, भारत की अमरीका नीति का माध्यम जो भी हो, चाहे वह राजनीतिक कूटनीति पर निर्भर हो या भारत की आर्थिक क्षमता पर, लेकिन किसी एक राष्ट्रपति प्रशासन पर निर्भर नहीं होनी चाहिए, फिर वे ट्रंप हों या कोई और।



द्रोण यादव
अमरीका बनाम अमरीका पुस्तक के लेखक
@patrika.com
writers@in.patrika.com

साइबर सुरक्षा साइबर हमले या आशंका के कारण सरकार का कामकाज ठप न पड़े, यह सुनिश्चित करने की चुनौती

सुरक्षित डिजिटल व्यवस्था ही शासन की बुनियादी जरूरत

डिजिटल इंडिया की सफलता इस भरोसे पर टिकी है कि सरकारी सूचनाएं सुरक्षित हैं। तकनीक के सहारे चलने वाला प्रशासन हर परिस्थिति में काम करता रहेगा, लेकिन हाल ही राजस्थान में करीब 59 हजार सरकारी ई-मेल खातों की सेवाएं बाधित होने की खबर ने इस भरोसे के सामने गंभीर सवाल खड़े कर दिए हैं। अधिकारियों को आधिकारिक संवाद के लिए वॉट्सएप जैसे वैकल्पिक माध्यमों का सहारा लेना पड़ा। यह स्थिति बताती है कि साइबर हमले की आशंका भी सरकारी कामकाज को प्रभावित कर सकती है। सरकारी ई-मेल अब केवल संदेश भेजने का माध्यम नहीं हैं। आदेश, विभागीय निर्देश, फाइलों का आदान-प्रदान और प्रशासनिक समन्वय का बड़ा हिस्सा इसी पर निर्भर है। यदि सुरक्षा के लिहाज से ई-मेल व्यवस्था बंद करनी पड़े तो असर किसी एक विभाग तक सीमित नहीं रहता। निर्णय प्रक्रिया धीमी होती है और जरूरी सूचनाओं का प्रवाह प्रभावित होता है।

सवाल है कि जब शासन का इतना बड़ा हिस्सा डिजिटल माध्यमों पर निर्भर हो चुका है तो क्या उसकी सुरक्षा व्यवस्था भी उसी अनुपात में मजबूत हुई है? राजस्थान के मामले में 'स्कारलेट' नाम से सक्रिय एक हैकर समूह ने सरकारी और पुलिस तंत्र से जुड़े डेटा तक पहुंच बनाने का दावा किया था। समूह के अनुसार, उसने 5,926 मेलबॉक्स, 86.3 लाख ई-मेल, 70,301 पहचान संबंधी रिकॉर्ड और 59,460 मोबाइल नंबर हासिल किए। हालांकि, इन दावों की प्रामाणिकता और डेटा चोरी की वास्तविक सीमा की स्वतंत्र पुष्टि नहीं हुई है। राजस्थान पुलिस की साइबर इकाई ने जांच शुरू की और एहतियातन ई-मेल सेवाएं बंद की गईं। राज्य के सूचना प्रौद्योगिकी विभाग की ओर से सरकारी डेटा सुरक्षित होने की बात भी कही गई। इसलिए इस घटना को प्रमाणित बड़े डेटा लीक के रूप में देखना जल्दबाजी होगी। लेकिन हजारों सरकारी खातों की सेवाएं बाधित होना अपने आप में गंभीर प्रशासनिक चुनौती है। साइबर अपराध का स्वरूप अब बहुत बदल चुका है। हमलावरों का निशाना केवल वेबसाइट नहीं, बल्कि सरकारी डेटाबेस, ई-मेल सर्वर, पुलिस रिकॉर्ड और नागरिकों की निजी जानकारी भी है। रैनसमवेयर के जरिये डेटा लॉक कर फिरौती मांगी जाती है, जबकि फिशिंग के माध्यम से अधिकारियों को फर्जी ई-मेल या लिंक भेजकर उनके पासवर्ड हासिल किए जाते हैं। कई बार किसी एक कर्मचारी के कंप्यूटर या मोबाइल में सेंध लगाकर पूरे विभागीय नेटवर्क तक पहुंचने की कोशिश होती है। साइबर सुरक्षा अब केवल तकनीकी विभाग का विषय नहीं, बल्कि प्रशासनिक विश्वसनीयता और राष्ट्रीय सुरक्षा का प्रश्न है। खतरे की गंभीरता सरकारी आंकड़ों से भी समझी जा सकती है। संसद में दी गई जानकारी के अनुसार भारतीय कंप्यूटर आपात प्रतिक्रिया दल यानी सीईआरटी-आइएन ने वर्ष 2021 में 14.02 लाख, 2022 में 13.91 लाख, 2023 में 15.92 लाख, 2024 में 20.41 लाख और 2025 में 29.44 लाख साइबर सुरक्षा घटनाएं दर्ज कीं। ये आंकड़े सभी प्रकार की रिपोर्ट की गई घटनाओं के हैं, केवल सरकारी संस्थानों पर सफल हमलों के नहीं। फिर भी इनका बढ़ता दायरा बताता है कि साइबर जोखिम लगातार गंभीर हो रहा है।

सरकारी आदेशों और संवेदनशील दस्तावेजों के लिए ऐसी व्यवस्था जरूरी है जिसमें संदेश की प्रमाणिकता, भेजने और पाने वाले का रिकॉर्ड तथा जरूरत पड़ने पर उसकी जांच संभव हो। हर राज्य के पास सुरक्षित वैकल्पिक सरकारी संचार प्रणाली होनी चाहिए, ताकि मुख्य ई-मेल सर्वर बंद होने पर भी प्रशासन का काम न रुके। आने वाले समय में चुनौती और जटिल होगी। एआइ की मदद से किसी अधिकारी की आवाज की नकल, उसके नाम से फर्जी वीडियो और विश्वसनीय दिखने वाले संदेश तैयार किए जा सकते हैं। डीपफेक के जरिये भ्रम फैलाना और फर्जी निर्देश जारी करना आसान हुआ है। कुछ साइबर हमले आर्थिक लाभ के लिए होते हैं, जबकि कुछ संगठित या राज्य-समर्थित समूहों से जुड़े हो सकते हैं। समाधान केवल हमले के बाद कार्रवाई करने में नहीं, बल्कि पहले से तैयारी रखने में है। हर विभाग के डिजिटल ढांचे का नियमित और स्वतंत्र सुरक्षा ऑडिट होना चाहिए। ई-मेल सर्वर, पोर्टल, क्लाउड सेवाओं और निजी कंपनियों के साथ साझा नेटवर्क की भी जांच हो। संवेदनशील सरकारी खातों पर मल्टी-फैक्टर ऑथेंटिकेशन अनिवार्य किया जाए। कर्मचारियों को नियमित प्रशिक्षण मिले, क्योंकि कई बार एक संदिग्ध लिंक पर क्लिक करना पूरे विभाग के लिए खतरा बन जाता है। इसके साथ ही सुरक्षित बैकअप और आपदा के समय सेवाएं बहाल करने की स्पष्ट योजना जरूरी है।

राजस्थान की घटना में डेटा चोरी की पुष्टि होती है या नहीं, यह जांच का विषय है, लेकिन सरकारी ई-मेल व्यवस्था के बाधित होने से जो सवाल उठे हैं, उन्हें नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। साइबर सुरक्षा पर खर्च को अतिरिक्त बोझ नहीं, बल्कि शासन की बुनियादी जरूरत मानना होगा। जिस तरह सड़क, बिजली और संचार व्यवस्था के बिना आधुनिक प्रशासन नहीं चल सकता, उसी तरह सुरक्षित डिजिटल ढांचे के बिना डिजिटल शासन भी अधूरा है। चुनौती केवल साइबर हमले रोकने की नहीं, बल्कि यह सुनिश्चित करने की है कि किसी हमले या उसकी आशंका के कारण सरकार का कामकाज ठप न पड़े। डिजिटल आत्मनिर्भरता की असली कसौटी यही है कि तकनीक पर भरोसा भी कायम रहे और उस भरोसे की रक्षा करने की क्षमता भी हमारे पास हो।



मानस गर्ग
साइबर सिक्योरिटी एक्सपर्ट
@patrika.com
manasgargv6@gmail.com

सुरक्षा के लिहाज से ई-मेल बंद करनी पड़े तो असर किसी एक विभाग तक सीमित नहीं रहता। निर्णय प्रक्रिया धीमी होती है व जरूरी सूचनाओं का प्रवाह प्रभावित होता है। सवाल है कि जब शासन का इतना बड़ा हिस्सा डिजिटल माध्यमों पर निर्भर हो चुका है तो क्या सुरक्षा भी उसी अनुपात में मजबूत हुई है?

आपकी बात

ऑनलाइन गेमिंग से दूर रखना होगा

पंचकुला में कक्षा तीन के छात्र का कैंची की छात्रा को घायल करने जैसी घटना चिंताजनक है। मासूमियत और खेलकूद की उम्र में इस तरह हिंसक प्रवृत्ति समाज के लिए खतरे का संकेत है। पारिवारिक वातावरण, सामाजिक परिवेश, मानसिक अस्थिरता और सोशल मीडिया का प्रभाव सामूहिक रूप से जिम्मेदार है। बच्चों को मोबाइल और ऑनलाइन गेमिंग से दूर रखना होगा। - **दिनेश विश्नोई,** लोहावट

गुस्से की बढ़ती प्रवृत्ति चिंताजनक

बच्चों में बढ़ती आक्रामकता, हिंसा और गुस्से की घटनाएं सोचने पर मजबूर करती हैं। बचपन मासूमियत, हंसी-ठिठोली और सीखने की उम्र होती है, वहां गुस्से और बदले की भावना का होना चिंताजनक है। समय रहते इस दिशा में सही कदम उठाए जाएं। जरूरत यह है कि समाज का हर वर्ग मिलकर बच्चों को सही दिशा और सुरक्षित वातावरण प्रदान करे। - **कमल कुमार कुमावत,** गोविंदगढ़

समसामयिक विषयों पर पाठकों के विचार आमंत्रित हैं। चुनिंदा विचार प्रकाशित किए जाएंगे।
ईमेल करें: edit@epatrika.com

चिंतन

एक बार फिर सड़क की राजनीति पर उतरे दल

देश में एक बार फिर सत्ता पक्ष और विपक्षी दल सड़क पर सियासी जंग लड़ने उतर आए हैं। रविवार का दिन राजनीतिक सरगर्मी से भरा रहा। कांग्रेस के नेतृत्व में इंडिया गठबंधन ने दिल्ली के रामलीला मैदान में 'वोट बचाओ, देश बचाओ' रैली कर केंद्र सरकार और चुनाव आयोग पर हमला बोला। वहीं, भाजपा ने इसके जवाब में देशभर में 'लोकतंत्र बचाओ, अराजकता हटाओ' मार्च निकाले। दिल्ली में केंद्रीय मंत्री जेपी नड्डा ने मोर्चा संभाला तो हरियाणा के रोहतक में भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष नितिन नवीन ने पदयात्रा का नेतृत्व किया। भाजपा ने कांग्रेस पर आरोप लगाया कि उसने 1984 के सिख विरोधी दंगों की बरसी के दिन रामलीला मैदान में रैली आयोजित कर पीड़ित परिवारों की भावनाओं की अनदेखी की है। भाजपा के मार्च में दंगा पीड़ित परिवारों और सिख समुदाय के लोगों की भागीदारी भी इसी मुद्दे को रेखांकित करने के लिए थी। वहीं, नितिन नवीन ने रोहतक में कांग्रेस पर वोट चोरी को अपनी विरासत बनाने का आरोप लगाया और राहुल गांधी को विदेशी ताकतों की टूलकिट बनकर काम करने वाला बताया। जेपी नड्डा ने भी कांग्रेस पर सिख विरोधी हिंसा के पीड़ितों को भुलाकर राजनीति करने का आरोप लगाया। दूसरी ओर राहुल गांधी ने चुनाव आयोग और मुख्य चुनाव आयुक्त ज्ञानेश कुमार पर गंभीर आरोप लगाते हुए उन्हें पद से हटाने और जेल भेजने की चेतावनी दी। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को लेकर भी उन्होंने तीखी टिप्पणी की। इस तरह पूरे दिन दोनों खेमों के बीच राजनीतिक तल्खी और आरोप-प्रत्यारोप का दौर चलता रहा। विपक्ष का काम केवल सरकार का विरोध करना नहीं, बल्कि जनता के सवालों को मजबूती से उठाना और सरकार को जवाबदेह बनाना भी है। अब सवाल यह है कि क्या जिम्मेदारी केवल हंगामे, नारेबाजी और सड़क पर शक्ति प्रदर्शन से ही पूरी हो सकती है। कोई सीजेपी जैसी नई पार्टी ऐसा करे तो समझ आता है, लेकिन देश की सबसे पुरानी पार्टी कांग्रेस से अधिक परिपक्व राजनीतिक आचरण की अपेक्षा स्वाभाविक है। 18वीं लोकसभा में इंडिया गठबंधन के करीब 240 सांसद हैं। इतनी बड़ी संसदीय ताकत का उपयोग सदन में महंगाई, बेरोजगारी, किसानों, शिक्षा और चुनावी पारदर्शिता जैसे गंभीर मुद्दों पर सार्थक बहस के लिए होना चाहिए। संसद के बाहर प्रतीकात्मक कार्यवाही करने के बजाय विपक्ष को तथ्यों और प्रमाणों के साथ सदन में सरकार को घेरना चाहिए। लोकतंत्र का मजाक नहीं, जवाबदेही तय करना विपक्ष की असली जिम्मेदारी है। वहीं, सत्ता पक्ष भी अपनी जिम्मेदारी से बच नहीं सकता। संसद में विपक्ष को पर्याप्त अवसर देना, उसके सवालों का तथ्यात्मक जवाब देना और महत्वपूर्ण मुद्दों पर चर्चा के लिए तैयार रहना सरकार का दायित्व है। संवैधानिक संस्थाओं की विश्वसनीयता बनाए रखना सत्ता पक्ष और विपक्ष दोनों के हित में है। विपक्ष को भी संवैधानिक पदों पर बैठे व्यक्तियों के खिलाफ धमकी भरी भाषा के बजाय निर्धारित कानूनी प्रक्रिया का सम्मान करना चाहिए। यह समझना होगा कि संसद देश की जनता की आकांक्षाओं, अपेक्षाओं और समस्याओं पर चर्चा का सर्वोच्च लोकतांत्रिक मंच है। सदन में कामकाज बाधित करने से जितना नुकसान विपक्ष की भूमिका को होता है, उतनी ही जवाबदेही सरकार की भी बनती है, यदि वह चर्चा और संवाद के रास्ते बंद करती है। दोनों पक्षों को अपनी राजनीतिक सुविधा से ऊपर उठकर संसदीय परंपराओं का सम्मान करना होगा।



मुद्दा
प्रमोद भार्गव

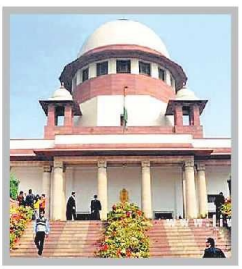
दवा कंपनियों पर लगाम की तैयारी

दवा उत्पादक फार्मेसियों की अनैतिक मार्केटिंग पर सर्वोच्च न्यायालय कड़ी निगरानी रखने के उपाय को उत्सुक नजर आ रहा है। न्यायालय द्वारा दिए एक आदेश के बाद केंद्र सरकार ने फार्मा कंपनियों की कारोबारी गतिविधियों और तौर-तरीकों की समीक्षा और निगरानी के लिए नीति आयोग के सदस्य डॉ. एम श्रीनिवास की अध्यक्षता में तीन सदस्यीय समिति गठित कर दी है। यह समिति कंपनियों द्वारा दवा के अनैतिक कारोबार को बढ़ावा देने वाले उपायों की असरकारी समीक्षा करेगी। साथ ही निगरानी तंत्र को पुख्ता बनाने के लिए सिफारिशें भी करेगी। इन उपायों में चिकित्सकों को दिए जाने वाले प्रलोभनों की भी समीक्षा होगी। अदालत में इसी परिप्रेक्ष्य में 'फेडरेशन ऑफ मेडिकल एंड सेल्स रिप्रेजेंटेटिव एसोसिएशन ऑफ इंडिया' की एक याचिका भी लंबित है। इसमें अनुरोध किया है कि प्रभावी कानून बनने तक फार्मा कंपनियों की अनैतिक मार्केटिंग पर नियंत्रण और नियमन के लिए दिशा-निर्देश तय कर दिए जाएं? क्योंकि मौजूदा व्यवस्था में बड़ी असामानता है।

दवा उत्पादक फार्मेसियों की अनैतिक मार्केटिंग पर सर्वोच्च न्यायालय कड़ी निगरानी रखने के उपाय को उत्सुक नजर आ रहा है। न्यायालय द्वारा दिए एक आदेश के बाद केंद्र सरकार ने फार्मा कंपनियों की कारोबारी गतिविधियों और तौर-तरीकों की समीक्षा और निगरानी के लिए नीति आयोग के सदस्य डॉ. एम श्रीनिवास की अध्यक्षता में तीन सदस्यीय समिति गठित कर दी है। यह समिति कंपनियों द्वारा दवा के अनैतिक कारोबार को बढ़ावा देने वाले उपायों की असरकारी समीक्षा करेगी। साथ ही निगरानी तंत्र को पुख्ता बनाने के लिए सिफारिशें भी करेगी। इन उपायों में चिकित्सकों को दिए जाने वाले प्रलोभनों की भी समीक्षा होगी। अदालत में इसी परिप्रेक्ष्य में एक याचिका भी लंबित है।

इसके तहत ऐसे प्रलोभन स्वीकार करने वाले चिकित्सकों के लिए कार्यवाही का प्रावधान तो है, लेकिन उन्हें प्रलोभन देने वाली दवा कंपनियों को नियंत्रित या दंडित करने के लिए समान वैधानिक व्यवस्था नहीं है। अतएव कंपनियां अपने उत्पादों के प्रचार के लिए चिकित्सकों को महंगे उपहार और सेमिनार के बहाने देश-विदेश की पंचतारा हवाई यात्राएं अपने खर्चे पर करती हैं। अतः इसका असर रोगी पर पड़ता है और वे महंगी दवाएं खरीदने के लिए लाचार बने रहते हैं। इस समिति की रिपोर्ट दो माह के भीतर आनी है।

कुछ समय पहले कंपनी मामलों के मंत्रालय की एक सर्वे रिपोर्ट से सरकार को आगाह किया था कि दवाएं आम आदमी की पहुंच से जानबूझकर बाहर की जा रही हैं। इस रिपोर्ट ने तय किया कि दवाओं की महंगाई का कारण दवा में लगने वाली सामग्री का महंगा होना नहीं है, बल्कि दवा कंपनियों का मुनाफे की हवस में बदल जाना है। इस लालच के चलते कंपनियां राष्ट्रीय औषधि मूल्य निर्धारण प्राधिकरण (एनपीपीए) के नियमों का भी पालन नहीं करतीं हैं। इसके मुताबिक दवाओं की कीमत लागत से मात्र सौ गुनी ज्यादा रख सकते हैं। लेकिन दवाओं की कीमत 1023 फीसदी तक ज्यादा वसूली जा रही है। ग्लैक्सोस्मिथलाईन, फाइजर, रैनबैक्सी, डॉ रेड्डी लैब्स और एलेमबिक जैसी नामी-गिरामी दवा कंपनियां भी दो सौ से पांच सौ गुना ज्यादा कीमत अपने दवा उत्पादों की रख रही हैं। दवा कंपनियों से जुड़ी एक विडंबना यह भी देखने में आती है कि दवा कंपनियों ने सरकार द्वारा दी उत्पाद शुल्क में छूट का लाभ तो पूरा लिया, लेकिन दवाओं की कीमतों में कटौती नहीं की। इस तरह से सरकार और ग्राहकों को करोड़ों रुपए का चूना लगाया जा रहा है। ईसान की जीवन-रक्षा से जुड़ा दवा कारोबार देश में तेजी से मुनाफे की अमानवीय व अनैतिक हवस में बदलता जा रहा है। चिकित्सकों को महंगे उपहार देकर रोगियों के लिए महंगी और गैर जरूरी दवाएं लिखवाने का प्रचलन लाभ का धंधा हो गया है। बेमतलब की अनेक जांचें भी केवल मुनाफे के लिए कराई जा रही हैं। ज्यादातर डॉक्टर पर्चे में वहीं दवा



लिखते हैं, जो उन्हें दवा कंपनियों के एमआर समझाते हैं और कमीशन के साथ उपहार देते हैं। जबकि चिकित्सा का पेशा जीवन रक्षा का धंधा है। वह मनुष्यता की संवेदना और मर्म की सुरक्षा का नैतिक व्यवसाय है। एक लाचार मरीज चिकित्सक के पास स्वास्थ्य लाभ लेने की उम्मीद से जाता है, न कि दवा उद्योग के लालचों को बढ़ावा देने की दृष्टि से? किंतु पैसा कमाने की अनैतिक होड़ का ही परिणाम है कि रोगी अब चिकित्सक को धरती का भगवान मानने से मुकर रहा है। इसी संदर्भ में इस याचिका से जुड़े न्यायामूर्ति संदीप मेहता को कहना पड़ा था कि मामला एक माह पहले का ही है।

एक दवा डीलर की पत्नी का इलाज हो रहा था। कीमो में काम आने वाला इंजेक्शन 11 हजार रुपये का था। लेकिन निजी अस्पताल में 1.30 लाख रुपये में दिया जा रहा था। दवा डीलर ने अस्पताल से निवेदन किया कि इंजेक्शन बाहर से लाने दें, लेकिन मना कर दिया। इसी याचिका की सुनवाई के दौरान अदालत ने कैंसर की 2700 रुपये की एक दवा को 27 हजार में बेचे जाने पर 'डकैती' की संज्ञा दी थी। ऐसी डकैती की कीमत आम मरीज चुका रहे हैं। फार्मा कंपनियां किसी बाध्यकारी कानून को अमल में लाने में भी रोड़ा अटकाने का काम करती हैं। क्योंकि ये अपना कारोबार विज्ञापनों व चिकित्सकों को मुनाफा देकर ही फैलाये हुए हैं। चूंकि दवा का निर्माण एक विशेष तकनीक के तहत किया जाता है और रोग व दवा विशेषज्ञ चिकित्सक ही पर्चे पर एक निश्चित दवा लेने को कहते हैं।

दरअसल इस तथ्य की पृष्ठभूमि में यह मकसद अंतर्निहित है कि रोगी और उसके अभिभावक दवाओं में विलय रसायनों के असर व अनुपात से अनभिज्ञ होते हैं, इसलिए वे दवा अपनी मर्जी से नहीं ले सकते। इस कारण चिकित्सक की लिखी दवा लेना जरूरी होती है। लिहाजा चिकित्सक मरीज की इस लाचारी का लाभ पूरे देश में धड़ल्ले से उठा रहे हैं। एंटीबायोटिक दवाओं ने जहां अनेक संक्रामक रोगों से मानव जाति को बचाया, वहीं दुष्परिणाम स्वरूप शरीर की प्रतिरोधात्मक शक्ति को कमजोर भी किया। जिस तरह मानव शरीर विभिन्न प्राकृतिक तापमान, वायुमंडल व भौगोलिक परिस्थिति और पर्यावरण के अनुकूल अपने को ढाल लेता है, उसी तरह हमारे धरती पर अस्तित्व के समय से ही सूक्ष्मजीव और उनके विरुद्ध शरीर की प्राकृतिक प्रतिरोधात्मक शक्ति का भी परिवर्तित विकास होता रहा है। कुदरत का कमाल देखिए, एंटीबायोटिक दवाओं ने दोनों के बीच के संतुलन को गड़बड़ा दिया, लिहाजा एंटीबायोटिक दवाएं जब-जब सूक्ष्मजीवों पर मारक साबित हुईं, तब-तब जीवाणु और वीषाणुओं ने अपने को और ज्यादा शक्तिशाली बना लिया। गोया, महाजीवाणु कभी नष्ट नहीं होने वाले रक्तबीजों की श्रेणी में आ गए हैं। इसलिए आज वैज्ञानिकों को कहना पड़ रहा है कि एंटीबायोटिक दवाओं की मात्रा पर अंकुश लगना चाहिए।

दवा कंपनियों की मुनाफे की हवस और चिकित्सकों का बढ़ता लालच, इसमें बाधा बने हुए हैं। चिकित्सक सर्दी-जुकाम और पेट के साधारण रोगों तक के लिए बड़ी मात्रा में एंटीबायोटिक दवाएं दे देते हैं। ऐलोपैथी चिकित्सा पद्धति के मुनाफाखोरों ने प्रायोजित शोधों के मार्फत आयुर्वेद, यूनानी, प्राकृतिक चिकित्सा और होम्योपैथी को अवैज्ञानिक करार हाशिए पर डालने का काम भी शड्यंत्रपूर्वक किया है। बावजूद सूक्ष्मजीव कायांतरण के नए-नए रूपों में सामने आना शुरू हो गए हैं, तब से एंटीबायोटिक दवाओं की सीमा रेखांकित जरूर की जाने लगी है, किंतु मुनाफे की हवस इस मर्यादा को लांघ जाने का उपक्रम करती ही रहती है।

(लेखक वरिष्ठ स्तंभकार हैं। ये उनके अपने विचार हैं।)
लेख पर अपनी प्रतिक्रिया haribhoomi@gmail.com पर दे सकते हैं।

ग्राम स्वराज योजना



डॉ. अशोक कुमार जायसवाल

आत्मनिर्भर पंचायतों से विकसित भारत की ओर

ठाकुर प्यारेलाल राज्य पंचायत एवं ग्रामीण विकास संस्थान, निमोरा, रायपुर (छत्तीसगढ़) महात्मा गांधी के ग्राम स्वराज की परिकल्पना को साकार करने और वर्ष 2047 तक विकसित भारत के संकल्प को पूरा करने की दिशा में प्रधानमंत्री विकसित ग्राम स्वराज योजना एक महत्वपूर्ण पहल है। सक्षती योजना, सक्षता विकास और सक्षता विश्वास की भावना को केंद्र में रखकर तैयार यह योजना ग्रामीण शासन व्यवस्था को नई दिशा देने के साथ पंचायतों को अधिक सक्षम, जवाबदेह और आत्मनिर्भर बनाने का मार्ग प्रशस्त करेगी। केंद्रीय मंत्रिमंडल ने प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में वर्ष 2026-27 से 2030-31 तक योजना के क्रियान्वयन को मंजूरी दी है। इसके लिए कुल 7,395.55 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है, जिसमें 4,869.55 करोड़ रुपये केंद्रीय अंश और 2,526.07 करोड़ रुपये राज्यों के रूप में शामिल हैं। यह योजना विकसित भारत की राष्ट्रीय परिकल्पना के अनुरूप ग्रामीण शासन व्यवस्था में अगली पीढ़ी के सुधारों की पहल है। इसका प्रमुख उद्देश्य ग्राम पंचायतों को स्थानीय जरूरतों, उपलब्ध संसाधनों और राष्ट्रीय विकास प्राथमिकताओं के अनुरूप समग्र विकास योजनाएं तैयार करने में सक्षम बनाना है। इसके तहत सहभागी और साक्ष्य आधारित नियोजन को बढ़ावा देते हुए ई-ग्राम स्वराज पोर्टल के माध्यम से प्रतिवर्ष लगभग 2.55 लाख समग्र ग्राम पंचायत विकास योजनाएं तैयार करने में सहायता दी जाएगी।

ग्रामीण विकास के लिए मजबूत नियोजन की जरूरत: पिछले छह दशकों में पंचायती राज मंत्रालय द्वारा किए गए राष्ट्रीय सुधारों और बजटों ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूती देने, सार्वजनिक सेवाओं में सुधार लाने और ग्रामीण विकास के लए अवसर पैदा करने का आधार तैयार किया है। इन अवसरों का लाभ गांवों तक पहुंचाने के लिए जमीनी स्तर पर जागरूकता, जनभागीदारी और बेहतर स्थानीय नियोजन आवश्यक है। 16वें वित्त आयोग द्वारा वर्ष 2026-27 से 2030-31 की अवधि में ग्रामीण स्थानीय निकायों के लिए लगभग 4.35 लाख करोड़ रुपये की सिफारिश किए जाने से महत्वपूर्ण पंचायतों की जिम्मेदारी और बढ़ जाती है। अब आवश्यकता इस बात की है कि पंचायत राष्ट्रीय प्राथमिकताओं, केंद्र एवं राज्य सरकार की योजनाओं, उपलब्ध वित्तीय संसाधनों और स्थानीय आकांक्षाओं को एकीकृत करते हुए विकास का स्पष्ट खाका तैयार करें।

ग्राम पंचायतें बनेंगी विकास की धुरी: इस योजना में ग्राम पंचायतों को स्थानीय नियोजन और विकास के बदलावों के समन्वय का प्रमुख केंद्र बनाया गया है। पंचायती गांवों की प्राथमिकताओं, उपलब्ध संसाधनों और विकास की चुनौतियों को ध्यान में रखकर योजनाएं तैयार कर सकेंगी। इससे गांव केवल सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन की इकाई नहीं रहेंगे, बल्कि अपने विकास की दिशा और प्राथमिकताएं तय करने वाले सक्षम स्थानीय निकाय के रूप में उभरेंगे।

वित्तीय आत्मनिर्भरता और पारदर्शिता पर जोर: किसी भी पंचायत की मजबूती केवल उसे मिलने वाले सरकारी अनुदान से तय नहीं होती, बल्कि उसकी अपनी आय अर्जित करने की क्षमता भी उतनी ही महत्वपूर्ण होती है। प्रधानमंत्री विकसित ग्राम स्वराज योजना पंचायतों को स्वयं के राजस्व स्रोत बढ़ाने, वित्तीय प्रबंधन सुधारने और उपलब्ध निधियों का प्रभावी उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित करेगी।

योजना के तहत ऑनलाइन लेखांकन, ऑडिट और सार्वजनिक सूचना के प्रकटीकरण को सुनिश्चित करने पर जोर दिया जाएगा। इससे पंचायतों के कामकाज में पारदर्शिता बढ़ेगी, वित्तीय अनियमितताओं पर अंकुश लगाने में मदद मिलेगी और विकास कार्यों के प्रति जवाबदेही मजबूत होगी।

विभागीय समन्वय से योजनाओं का बेहतर क्रियान्वयन : ग्रामीण विकास की सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक विभिन्न विभागों की योजनाओं के बीच समन्वय का अभाव है। कई बार संसाधन उपलब्ध होने के बावजूद विभागीय तालमेल की कमी के कारण स्थानीय जरूरतें पूरी नहीं हो पातीं। प्रधानमंत्री विकसित ग्राम स्वराज योजना इस समस्या के समाधान की दिशा में भी महत्वपूर्ण कदम है। इसके तहत संबंधित केंद्रीय मंत्रालयों, विभागों और राज्य सरकारों की नियोजन प्रक्रियाओं को एकीकृत डिजिटल मंच से जोड़ने का प्रयास किया जाएगा। इससे ग्राम पंचायत विकास योजनाएं तैयार करने में विभागों के बीच आपसी सहयोग बढ़ेगा।

विकसित भारत के संकल्प में गांवों की निर्णायक भूमिका

विकसित भारत 2047 का लक्ष्य तभी साकार हो सकता है, जब देश के गांव आर्थिक, सामाजिक और संस्थागत रूप से मजबूत बनें। ग्रामीण विकास का आधार सक्षम पंचायतें, जवाबदेह नागरिक, पारदर्शी प्रशासन और स्थानीय जरूरतों के अनुरूप तैयार की गई विकास योजनाएं हैं। प्रधानमंत्री विकसित ग्राम स्वराज योजना इन्हीं उद्देश्यों को एक साथ जोड़ने वाली अभिनव पहल है। यह योजना पंचायतों को केवल योजनाओं के क्रियान्वयन तक सीमित रखने के बजाय उन्हें स्थानीय विकास का नेतृत्व करने वाली संस्था के रूप में स्थापित करने का अवसर प्रदान करती है।

वास्तव में ग्राम स्वराज का अर्थ केवल गांवों का भौतिक विकास नहीं, बल्कि स्थानीय समुदायों को अपने विकास के निर्णय लेने में सक्षम बनाना भी है। प्रधानमंत्री विकसित ग्राम स्वराज योजना इसी भावना को आगे बढ़ाते हुए आत्मनिर्भर पंचायतों, सशक्त ग्रामीण अर्थव्यवस्था और सहभागी शासन व्यवस्था का आधार तैयार कर सकती है। गांवों को विकास की मुख्यधारा में निर्णायक भूमिका देकर ही विकसित भारत 2047 के संकल्प को वास्तविक अर्थों में साकार किया जा सकता है।

-संकाय सदस्य (पंचायती राज)

क्षमा करें और भूल जाएं



संकलित
दर्शन

जीवन में हमें कई बार चुनौतियों और निराशाओं का सामना करना पड़ता है। जीवन में हमारा किसी न किसी ऐसी घटना से साक्षात्कार होता है, जो हमें पसंद नहीं होती या जिसके कारण हमें दुख होता है। जैसे किसी व्यक्ति ने हमारा किसी तरह अनुचित किया हो, शब्दों से हमें भावनात्मक रूप से दुख पहुंचाया हो या शारीरिक कष्ट पहुंचाया हो। परिणाम यह होता है कि हम निराश, दुखी और क्रोधित हो जाते हैं। जब तक हम किसी को क्षमा नहीं करते, तब तक हमारे साथ क्या होता है? हम हमेशा उसी घटना के बारे में सोचते रहते हैं या किसी और से भी उन बातों को दोहराते रहते हैं। कुछ लोग जिनका स्वयं पर नियंत्रण नहीं होता, वे शारीरिक रूप से उस व्यक्ति को हानि पहुंचाते हैं या अपना क्रोध किसी और पर निकालते हैं। ऐसा होने पर हम अपने चारों ओर नकारात्मक वातावरण पैदा कर लेते हैं। अपने मन की शांति खो देते हैं। कुछ क्षणों में घटित हुई घटना के लिए हम अपने जीवन के तमाम घंटे इस बात में लगा देते हैं कि उसका बदला कैसे लें। यदि हम इसके बजाय क्षमा कर दें तो हम इस समय का शांतिपूर्वक सदुपयोग कर सकते हैं। हम अपना ध्यान उस ओर लगाएं, जो आध्यात्मिक रूप से मददगार हो। जैसे कि पिता-परमेश्वर को याद करना, ध्यान-अभ्यास करना, निष्काम सेवा करना और आध्यात्मिक लाभ प्राप्त करना। आध्यात्मिक मार्ग पर ध्यान-अभ्यास में सफलता अपने मन को स्थिर करके अंतर में ध्यान टिकाने पर निर्भर है।

गणेश विनायक जी की कथा



संकलित
प्रेरणा

एक गांव में मां-बेटी रहती थीं। एक दिन वह अपनी मां से कहने लगी कि गांव के सब लोग गणेश मेला देखने जा रहे हैं, मैं भी मेला देखने जाऊंगी। मां ने जाने से पहले बेटी को दो लड्डू दिए और एक घंटी में पानी दिया। मां ने कहा कि एक लड्डू तो गणेश जी को खिला देना और थोड़ा पानी पिला देना। दूसरा लड्डू तुम खा लेना और बची पानी भी पी लेना। लड़की मेले में चली गई। मेला खत्म होने पर सभी गांववाले वापिस आ गए लेकिन लड़की वापिस नहीं आई। लड़की मेले में गणेश जी के पास बैठ गई और कहने लगी कि एक लड्डू और पानी गणेश जी तुम्हारे लिए और एक लड्डू और बाकी बचा पानी मेरे लिए। इस तरह कहते-कहते सारी रात बीत गई। गणेश जी यह देखकर सोचने लगे कि अगर मैंने यह एक लड्डू और पानी नहीं पीया तो यह अपने घर नहीं जाएगी। यह सोचकर गणेश जी एक लड़के के वेश में आए और उससे एक लड्डू लेकर खा लिया और साथ ही थोड़ा पानी भी पी लिया फिर यह कहने लगे कि माँगो तुम्हें क्या मांगती हो? लड़की मन में सोचने लगी कि क्या मांगू? अन्न मांगू या धन मांगू या अपने लिए अच्छा वर मांगू या खेत मांगू या महल मांगू! वह मन में सोच रही थी तो गणेश जी उसके मन की बात को जान गए। वह लड़की से बोले कि तुम अपने घर जाओ और तुमने जो भी मन में सोचा है वह सब तुम्हें मिलेगा। लड़की घर पहुँची तो माँ ने पूछा कि इतनी देर कैसे हो गई? बेटी ने कहा कि आपने जैसा कहा था मैंने वैसा ही किया है और देखते ही देखते जो भी लड़की ने सोचा था वह सब कुछ हो गया।

अंतर्मन



आज की पाती

एकता के मंत्र पर अमल करना भी जरूरी

भारत में बहुत से महापुरुष हुए। इन महापुरुषों ने भारत को ही नहीं, बल्कि दुनिया को उच्चे मार्ग पर ले जाने के लिए बहुत से काम किए और दुनिया के लिए प्रेरक बने। इन्हीं महापुरुषों में से एक थे सरदार वल्लभभाई पटेल, जिनका जन्मदिन एकता की भावना को बढ़ाने के रूप में भी मनाया जाता है, जोकि 31 अक्टूबर को होता है। सरदार वल्लभ भाई पटेल ने देश को आजाद कराने के साथ-साथ देश की एकता को मजबूत करने में मुख्य भूमिका निभाई थी। इन्होंने किसानों को उनका हक अंग्रेजों से दिलाने के लिए काम किए थे। सरदार वल्लभ भाई पटेल को आज भी जिस मुख्य कार्य के लिए याद किया जाता है वो है देसी रियासतों का एकीकरण। आज भारत को उनके विचारों को कार्यरूप देने की जरूरत है।

- रतन साहू, बतौरा बाजार

ट्रेंड

वंदे भारत स्लीपर ट्रेन



बेहतर रेल कनेक्टिविटी की दिशा में एक और कदम, और वह भी तकनीक और नवाचार के शहर बेंगलूरु से। वंदे भारत स्लीपर ट्रेन, बेंगलूरु और मुंबई के बीच कनेक्टिविटी के लिए एक नया ऐज साबित होगी। - नरेंद्र मोदी, प्रधानमंत्री

सिख नरसंहार

1 नवंबर को दिल्ली की धरती 1984 के सिख नरसंहार के निर्दोष पीड़ितों को याद करती है, जबकि उसी दिन राहुल गांधी की कांग्रेस 'लोकतंत्र बचाने' का ढोंग रच रही है। शर्मनाक कांग्रेस के साये में 1984 का कलंक लगा है। इसे राहुल गांधी के 'लोकतंत्र बचाने' के नारों से नहीं धोया जा सकता। - रेखा गुप्ता, सीएम, नई दिल्ली



लोकतंत्र का मजाक



विपक्ष के नेता राहुल गांधी की राजनीति अब केवल झूठे नैरेटिव गढ़ने, संवैधानिक संस्थाओं पर हमले करने तक सिमट कर रह गई है। संसद में बोलने दो करने वाले कांग्रेस के 'युवराज' ने आज अपनी 'नकारी संसद' में भी लोकतंत्र का मजाक उड़ाने में कोई कसर नहीं छोड़ी। - धर्मेंद्र प्रधान, सांसद, भाजपा

संजय का बेवक्त जाना



बहुत जल्दी चले गए संजय सुताजी। उनके भीतर अभी बहुत सारा सिनेमा बाकी था, उनके सामने अभी कई साल और कई कहानियाँ थीं। तय से दिल तोड़ने वाला है.. उनके परिवार को हिम्मत और शांति मिले। - अजय देवगण, फिल्म अभिनेता

हमारा पता
हरिभूमि कार्यालय
नजदीक इंडस पब्लिक स्कूल, दिल्ली रोड,
रोहतक-124001 फोनः 9253681019-20
ई-मेल : haribhoomi@gmail.com
वेब-साइट : www.haribhoomi.com

करंट अफेयर

बाइनेंस से चोरी के लिए उत्तर कोरिया जिम्मेदार: एफबीआई

अमेरिकी जांच एजेंसी फेडरल ब्यूरो ऑफ इन्वेस्टिगेशन (एफबीआई) ने कहा है कि दुनिया की सबसे बड़ी क्रिप्टोकरेंसी चोरी की घटना को उत्तर कोरिया के हैकर्स ने अंजाम दिया जिसमें कुछ ही मिनट के भीतर बाइनेंस से अरबों डॉलर की डिजिटल मुद्रा चोरी कर ली गई। एफबीआई ने शनिवार को जारी एक बयान में कहा कि इस सप्ताह हुआ साइबर हमला 'टैडरट्रेटर' नामक समूह की दुर्भावनापूर्ण साइबर गतिविधियों से जुड़ा है। उसने कहा कि इसी समूह ने पिछले साल बायबिट पर 1.5 अरब अमेरिकी डॉलर की साइबर चोरी को भी अंजाम दिया था। एफबीआई ने क्रिप्टो एक्सचेंज, ब्लॉकचेन विश्लेषण कंपनियों और अन्य संबंधित पक्षों से विभिन्न डिजिटल वॉलेट पतों से जुड़े लेनदेन रोकने का आग्रह किया है, ताकि चोरी की गई रकम को उसके स्रोत को छिपाने के लिए अवैध रूप से इधर-उधर न किया जा सके। एजेंसी ने कहा कि उसकी जांच में पता चला है कि ट्रेडरट्रेटर चोरी की गई डिजिटल संपत्तियों को मुख्य रूप से इथेरियम नामक क्रिप्टोकरेंसी में बदल रहा है। एफबीआई को आशंका है कि हैकर अब विकेंद्रीकृत वित्त (डीफाई) मंचों और 'इंस्टेंट स्वैप सर्विसेज' के जरिये इन संपत्तियों को दूसरी क्रिप्टोकरेंसी में बदलने का प्रयास करेंगे।



ऑफ बीट

रात में अच्छी नींद कैसी होनी चाहिए?

बहुत से लोग सोचते हैं कि जब वे तकिये पर सिर रखेंगे तो उन्हें गहरी और आरामदेह नींद आनी चाहिए और लगभग आठ घंटे के बाद तरोताजा महसूस करते हुए उठना चाहिए। वास्तव में, पूरी रात स्वस्थ नींद खंडित होती है क्योंकि आप नींद के विभिन्न चरणों से गुजरते हैं और अक्सर कई बार जागते हैं। कुछ लोगों को इनमें से एक या अधिक बार जागना याद रहता है लेकिन कई लोगों को यह भी याद नहीं रहता कि वे रात में कितनी बार नींद से जागे। एक वयस्क के रूप में, हमारी नींद अलग-अलग चक्रों से गुजरती है और रात के दौरान थोड़ी-थोड़ी देर के लिए नींद टूटती है। प्रत्येक नींद का चक्र लगभग 90 मिनट का होता है। गहरी नींद में जाने से पहले और सपनों की दुनिया (रैपिड आई मूवमेंट- आरईएम) में खोने से पहले हम रात में हल्की नींद से शुरुआत करते हैं। यदि हम अच्छी नींद लेते हैं, तो हम अपनी अधिकांश गहरी नींद रात के पहले भाग में पूरी कर लेते हैं और रात के दूसरे भाग में हमें सपने आने लगते हैं। वयस्क आमतौर पर रात में पांच या छह नींद के चक्रों से गुजरते हैं और प्रत्येक चरण के अंत में थोड़ी देर के लिए जागना पूरी तरह सामान्य है। इसका मतलब है कि हम रात में पांच बार जाग सकते हैं। यह बढ़ती उम्र के साथ बढ़ सकता है और हम फिर भी स्वस्थ रह सकते हैं।



पंजाब केसरी
संपादकीय
संरक्षक: एडीटर इन्टेलीजैंसी लाला जगतनारायण जी, लाला एडीटर लेजेंड रमेश चन्द्र जी एवं परम्परा के पोट्टा आदित्यनारायण चोपड़ा जी



आदित्य नारायण चोपड़ा
adityachopra@punjabkesari.com

प्रदूषण पर महा-एक्शन

दिल्ली एनसीआर में सर्दियों के दौरान बढ़ने वाले वायु प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए नए प्रतिबंध लागू कर दिए गए हैं। विंटर पाल्यूशन एक्शन प्लान के तहत यह पाबंदियां 31 जनवरी 2027 तक लागू रहेंगी। अब दिल्ली के बाहर रजिस्ट्र्ड बीएस-6 से कम मानक वाली गाड़ियां राजधानी में नहीं आ सकेंगी। सरकारी और प्राइवेट कंपनियों के ऑफिस में आधे कर्मचारी घर से काम करेंगे, सार्वजनिक पार्किंग की फीस भी दोगुनी कर दी गई है। हालांकि दिल्ली की हवा में पिछले 8 साल के मुकाबले सुधार दर्ज किया गया है। अक्तूबर में औसत एक्यूआई 166 रहा जो 2018 के बाद इस महीने में सबसे कम है। दिल्ली सरकार ने प्रदूषण पर सतर्कता बरतते हुए महा-एक्शन तो शुरु कर दिया है ले किन तीन महीने तक चलने वाली पाबंदियों से जनजीवन तो प्रभावित होगा ही बल्कि इससे जरूरी सामान की सप्लाई भी प्रभावित हो सकती है। दिल्ली से बाहर पंजीकृत पुरानी पैट्रोल और डीजल गाड़ियों की एंट्री पर रोक लगाए जाने से ट्रांसपोर्टेशन का खर्चा भी बढ़ सकता है। पिछले सालों के उलट टूरिस्ट परमिट वाली बसों को भी इस बार पाबंदियों से छूट नहीं है।

तीन महीने टूरिस्ट सीजन के होते हैं। इन पाबंदियों से ट्रेवल कंपनियां परेशान हैं। दिल्ली आने जाने वाली बसों की संख्या कम होने से टिकटों की कीमतों में 15 फीसदी की बढ़ोतरी हो सकती है। जल्दी खराब होने वाले सामान की आवाजाही में रुकावट आ सकती है। जिसका एक बड़ा हिस्सा देशभर से सड़क के रास्ते दिल्ली पहुंचता है। दिल्ली में सब्जियां उत्तर प्रदेश, पंजाब और हरियाणा से और प्याज इत्यादि महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश और राजस्थान से आते हैं। दूध की सप्लाई हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश और राजस्थान से होती है। इन सामानों की सप्लाई में रुकावट आ सकती है और इन रोजमर्रा की चीजों के दाम बढ़ सकते हैं। एक्शन प्लान के तहत निर्माण कार्यों पर पाबंदी लगा दी गई है। जिससे रोज कमा कर खाने वाले श्रमिक वर्ग के सामने बेरोजगारी का संकट खड़ा हो सकता है। प्रदूषण बड़ी चुनौती है। वायु प्रदूषण अब केवल महानगरों और शहरों की समस्या नहीं है, गांवों की हवा भी उतनी ही जहरीली होती जा रही है। मुंबई में भी समुद्री हवाओं का प्राकृतिक सुरक्षा कवच कमजोर पड़ चुका है। शीतकालीन प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए उठाए गए कदम सराहनीय प्रयास हैं लेकिन धान की पराली जलाने, हवा की गति में अचानक गिरावट, दीपावली पर पटाखों और आतिशबाजी चलाने की संभावना को देखते हुए यह कहना जल्दबाजी होगा कि यह प्रयास कितने कारगर होंगे।

> **दिल्ली में सब्जियां उत्तर प्रदेश, पंजाब और हरियाणा से और प्याज इत्यादि महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश और राजस्थान से आते हैं। दूध की सप्लाई हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश और राजस्थान से होती है। इन सामानों की सप्लाई में रुकावट आ सकती है और इन रोजमर्रा की चीजों के दाम बढ़ सकते हैं। एक्शन प्लान के तहत निर्माण कार्यों पर पाबंदी लगा दी गई है। जिससे रोज कमा कर खाने वाले श्रमिक वर्ग के सामने बेरोजगारी का संकट खड़ा हो सकता है। प्रदूषण बड़ी चुनौती है। वायु प्रदूषण अब केवल महानगरों और शहरों की समस्या नहीं है, गांवों की हवा भी उतनी ही जहरीली होती जा रही है।**

दिल्ली के नागरिकों को आने वाली सर्दियों में स्वच्छ हवा मिले, यह सुनिश्चित करने में ये ये केवल कुछ चुनौतियां हैं। कारगर होने के लिए प्रवर्तन का दायरा कहीं अधिक व्यापक होना चाहिए, जो दिल्ली सरकार के अधिकार क्षेत्र से परे है। दिल्ली विशाल राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र का हिस्सा है, जिसमें हरियाणा, उत्तर प्रदेश और राजस्थान के जिले शामिल हैं। इन राज्यों के अधिकांश शहर भारत में शहरी प्रदूषण का मुख्य स्रोत हैं। दिल्ली की शीतकालीन प्रदूषण नियंत्रण कार्य योजना के प्रभावी होने के लिए, इन क्षेत्रों के प्रशासनों को पारस्परिक योजनाएं लागू करनी होंगी।

पुराने वाहनों और निर्माण पर मानक प्रतिबंध पिछली सर्दियों में ज्यादा असरदार साबित नहीं हुए हैं और योजना में तालमेल का कोई प्रमाण नहीं है। केंद्रीय आवास और शहरी मामलों के मंत्रालय के अधीन राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र योजना बोर्ड प्रदूषण नियंत्रण योजनाओं के समन्वय में उपयोगी भूमिका निभा सकता है। लेकिन इससे भी समस्या का आंशिक समाधान ही होगा। एक्यूआई रैंकिंग के नवीनतम आंकड़ों से पता चलता है कि दिल्ली दुनिया के 20 सबसे प्रदूषित शहरों में शामिल 13 भारतीय शहरों में से एक नहीं है। इनमें बुलंदशहर, पाली, मथुरा, मुजफ्फरनगर, रोहतक, कोटा, हापुड़, बीकानेर, बरेली और हिसार शामिल हैं। अन्य में मुंबई, अगरतला और बुरहानपुर (मध्य प्रदेश) उत्तरी गंगा क्षेत्र से बाहर हैं। इनमें से कई प्रदूषण फैलाने वाले शहर पराली जलाने वाले क्षेत्रों के निकट स्थित हैं। रबी फसल के मौसम से पहले किसान अपने खेतों को साफ करने के लिए आग लगाते हैं, उससे निकलने वाले घने धुएं से कोई भी उत्तरी शहर अछूता नहीं है।

जन स्वास्थ्य संकट को देखते हुए प्रदूषण पर नियंत्रण जरूरी है। प्रदूषण का असर सबके स्वास्थ्य पर पड़ता है। दिल्ली में तो नवजात शिशु के फेफड़े भी गुलाबी की बजाय काले दिखाई देते हैं। मानव ने जितना प्रकृति से खिलवाड़ किया है उसका खामियाजा उसे भुगतना पड़ रहा है। उसके लिए खुली हवा में सांस लेना भी मुश्किल हो रहा है। प्राकृतिक असंतुलन न हो इस के लिए मनुष्य को प्रकृति के साथ रहना सीखना होगा। प्रदूषण को कम करने के लिए जन-जन की भागीदारी निभानी होगी।

जो आज जातिगत आरक्षण पर उंगलियां...



गीता पाढा

कभी-कभी लगता है कि जानवर इंसानों से बेहतर जीवन बिताते हैं,
हिंसा, मारपीट, छूत-अछूत के बंधन से जब उनको मुक्त पाते हैं,
जो आज जातिगत आरक्षण पर उंगलियां उठाते हैं,
शायद उन्हें सदियों से भोगे हुए जाति प्रथा के वह दंश नजर नहीं आते हैं...!!

सऊदी अरब के लिए भारत की उड़ानों में व्यवधान जारी

दुबई, (भाषा): भारत और सऊदी अरब के बीच उड़ानों में व्यवधान अभी जारी है। खाड़ी देश में मौजूदा सुरक्षा हालात को देखते हुए, अकासा एयर ने रविवार को जेद्दा के लिए अपनी सेवाओं के निलंबन को 18 नवंबर तक बढ़ा दिया है। एयरलाइन ने बताया कि रियाद आने-जाने वाली उड़ानें 30 नवंबर तक निलंबित रहेंगी।

यह घोषणा तब हुई, जब दो दिन पहले ही एअर इंडिया और एअर इंडिया एक्सप्रेस ने कहा था कि जेद्दा, रियाद और दम्मम के लिए उनकी उड़ानें 14 नवंबर तक निलंबित रहेंगी। सऊदी अरब में हवाई अड्डों सहित आम नागरिकों और महत्वपूर्ण बुनियादी ढांचे पर हमलों के बीच नियमित उड़ानों में व्यवधान जारी है। रियाद स्थित भारतीय दूतावास ने बताया कि 21 अक्टूबर को दम्मम के किंग फहद अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे पर हुए हमले में एक भारतीय नागरिक की मौत हो गई और दो अन्य घायल हो गए।

कराची के मोहता-पैलेस पर जिन्नाह का कब्जा



डा. चन्द्र त्रिखा
chandertrikha@gmail.com

पाकिस्तान के कायदे आजम जिन्नाह की नजर पहले दिन से कराची की एक हवेली पर टिकी हुई थी। इस हवेली का नाम था 'मोहता-पैलेस' और मालिक थे बीकानेरी मूल के एक मारवाड़ी सेठ शिव रतन मोहता। हिन्दू जिमखाना कराची में स्थित इस ऐतिहासिक इमारत के निर्माण में गोवर्धन दास के बड़े बेटे सेठ रामगोपाल गोवर्धनदास मोहता का सबसे बड़ा योगदान था। इसीलिए अधिकारिक तौर पर इसे 'सेठ रामगोपाल गोवर्धन दास मोहता हिंदू जिमखाना' नाम दिया गया था।

अगस्त 1947 में भारत के विभाजन के समय कराची में हालात बिगड़ने लगे। हालांकि सेठ शिवरतन मोहता कराची नहीं छोड़ना चाहते थे, लेकिन सुरक्षा कारणों और बढ़ते घरेलू दबाव के कारण उन्हें रातों-रात अपना आलीशान महल छोड़कर मुंबई (तब बॉम्बे), भारत आना पड़ा। मोहता परिवार के जाने के बाद पाकिस्तान सरकार ने इस पैलेस को अपने कब्जे में ले लिया और शुरुआत में यहां पाकिस्तान का विदेश मंत्रालय बनाया गया। बाद में 1964 में यह मोहम्मद अली जिन्ना की बहन फातिमा जिन्ना का अधिकारिक निवास बना। आज यह महल सिंध सरकार के अधीन एक प्रसिद्ध संग्रहालय और सांस्कृतिक केंद्र है।

वर्तमान में मोहता परिवार के वंशज मुबर्द और अन्य देशों में रहते हैं। हाल ही में फरवरी 2024 में शिवरतन मोहता के परपोते सात्विक मोहता ने कराची जाकर अपने परदादा द्वारा बनवाए गए इस ऐतिहासिक मोहता पैलेस का भी दौरा किया। इसका नाम अब 'कस्र-ए-फातिमा' है। अब यहां एक संग्रहालय, मगर भव्य महल का नाम 'मोहता-पैलेस' के स्थान पर कस्र-ओ-फातिमा है। यह महल 1927 में क्लिफ्टन के समृद्ध तटीय इलाके में बनाया गया था। इसे शिवरतन मोहता ने अपने ग्रीष्मकालीन आवास (समर होम) के रूप में बनवाया था। इस महल का निर्माण राजस्थान के पत्थर के महलों की परंपरा के अनुरूप किया गया था, जिसमें जोधपुर के गुलाबी पत्थरों के साथ-साथ पास के गिजरी इलाके के पीले पत्थरों का इस्तेमाल किया गया था।

शिवरतन के पूर्वजों में मोतीलाल मोहता का नाम आता है, जो 1842 में बीकानेर से हैदराबाद (तेलंगाना, भारत) चले गए थे। उनके चार बच्चे कलकत्ता चले गए। इन्हीं में से एक, गोवर्धन मोहता, 1883 में कराची चले गए। उनके बड़े बेटे, रामगोपाल, एक विद्वान और लेखक बने। शिवरतन कराची बार में एक उद्योगपति बने और उन्होंने 'पाम-ऑलिव' साबुन के निर्माण से काफी संपत्ति अर्जित की।



यह महल 18500 वर्ग फुट (1720 वर्ग मीटर) के क्षेत्र में फैला हुआ है। इसके बाहरी हिस्से को खिड़कियों, पत्थर के ब्रैकेट, मेहराबों, गुंबदों, फूलों के डिजाइन वाली रेलिंग और सुंदर कटघरों से सजाया गया है। इसमें कुल नौ गुंबद हैं, जिनमें से एक बीच में स्थित है। महल के सामने के हिस्से में बगीचे की ओर खुलने वाली खिड़कियां नीले रंग की हैं, जबकि पिछले हिस्से में रंगीन कांच (स्टेन्ड ग्लास) वाली मेहराबदार खिड़कियां बनी हुई हैं। महल की निचली मंजिल पर मनोरंजन के लिए बड़े और भव्य कमरे हैं, जबकि पहली मंजिल पर अधिक निजी जगहें हैं। यहां एक छत (टेरेस) भी है, जहां तेज धूप से बचने के लिए छाया की व्यवस्था है। यह पूरा महल सागौन की लकड़ी से बना है, जिसमें पॉलिश की गई सीढ़ियां, लंबे गलियारे और दरवाजों के भीतर दरवाजे लगे हैं। मोहता पैलेस की 'बरसाती' (छत) पर एक सुंदर पारिवारिक मंदिर था, जो भगवान शिव को समर्पित था। इंडो-सारासेनिक वास्तुकला शैली में बना यह महल, समुद्र के पास एक शानदार इलाके में स्थित है और अपनी अनूठी बनावट के कारण अलग ही पहचान रखता था।

अलग-अलग स्तरों पर बने इस भव्य महल का इस्तेमाल मोहता परिवार दो दशकों तक गर्मियों के घर के रूप में करता रहा, जब तक कि वे 1947 में भारत नहीं चले गए। इसमें तीन स्तर थे -बेसमेंट, निचली मंजिल और पहली मंजिल, जिसके ऊपर छत थी इमारत के उत्तरी हिस्से में बना बेसमेंट काफी छोटा है। यहां से नीचे जाने वाली सीढ़ियां एक ऐसे कक्ष की ओर ले जाती थीं, जिसमें गर्म पानी का 'पूल' और उससे जुड़ा एक चेंजिंग रूम है। कहा जाता है कि यहां गर्म और ठंडे पानी की व्यवस्था थी, जिससे पूल में पानी आता था। 'पूल' वाले क्षेत्र में छोटे वेंटिलेटर हैं -दोनों तरफ दो-दो जिनका इस्तेमाल शायद धूप अंदर लाने और भाप बाहर निकालने के लिए किया जाता रहा होगा।

इमारत में प्रवेश करने पर एक गलियारा मिलता है, जो निचली मंजिल के कमरों तक जाता है। यहां पांच बड़े कमरे हैं, जो संभवत: औपचारिक या सामाजिक कार्यों के लिए बनाए गए थे : दो कमरे प्रवेश द्वार के उत्तर में हैं, दो दक्षिण में, और एक पीछे की तरफ है। मुख्य प्रवेश द्वार एक बड़े गलियारे में खुलता है, जो एक विशाल केंद्रीय हॉल को घेरे हुए है। इस हॉल की छत पर सुंदर नक्काशी है और इसके दक्षिणी हिस्से में सीढ़ियां बनी हैं।

बाहर से देखने पर, भूतल (ग्राउंड फ्लोर) पर प्रवेश द्वार के दोनों तरफ दो बेहद नक्काशीदार खिड़कियां हैं, जिनमें से प्रत्येक में तीन शटर लगे हैं। ऐसी ही खिड़कियां उत्तर और दक्षिण दिशा में भी हैं -उन सीढ़ियों के दोनों तरफ, जो कमरों से बाहर मैदान की ओर जाती हैं। अष्टकोणीय (आठ कोनों वाले) बुर्जों में से प्रत्येक में पांच-पांच खिड़कियां हैं। इसी तरह, भूतल के चारों ओर एक छज्जा बना हुआ है, जो छाया देने का काम करता है।

इसके ग्राउंड फ्लोर की खिड़कियों के ठीक ऊपर भी खिड़कियां हैं, जहां से नीचे के बड़े मैदान का नजारा दिखता है। इसके अलावा, पहली मंजिल पर एक बड़ी छत (टेरेस) थी, जहां से अरब सागर दिखाई देता है। छत के ऊपर से आस-पास के इलाके और नीचे की गई लैंडस्केपिंग का नजारा ऊपर से देखा जा सकता था। मोहता पैलेस को बहुत बारीकी से सजाया गया है, जिसमें पूरी इमारत पर बेहतरीन नक्काशी देखने को मिलती है। इस सुंदर डिजाइनों में बड़ी खिड़कियों के पास, मेहराबों के ऊपरी कोनों पर पक्षियों के पंखों जैसी आकृतियां बनी हैं।

वर्ष 1947 में पाकिस्तान सरकार ने इस इमारत को अपने कब्जे में ले लिया और वर्ष 1964 में, मुहम्मद अली जिन्ना की बहन फातिमा जिन्ना यहां रहने आ गईं। वर्ष 1960 के दशक में मोहता पैलेस को 'क़स्र-ए-फ़ातिमा' कहा जाने लगा और राष्ट्रपति अयूब खान के खिलाफ उनके राष्ट्रपति चुनाव अभियान का मुख्य केंद्र बन गया। उनकी असामयिक मृत्यु के बाद, उनकी बहन शिरीन जिन्ना यहां रहने आईं और कई वर्षों तक भूतल (ग्राउंड फ्लोर) पर रहीं। 1980 में उनके निधन के बाद, इस महल को सील कर दिया गया।

1995 में, सिंध सरकार ने इसे खरीद लिया ताकि इसे पाकिस्तान की कलाओं को समर्पित एक संग्रहालय में बदला जा सके। सिंध सरकार ने इस संपत्ति का स्वामित्व अपने पास ले लिया और महल के बेहतर उपयोग और उसे संग्रहालय के रूप में ढालने के लिए सुझाव देने हेतु, गवर्नर की अध्यक्षता में ट्रस्टियों का एक स्वतंत्र बोर्ड गठित किया। संपत्ति के प्रबंधन के लिए एक ट्रस्ट बनाया गया, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि इसे बेचा न जाए, और न ही इसका उपयोग व्यावसायिक या किसी ऐसे उद्देश्य के लिए किया जाए जो ट्रस्ट डीड (दस्तावेज) में तय किए गए उद्देश्यों से अलग हो। इसके आकर्षक रूप को देखते हुए, जिन्नाह ने सही वक्त आने पर इस पर कब्जा करने का मन बना लिया था।

सोशल मीडिया का 'स्टॉकअप' हंगामा : चिंता फैलाने का खेल ?



विनीत नारायण
www.vineetnarain.net

बीते कुछ दिनों से दुनियाभर के सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर एक ही तरह के पोस्ट वायरल हो रहे हैं। इनमें दावा किया जा रहा है कि '20 से 33 देशों' ने अपने नागरिकों से खाद्य पदार्थ, पानी, दवाइयां और नकदी का स्टॉक जमा करने को कहा है। कई पोस्ट इसे मध्य-पूर्व में चल रहे युद्ध से जोड़ते हुए किसी बड़े आसन्न संकट का संकेत बता रहे हैं। कुछ जगहों पर तो 'तीसरे विश्व युद्ध' या 'तेल संकट' जैसी आशंकाएं खुलकर व्यक्त की जा रही हैं। सवाल यह है कि ये चेतावनियां कितनी वास्तविक हैं? इनके पीछे कौन-सा संकट छिपा है? और भारत को इससे क्या सीखना चाहिए?

वास्तविकता यह है कि कई देशों ने घरेलू तैयारियों की सलाह दी है, लेकिन यह कोई एक साथ जारी की गई वैश्विक आपात चेतावनी नहीं है। ब्रिटेन ने 22 अक्टूबर को 'ब्ल रेडी' अभियान शुरू किया, जिसमें परिवारों को तीन दिन (72 घंटे) के लिए पानी, टिन फूड, रेडियो, नकदी और पॉवर बैंक रखने की सलाह दी गई। फ्रांस और कुछ अन्य यूरोपीय देशों ने भी 72 घंटे की किट की बात कही। जापान भूकंप और ज्वालामुखी जोखिमों को देखते हुए तीन से सात दिन की आपूर्ति की सलाह दे रहा है। स्वीडन का 'इन केस ऑफ क्राइसिस और वॉर' गाइड एक सप्ताह की तैयारी सुझाता है, जबकि जर्मनी दस दिन तक की बात करता है। ये सलाहें न तो एक ही दिन जारी की गईं और न ही सभी देशों में एक जैसी हैं। कई देश पहले से ही ऐसी तैयारियां रखे हुए थे। भारत में भी राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (एनडीएमए) घरेलू आपातकालीन किट रखने की सलाह देता है, हालांकि इसमें निश्चित दिनों की संख्या नहीं बताई गई है। थाईलैंड जैसे देशों के प्रधानमंत्री ने अपने नागरिकों को घबराहट से बचने और खाद्य सुरक्षा पर भरोसा रखने को कहा है।

कुल मिलाकर देखा जाए तो यह कोई एक 'अपेक्षित संकट' नहीं है। बल्कि कई अलग-अलग जोखिम हैं जो कि एक साथ बढ़ रहे हैं। यूरोप में रूस की हाइब्रिड वारफेयर बढ़ रही है, साइबर हमले, ड्रोन घुसपैठ, तोड़फोड़ और बुनियादी ढांचे पर खतरे बने हुए हैं। मध्य-पूर्व में ईरान के साथ युद्ध फरवरी 2026 से चल रहा है। अमेरिकी मीडिया रिपोर्टों के अनुसार, अमेरिका और इजरायल मिडटर्म चुनाव (3 नवंबर) के बाद ईरान पर छोटी लेकिन तीव्र कार्रवाई की तैयारी कर रहे हैं। खाड़ी देशों को भी संभावित जवाबी कार्रवाई के लिए तैयार रहने को कहा गया है। इसके अलावा जलवायु संबंधी चरम मौसम, बिजली ग्रिड और संचार प्रणालियों पर साइबर खतरे, तथा जापान जैसे देशों में प्राकृतिक आपदाएं भी शामिल हैं। देखा जाए तो ये जोखिम वास्तविक हैं। 2022 के बाद से यूरोप में रूसी हाइब्रिड गतिविधियों में वृद्धि दर्ज की गई है। मध्य-पूर्व में तेल आपूर्ति और शिपिंग मार्गों पर खतरा बना हुआ है। लेकिन जानकर मानते हैं कि इन्हें 'कल से विश्व युद्ध शुरू हो जाएगा' जैसा एक एकल संकट नहीं माना जा सकता।

अगर मध्य-पूर्व में संघर्ष फिर से तीव्र होता है, तो सबसे बड़ा झटका तेल की कीमतों और आपूर्ति श्रृंखला पर पड़ेगा। भारत जैसे तेल आयातक देश सबसे अधिक प्रभावित होंगे। यूरोप में बुनियादी ढांचे पर हमले बिजली, परिवहन और संचार को बाधित कर सकते हैं, जिससे आर्थिक गतिविधियां प्रभावित होंगी। खाद्य सुरक्षा भी दबाव में आ सकती है, खासकर तब यदि वैश्विक व्यापार बाधित हो। सोशल मीडिया पर फैली घबराहट से ही ब्रिटेन में टिन फूड, टॉयलेट पेपर और रेडियो की बिक्री अचानक बढ़ गई। यह दिखाता है कि सूचना का गलत प्रसार वास्तविक कमी भी पैदा कर सकता है।

सवाल उठता है कि क्या इस चेतावनी को सच मान लिया जाए? आंशिक रूप से हां। सोशल मीडिया पर सामान्य तैयारी की सलाहों को 'आसन्न आपदा' या 'सरकारों की गुप्त चेतावनी' के रूप में पेश किया जा रहा है। कई पोस्ट पुरानी या अलग-अलग समय की सलाहों को एक साथ जोड़कर सनसनी पैदा कर रहे हैं। मध्य-पूर्व युद्ध को लेकर पहले से मौजूद चिंता को बढ़ा-चढ़ा कर पेश किया जा रहा है। गौरतलब है कि ऐसा पैटर्न 2020 के कोविड काल या अन्य संकटों के दौरान भी देखा गया था।



हालांकि, इसे पूरी तरह से फर्जी या केवल 'लोगों को चिंतित रखने' वाला अभियान कहना भी गलत होगा। यूरोप में हाइब्रिड खतरे बढ़े हैं और मध्य-पूर्व में सैन्य तैयारी की रिपोर्टें विश्वसनीय मीडिया स्रोतों से आ रही हैं। सरकारें नागरिकों को आत्मनिर्भर बनाना चाहती हैं ताकि आपातकालीन सेवाएं सबसे कमजोर लोगों पर ध्यान केंद्रित कर सकें। यह दीर्घकालिक लचीलेपन की नीति है, न कि केवल घबराहट पैदा करने का प्रयास।

ऐसे में भारत को घबराने की जरूरत नहीं, लेकिन सतर्क रहने की जरूरत है। हमारे पास खाद्य भंडार अपेक्षाकृत मजबूत है, लेकिन जंजाल सुरक्षा अभी भी कमजोर है। रणनीतिक तेल भंडार बढ़ाने की योजनाएं पहले से चल रही हैं, जिन्हें तेज किया जाना चाहिए। क्रिटिकल मिनरल्स के स्टॉकपाइल पर भी काम जारी है और इसे भी प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

नागरिक स्तर पर, बिना घबराहट पैदा किए, एनडीएमए की मौजूदा सलाह को अधिक स्पष्ट और व्यावहारिक बनाया जा सकता है। सिविल डिफेंस और समुदाय स्तर की तैयारी को मजबूत करना उचित होगा। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत को अपनी रणनीतिक स्वायत्तता बनाए रखते हुए ऊर्जा स्रोतों में विविधता लानी चाहिए और मध्य-पूर्व तथा यूरोप दोनों से संभावित अतिरिक्त प्रभावों (तेल कीमतें, व्यापार बाधाएं) पर नजर रखनी चाहिए। सोशल मीडिया पर वायरल हो रही ये पोस्ट वास्तविक तैयारियों को अतिरेकित रूप में पेश कर रही हैं। हाइब्रिड खतरे, मध्य-पूर्व में संभावित वृद्धि, और जलवायु-संबंधी व्यवधान जैसे कई जोखिम मौजूद हैं। लेकिन ये 'कल से सब कुछ खत्म हो जाएगा' वाला संकेत नहीं हैं। ऐसे में 'तैयारी' बुद्धिमानी है, 'घबराहट' नहीं। भारत को शांत, तथ्य-आधारित दृष्टिकोण अपनाना चाहिए अपनी कमजोरियों को पहचानें, भंडार मजबूत करें और नागरिकों को सही जानकारी दें। सोशल मीडिया की शोरगुल भरी चेतावनियों के बजाय, वास्तविक लचीलापन ही सबसे अच्छी सुरक्षा है।

भगवान शिव की जटाएं ढीली पड़ रही हैं

नैनीताल, (भाषा): जलवायु विशेषज्ञ और लेखिका मृदुला रमेश ने हिमालय की स्थायी रूप से जमी बर्फ (परमाफ्रॉस्ट) के पिघलने की तुलना कभी गंगा नदी के तेज बहाव को रोकने वाली भगवान शिव की जटाओं से करते हुए चेतावनी दी कि बढ़ते तापमान के कारण पहाड़ों की प्राकृतिक व्यवस्था बिगड़ रही है, जिससे बाढ़ और पानी की कमी का खतरा बढ़ रहा है।

शनिवार को साहित्य और कला से जुड़े 11वें 'हिमालयन इकोज' महोत्सव के समापन पर उन्होंने कहा कि गंगा नदी के धरती पर अवतरण की पौराणिक कथा हिमालय में हो रहे बदलावों को समझने का एक अच्छा उदाहरण है।

पौराणिक कथा के अनुसार, भगवान शिव ने गंगा नदी के तेज बहाव को अपनी जटाओं में रोक लिया था। इसके बाद उन्होंने धीरे-धीरे इसे छोटी-छोटी धाराओं के रूप में धरती पर छोड़ा था। मदुर्रे की रहने वाली लेखिका ने कहा, गंगा को देखिए। वह अपने स्वभाव से चंचल और तेज बहने वाली है। उसे किसी तरह की रोक पसंद नहीं है। लेकिन स्थायी रूप से जमी बर्फ अब पिघल रही है। इसे ऐसे समझिए कि भगवान शिव की जटाएं ढीली पड़ रही हैं। उन्होंने बताया कि हिमालय में ऊंचाई वाले इलाकों में स्थायी रूप से जमी बर्फ मिट्टी और चट्टानों को सीमेंट की तरह एक साथ बांधकर रखती है। मृदुला ने कहा कि जब यह बर्फ पिघलती है तो पहाड़ों की ढलान कमजोर व अस्थिर हो जाती है, जिससे भूस्खलन और हिमनद से जुड़ी आपदाओं का खतरा बढ़ जाता है परमाफ्रॉस्ट मिट्टी, चट्टान या तलछट की वह परत होती है, जो लगातार कम से कम दो वर्षों तक जमी रहती है। सुंदरम क्लाइमेट इंस्टीट्यूट की संस्थापक और इस साल के 'हिमालयन इकोज नेचर प्राइज' की विजेता रमेश ने कहा, दुर्भाग्य से बढ़ते तापमान और बारिश की तीव्रता में वृद्धि के साथ हमें जीना होगा। हमें इसके लिए उम्मीद भी रखनी होगी और योजना भी बनानी होगी।

उन्होंने कहा कि गर्म हवा में नमी रखने की क्षमता ज्यादा होती है, जिसके कारण बारिश वाले दिनों की संख्या कम हो सकती है, लेकिन जब बारिश होती है तो बहुत तेज होती है। उन्होंने बाढ़ के बाद पानी की कमी की बढ़ती समस्या की ओर भी ध्यान दिलाया।



रमेश ने कहा कि बर्फ प्राकृतिक रूप से पानी जमा करने का काम करती है। बर्फ पिघलने से साल की शुरुआत में नदियों में पानी ज्यादा बहने लगता है, जिससे गर्मियों के महीनों के लिए पानी कम बचता है।

जलवायु संकट के समाधान पर बात करते हुए रमेश ने कहा कि स्वच्छ ऊर्जा के इस्तेमाल को सस्ता और बड़े स्तर पर संभव बनाने के लिए पूंजीवाद और बाजार आधारित नए प्रयोग जरूरी हैं।

उन्होंने कहा, पूंजीवाद के बिना आप पूरी बात को समझ ही नहीं पाए हैं। अगर आप पूंजीवाद को नहीं बदलते, तो आप यह लड़ाई हार चुके हैं। उन्होंने भारत में सौर ऊर्जा और एलईडी के क्षेत्र में आई क्रांति का उदाहरण देते हुए कहा कि प्रतिस्पर्धा और तकनीकी विकास से इनकी लागत कम हुई है।

उन्होंने बताया कि करीब आठ साल पहले इलेक्ट्रिक कारों को एक सपना माना जाता था, लेकिन अब ये कारें धीरे-धीरे सस्ती होती जा रही हैं।

उन्होंने कहा, सौर ऊर्जा को देखिए। यह अब सस्ती हो गई है।

नवीकरणीय ऊर्जा के व्यावसायिक महत्व पर बात करते हुए कई स्वच्छ ऊर्जा स्टार्टअप में निवेश करने वाली उद्यमी रमेश ने बताया कि उनकी फैक्टरी अब 90 प्रतिशत से अधिक नवीकरणीय ऊर्जा से चलती है। उन्होंने कहा, यह एकमात्र वजह है, जिससे यह मेरे लिए फायदेमंद है। आज मेरे लिए कोयला या ताप ऊर्जा खरीदना फायदेमंद नहीं है। दो दिवसीय साहित्य महोत्सव 'हिमालयन इकोज' में साहित्य और प्रकृति से जुड़े कई विषयों पर चर्चा हुई। इसमें मशहूर लेखक अमीश, भूटान की उपन्यासकार चादोर वांग्मो, स्विट्जरलैंड के लेखक बेंजामिन क्रिवाट और पौराणिक कथाओं की विशेषज्ञ सुनीता पंत बंसल समेत कई वक्ताओं ने हिस्सा लिया।

सीजेआई को निशाना बनाने वाली पोस्ट पर अवमानना याचिका दर्ज

नई दिल्ली, (पंजाब केसरी): उच्चतम न्यायालय ने प्रधान न्यायाधीश (सीजेआई) को निशाना बनाकर की गई एक सोशल मीडिया पोस्ट को लेकर केरल प्रदेश कांग्रेस कमेटी (केपीसीसी) के खिलाफ अवमानना की कार्यवाही का अनुरोध करने वाली एक शिकायत के आधार पर याचिका दर्ज की है। उच्चतम न्यायालय की वेबसाइट के अनुसार, 13 अक्टूबर को वकील विनीत जिंदल द्वारा प्रधान न्यायाधीश को भेजी गई एक शिकायत को 30 अक्टूबर को रिट याचिका के रूप में दर्ज किया गया। शिकायत में यह भी अनुरोध किया गया है कि अधिकारियों को यह पता लगाने का निर्देश दिया जाए कि क्या 12 अक्टूबर, 2026 की शाम को उच्चतम न्यायालय परिसर में राहुल गांधी और अन्य नेताओं की मौजूदगी में हुआ राजनीतिक प्रदर्शन और नारेबाजी बिना अनुमति के की गई थी।

दिल्ली आर.एन.आई. नं. 4047/83
पंजाब केसरी
दिल्ली कार्यालय :
फोन आफिस: 011-30712200, 45212200,
प्रचार विभाग: 011-30712224
विज्ञापन विभाग: 011-30712229
एम्यूजमेंट विभाग: 011-30712292-93
पेंगजीन विभाग: 011-30712330
फैक्स : 91-11-30712290, 30712384,
011-45212383, 84
Email: Editorial@punjabkesari.com
स्वत्वाधिकारी दैनिक समाचार लिमिटेड, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्प्लैक्स, नजफगढ वजीरपुर डीडीसी डिपो, दिल्ली-110035 के लिए मुद्रक, प्रकाशक तथा सम्पादक अनिल शारदा द्वारा पंजाब केसरी प्रिंटिंग प्रैस, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्प्लैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से मुद्रित तथा 2, प्रिंटिंग प्रैस कॉम्प्लैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से प्रकाशित।

नवभारत टाइम्स • विचार

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली । सोमवार, 2 नवंबर 2026

जो चेतना मेरे में है, वही हर मनुष्य में है, हर पशु-पक्षी, पेड़-पौधे में है। उस स्थिति में किसी की भी हिंसा मेरी हिंसा है। -भगवान महावीर

मणिपुर की मुश्किल

मणिपुर में लापता दो युवकों के शव मिले हैं। इससे एक दिन पहले तीन लोगों की हत्या हुई थी। दो दिनों में पांच लोगों की मौत से तनाव बढ़ा है और सरकार के लिए स्थिति सामान्य करना बड़ी चुनौती है। राज्य में मई 2023 में जातीय हिंसा की शुरुआत हुई थी।



रुक नहीं रही हिंसा

सैकड़ों मौत । मौजूदा संकट मणिपुर हाईकोर्ट के उस आदेश से शुरू हुआ था, जिसमें सरकार से मैतेई समुदाय को अनुसूचित जनजाति की सूची में शामिल करने पर जल्द विचार करने को कहा गया था। दोनों समुदायों के बीच पहले से मौजूद खाई इसके बाद और चौड़ी हो गई। इस संघर्ष में अब तक 300 से ज्यादा लोगों की जान जा चुकी है। इसी साल फरवरी से अब तक 65 से ज्यादा लोगों की मौत हो चुकी है। वहीं, खबरों के मुताबिक 60 हजार से ज्यादा लोग विस्थापित हुए हैं।

असंतोष और नाराजगी । हिंसा के इस सिलसिले ने आपसी भरोसे को बुरी तरह नुकसान पहुंचाया है। और यही अविश्वास सरकार को लेकर भी है। राज्य के पूर्व सीएम एन. बीरेन सिंह को पिछले साल फरवरी में इस्तीफा देना पड़ा था, क्योंकि उनके खिलाफ असंतोष की एक वजह यह आरोप भी था कि वह मैतेई समुदाय का पक्ष ले रहे हैं। करीब सालभर के राष्ट्रपति शासन के बाद जब युमनाम खेमचंद सिंह ने पद संभाला तो माना गया कि वह कुकी और मैतेई के बीच पुल का काम कर सकते हैं।

सड़कों पर गुस्सा । सीएम खेमचंद खुद मैतेई समुदाय से आते हैं, लेकिन अब उनके इस्तीफे की मांग भी की जा रही है। मैतेई समुदाय नाराज है, क्योंकि उसके लोग भी सुरक्षित नहीं हैं। दो दिन पहले इम्फाल में बड़ी रैली निकाली गई, जिसमें विभिन्न समुदायों की भागीदारी रही। उनकी मांग है कि उग्रवादी समूहों के साथ किया गया सस्पेंशन ऑफ ऑपरेशंस (SoO) समझौता खत्म किया जाए। यह केंद्र, राज्य सरकार और उग्रवादी संगठनों के बीच हुआ सीजफायर एग्रीमेंट है। वहीं, कुकी इनपी मणिपुर ने शनिवार को हुई तीन हत्याओं के लिए नगा उग्रवादी संगठनों पर आरोप लगाया है।

सभी की सुरक्षा । राज्य में जातीय संघर्ष का इतिहास बहुत पुराना है, विभिन्न समुदायों के आपसी रिश्ते उलझे हुए हैं। शांति बहाली के लिए सारे पक्षों के बीच सहमति जरूरी है, लेकिन आपसी भरोसा बहाल किए बिना यह संभव नहीं। सीएम खेमचंद ने एक प्रोग्राम में कहा है कि राज्य का शासन केवल एक समुदाय के हितों को प्राथमिकता देकर नहीं चलाया जा सकता। यही यकीन लोगों में भी होना चाहिए कि सरकार सभी के साथ है और सभी की सुरक्षा होगी।

नश्तर

सॉरी पेंग्विन

पार्क में टहलने के दौरान पानी पी रहा था। पानी खत्म हो गया तो सोचा बोतल कूड़ेदान में फेंक दूं। कूड़ेदान के पास पहुंचा तो देखा कि एक पेंग्विन खड़ा है। उसका मुंह खुला है।


सौरभ श्रीवास्तव

बोतल उसके मुंह में डालने ही वाला था कि अंतरात्मा ने कचोटा। एक जानवर दक्षिणी ध्रुव पर रह रहा है ताकि हम इंसान उसे परेशान न करें, पर हम उसे अपने पार्कों में ले आए और उसके पेट में कूड़ा भर रहे हैं।

मैंने विकास प्राधिकरण से शिकायत की, 'आपने पेंग्विन को कूड़ेदान क्यों बनाया, मैं उसके मुंह में कूड़ा नहीं डाल सकता।' जवाब मिला, 'बाल्टीनुमा कूड़ेदान सुंदर नहीं लगते, इसलिए उन्हें पेंग्विन का आकार दिया गया और किसी पेंग्विन को इससे दिक्कत भी नहीं है।' खयाल आया-कूड़ेदान को सुंदर लगना ही क्यों है? दुनिया में और भी बहुत-सी चीजें हैं जिन्हें सुंदर होना चाहिए। जैसे- हम मनुष्य, हमारा समाज, हमारी सरकार, हमारा लोकतंत्र। घबराइए नहीं मैं प्रोटेस्टजीवी नहीं हूं। आजकल जैसे ही सरकार और लोकतंत्र की बात शुरू होती है, लोगों को लगने लगता है कि बात प्रोटेस्ट तक पहुंच जाएगी। मुझे तो पेंग्विन के लिए बुरा लगता है। ऐसा तो हो नहीं सकता कि किसी रोज सारे पेंग्विन जंतर-मंतर पहुंच जाएं और अपने हक की आवाज उठाएं। पेंग्विनों को अंटार्कटिका में ही प्रोटेस्ट करना होगा। शायद कर भी रहे हों पर उनकी आवाज यहां मैदानों तक नहीं पहुंच पा रही हो। बिना आवाज पहुंचे विकास प्राधिकरण उनकी बात क्यों सुनेगा? यह सब मैंने सोशल मीडिया पर लिखा तो किसी ने कमेंट किया अंटार्कटिका ही चले जाओ। मैंने रिप्लाई किया, 'पाकिस्तान न जाऊं?' वह गाली देकर चला गया। कुछ घंटे बाद मैंने पोस्ट हटा दी थी... पर पेंग्विन वाले कूड़ेदान अब भी लगे हैं।

यह व्यंग्य आपको कैसा लगा
1 से 5 के स्केल पर रेट करें।
जितना अच्छा, उतने नंबर।
स्कैन करें और वोट दे

एकदा

संकलन : रिकल शर्मा

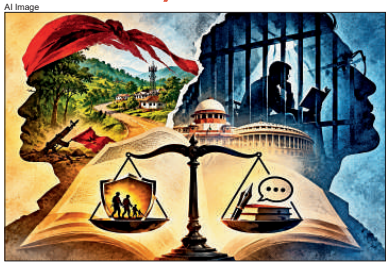
भूख की पीड़ा

चार्ली चैपलिन जीवन की गहरी से गहरी त्रासदी में भी हास्य का कोई न कोई पहलू खोज लेते थे। ऐसा ही एक दृश्य उनकी प्रसिद्ध फिल्म 'द गोल्ड रश' में देखने को मिलता है। एक दिन चैपलिन ने अमेरिका के डोनर अभियान से जुड़ी एक हृदयविदारक घटना के बारे में पढ़ा। सन 1846 में कैलिफोर्निया जा रहे प्रवासियों का एक समूह बर्फ से ढके पहाड़ों में फंस गया था। भूख से बेहाल कुछ लोगों की हालत ऐसी हो गई कि उन्हें जिंदा रहने के लिए अपने चमड़े के जूते तक खाने पड़े। इस घटना ने उनके मन पर बहुत ही गहरा प्रभाव डाला। चार्ली चैपलिन के मन में विचार आया कि भूख और बेबसी की इस त्रासदी को पर्दे पर किस तरह दिखाया जाए। इसी सोच से उन्होंने एक ऐसा दृश्य रचा, जो सिनेमा के इतिहास में अमर हो गया। अपनी फिल्म 'द गोल्ड रश' में चैपलिन का पात्र भूख से व्याकुल होकर अपना जूता उबालता है और उसे किसी शाही पकवान की तरह परोसता है। दर्शक इस दृश्य पर ठहाके लगाते हैं, लेकिन उसके पीछे छिपी भूख की पीड़ा भी महसूस करते हैं। दुख को भी हास्य में ढालकर उसे यादगार बना देना चैपलिन की कला थी।


AI Image

माओवादी हिंसा थमी, अब विचारधारा के नाम पर कार्रवाई की समीक्षा हो

नक्सलवाद खत्म, UAPA पर सवाल


AI Image

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और गृह मंत्री अमित शाह को देश से नक्सलवाद खत्म करने के लिए बधाई मिलनी चाहिए। पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने भी इसे भारत की आंतरिक सुरक्षा के लिए सबसे बड़ा खतरा बताया था। नक्सलवाद को खत्म करना आसान नहीं था। इसके लिए बरसों तक लगातार अभियान चलाया गया। दूरदराज के जंगलों तक सड़कें और टेलिफोन नेटवर्क पहुंचाए गए। सुरक्षाबलों के साथ प्रशासन के दूसरे विभागों ने भी वहां काम किया। इससे स्थानीय लोगों का भरोसा जीता गया। उनकी मदद से मुखबिरों का नेटवर्क तैयार हुआ, जिससे सुरक्षा बलों को जरूरी खुफिया जानकारी मिलने लगी।


स्वामीनाथन एस अंकलेसरिया अय्यर

बदलाव की जरूरत । नक्सलवाद पर जीत के बाद भी एक सवाल उठ रहा है। अगर नक्सलवाद लगभग खत्म हो चुका है, तो सरकार अब भी 'दिमागी नक्सल' जैसे नए खतरे क्यों बता रही है? मार्क्सवादी विचारकों को केवल उनकी विचारधारा के आधार पर सशस्त्र क्रांति का समर्थक नहीं मानना चाहिए। सरकार को विधि विरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम (UAPA) में भी बदलाव करना चाहिए। इसके तहत जमानत मिलना बेहद मुश्किल है।

जमानत के हकदार । सुप्रीम कोर्ट भी कह चुका है कि जमानत नियम होनी चाहिए और जेल अपवाद। इसके बावजूद राष्ट्रीय सुरक्षा का हवाला देकर नक्सलियों के समर्थन के आरोपी बुद्धिजीवियों को जमानत नहीं मिलती। कई बार हत्या के आरोपियों को जमानत मिल जाती है। नक्सलवाद के कमजोर पड़ने के बाद ऐसी सख्ती का कोई औचित्य नहीं रह जाता।

सख्ती जरूरी । 2019 से 2023 के बीच UAPA के तहत 10,440 लोग गिरफ्तार हुए, लेकिन 335 को ही दोषी ठहराया गया। इससे कानून के दुरुपयोग की आशंका होती है। सरकार कानून में बदलाव नहीं करती, तो सुप्रीम कोर्ट को इसके लिए सख्त नियम बनाने चाहिए। गिरफ्तारी के एक साल के भीतर मुकदमे की सुनवाई शुरू नहीं होने पर आरोपी को जमानत मिलनी चाहिए।

बड़ी कामयाबी । दूसरी ओर, माओवादी हिंसा में बड़ी गिरावट आई है। एक समय देश के 600 में से करीब एक तिहाई जिलों में माओवादियों का प्रभाव था। 2010 में हिंसा की 1,936 घटनाएं हुई थीं, जो 2025 में घटकर 234 रह गई। इस साल 29 जुलाई तक सिर्फ 33 घटनाएं दर्ज हुईं। यह नक्सलवाद के खिलाफ अभियान की बड़ी कामयाबी है।

निर्णायक कार्रवाई । नक्सलवाद के खिलाफ अभियान की शुरुआत आंध्र प्रदेश के ग्रेहाउंड्स ने की थी, जिसे मनमोहन सिंह सरकार ने आगे बढ़ाया। अमित शाह के कार्यकाल में कार्रवाई तेज हुई। 2024 से मार्च 2026 के बीच 706 माओवादी मारे गए, 2,218 गिरफ्तार हुए और 4,839 ने आत्मसमर्पण किया। हालांकि, अभियान के दौरान फर्जी मुठभेड़, यातनाएं और जबरन विस्थापन के आरोप भी लगे। छत्तीसगढ़ के सलवा जुडूम पर गंभीर मानवाधिकार उल्लंघन के आरोपों के बाद 2011 में सुप्रीम कोर्ट को हस्तक्षेप करना पड़ा।

शांतिपूर्ण समाधान । माओवादी भी मानवाधिकारों के रक्षक नहीं थे। वे ग्रामीणों और राजनीतिक विरोधियों को मुखबिर बताकर उन्हें मार देते थे। उनके इन कार्यों की निंदा होनी चाहिए। हालांकि, मार्क्सवाद कोई अपराध नहीं, बल्कि एक विचारधारा है। संविधान शांतिपूर्ण तरीके से पूंजीवाद खत्म करने, जमीन के बंटवारे या आर्थिक व्यवस्था बदलने की मांग करने का अधिकार देता है।

विचारधारा अपराध नहीं । मार्क्सवादी विचारधारा मानने वाले लोग लंबे समय से लोकतंत्र का हिस्सा रहे हैं। कम्युनिस्ट पार्टियां केरल, पश्चिम बंगाल और त्रिपुरा में चुनाव जीतकर सरकारें चला चुकी हैं। इसके बावजूद 'अर्बन नक्सल' शब्द का इस्तेमाल असहमति जताने वालों को निशाना बनाने के लिए होने लगा है। भीमा कोरेगांव मामले में 16 बुद्धिजीवियों, वकीलों और कार्यकर्ताओं को नक्सली साजिश के आरोप में गिरफ्तार किया गया था। इनमें सुधा भारद्वाज, आनंद तेलतुंबडे और फादर स्टेन स्वामी जैसे नाम शामिल थे।

मुआवजे का आदेश । 84 वर्ष के पादरी स्टेन स्वामी पार्किंसन से पीड़ित थे और 2021 में ही उनकी मौत हो गई। बाद में जांचकर्ताओं ने दावा किया कि कुछ आरोपियों के कंप्यूटर में वायरस के जरिए फर्जी सबूत डाले गए थे। हालांकि, अभियोजन पक्ष ने इसे खारिज किया। अरुण फरेरा और वर्नोन गोन्साल्विस को भी वर्षों जेल में रहना पड़ा। पिछले सप्ताह बॉम्बे हाईकोर्ट ने फरेरा की 2011 में दोबारा गिरफ्तारी को मौलिक अधिकारों का उल्लंघन मानते हुए दो लाख रुपये मुआवजा देने का आदेश दिया।

AI सारांश

नक्सलवाद के खिलाफ लंबे अभियान से कई इलाकों में शांति लौटी है।

- विचारधारा और हिंसा के बीच अंतर समझना लोकतंत्र के लिए जरूरी है।
- लंबे समय तक बिना सुनवाई जेल में रखना न्याय के सिद्धांतों के खिलाफ है।

समस्याएं बढ़ने से पहले छांट दीजिए


AI Image

जीवन आनंद

शैलेंद्र पांडेय

खलील जिब्रान ने प्रेम में प्रूनिंग यानी छंटाई को भी जरूरी बताया है। उन्होंने लिखा- जिस तरह वह तुम्हारी ऊंचाइयों तक पहुंचकर धूप में लहराती तुम्हारी कोमल शाखाओं को सहलाता है, उसी तरह वह तुम्हारी जड़ों तक पहुंचकर उन्हें भी हिलाता है, जो धरती में गहराई तक जमी हैं। प्यार के साथ जरूरी है सख्ती भी, वरना मोह की जकड़न आगे नहीं बढ़ने देती।

एक अच्छे माली को पता होता है कि अगर पेड़-पौधे को लगातार बढ़ने दिया, तो कुछ शाखाएं मनमानी पर उतर आएंगी। उनकी बेतरतीबी फिर पूरे पेड़ के विकास पर असर डालेगी। तब न कायदे से फूल आएंगे और न फल। इसीलिए वह उन्हीं शाखाओं और पत्तियों को हटा देता है, जिन्हें उसने खुद प्यार से खाद-पानी दिया होता है।

प्रूनिंग यानी हालात के मुताबिक कड़े फैसले लेना। और इसका असली आनंद इसी में है कि हम पेड़-पौधों को बढ़ते हुए ही नहीं देखते, उनकी जरूरतें भी समझने लगते हैं। जैसे-जैसे सूखी शाखाएं, पत्तियां वगैरह हटती हैं, लगता है कि बोझ हल्का हो रहा है। पौधा ज्यादा खुला लगने लगता है। धूप उसकी जड़ों के पास मिट्टी तक पहुंचने लगती है। हां, थोड़ा खालीपन दिखता है, पर कुछ दिनों बाद उसी जगह से फिर नई कोंपलें फूट पड़ती हैं - पहले से ज्यादा सुंदर और चमकदार। फल-फूल से जब वह थोड़ा झुकता है, तो लगता है कि बोल रहा है- थैंक्स, आपने एनर्जी को सही दिशा में लगाने में मदद की।

जीवन में भी कई बार ऐसा ही होता है। हम पुरानी आदतों, बेकार की चिंताओं और बीती बातों का बोझ अपने साथ ढोते रहते हैं। कई बार ऐसे काम और रिश्ते भी हमारी जिंदगी में जगह घेरे रहते हैं, जिनसे अब कुछ हासिल नहीं होता। उन्हें छोड़ने का मन नहीं करता, क्योंकि उनसे लगाव होता है। लेकिन, ये गैर जरूरी चीजें हमारा समय और मन घेरती हैं। कटाई-छंटाई से जगह बनती है नई संभावनाओं के लिए। इसकी वजह से शुरू में कुछ परेशानी हो सकती है, पर वहीं से रास्ता भी खुलता है। कई बार इसी तरह की प्रूनिंग की जरूरत पड़ती है आसपास के लोगों के लिए भी। इर्द-गिर्द जमा नकारात्मक लोग, जो न खुद बढ़ते हैं और न दूसरों को बढ़ने देते हैं। इनसे सही वक्त पर पीछा छुड़ा लेना ही सही है।

लेकिन, हर काम की तरह टाइमिंग महत्वपूर्ण है प्रूनिंग में भी। हर मौसम मुफीद नहीं होता इसके लिए। ज्यादा गर्मी या ज्यादा सर्दी हुई, तो पौधा शॉक में जा सकता है। छंटाई ज्यादा हो गई, तो भी खतरा कि वह शायद उससे उबर न पाए। और अगर इस काम में नरमी बरत दी, तो पूरा फायदा नहीं मिलेगा। यानी, पता होना चाहिए कि क्या छोड़ना है और क्या बचाना।

कांटे की बात

ग़रीबी घट रही, पर नौकरी नहीं मिल रही

वर्ल्ड बैंक का कहना है कि भारत में अत्यधिक गरीबी अब खत्म होने के करीब है। बीते वर्षों में गरीबी घटाने में बड़ी सफलता मिली है, लेकिन बेहतर जीवन स्तर, नियमित रोजगार और महिलाओं की आय बढ़ाने की चुनौती बरकरार है।

मेरा काम सबको खुश करना नहीं है। मेरा काम सही फैसले लेना है, न कि लोकप्रिय फैसले। इसी के लिए मैं यहां हूं। अच्छा प्रदर्शन करने वाले खिलाड़ियों का समर्थन करना भी ड्रेसिंग रूम में सुरक्षा की भावना सुनिश्चित करने के लिए जरूरी है।

-गौतम गंभीर, भारतीय क्रिकेट टीम के कोच
(न्यूजीलैंड के साथ पांचवें T20 से पहले ब्रॉडकास्टर्स से बातचीत में)

डेटा Window

AI Image

10.5% आबादी दुनिया में रोज 3 डॉलर से कम कमाती है

भारत	चीन	फ्रांस	यूके	जर्मनी	जापान	अमेरिका
2.6	0	0.1	0.4	0.7	1.2	1.2

नोट - क्रय शक्ति समता (PPP) के आधार पर तय कीमतों में मापा गया। वर्ल्ड बैंक इसे ही अत्यधिक गरीबी की सीमा मानता है।

भारत में 3.1% बेरोजगार

पुरुष	3.1
महिलाएं	3.1
ग्रामीण पुरुष	2.6
ग्रामीण महिलाएं	2.6
शहरी पुरुष	4.2
शहरी महिलाएं	6.3

स्वरोजगार का बोलबाला

(स्रोत - वर्ल्ड बैंक और PLFS, सभी आंकड़े % में)

-अभिषेक मिश्र

जनता जंक्शन कसान

बहुत नाजुक है चिप की सप्लाई चेन

मृत्युंजय राय

सेमीकंडक्टर का इस्तेमाल किस तरह से भू-राजनीति में हथियार के रूप में हो रहा है, इससे शायद ही कोई अनजान हो। क्रिस मिलर (Chris Miller) की किताब Chip War में बताया गया है कि माइक्रोचिप्स क्यों इतने महत्वपूर्ण हैं। वह लिखते हैं कि सिर्फ गैजेट ही नहीं, ये आधुनिक सेना, आर्थिक और देशों की राजनीतिक ताकत के भी आधार हैं। मिलर लिखते हैं कि एडवांस चिप बनाने पर नियंत्रण किसी देश को वैश्विक मामलों में बहुत दे सकता है। यही वजह है कि सेमीकंडक्टर सप्लाई चेन को लेकर भी अमेरिका और चीन में होड़ मची। पहले तो अमेरिका ने एनविडिया के एडवांस्ड चिप्स के चीन भेजे जाने पर रोक लगाई थी। तब ऐसी खबरें भी आईं कि चीन उनकी स्मगलिंग कर रहा है। इसके बाद बताया गया कि चीन ऐसी चिप्स में आत्मनिर्भर हो गया है। यही दोनों देश आर्टिफिशल इंटेलिजेंस में दुनिया का नेतृत्व कर रहे हैं।

मिलर ने किताब में चिप इंडस्ट्री की कहानी शुरुआत से बताई है। वह लिखते हैं कि इस इंडस्ट्री के जन्म के बीज शीत युद्ध में छिपे हैं। उस वक्त अमेरिकी सेना की मदद से वहां चिप कंपनियां शुरू हुईं। आज आधुनिक चिप निर्माण पर कुछ कंपनियों का दबदबा है। मिलर लिखते हैं कि चिप की सप्लाई चेन दुनिया के कई देशों से जुड़ी हुई है। वैश्विक सप्लाई चेन जहां कुछ देशों में समृद्धि की वजह बनी है, वहीं इससे इसके बाधित होने की आशंका भी पैदा हुई है। पूरे सप्लाई चेन में कोई कड़ी अगर टूट जाती है तो उसका असर पूरी दुनिया पर हो सकता है।

इस किताब में सेमीकंडक्टर उद्योग के समयबद्ध विकास का जिक्र किया गया है। चिप मैन्युफैक्चरिंग और डिजाइन में किस तरह से तरक्की हुई, इसमें उसकी जानकारी भी दी गई है। Fabless कंपनियों के उभार और पूर्वी एशिया में फैब्रिकेशन कैपेसिटी के शिफ्ट होने के बारे में भी मिलर ने लिखा है। साथ ही, उन्होंने चिप इंडस्ट्री में ताइवान और दक्षिण कोरिया की केंद्रीय भूमिकाओं का भी जिक्र किया है। वह चीन के उभार के बारे में बताते हैं और अमेरिका ने किस तरह से टेक्नॉलजी एक्सपोर्ट रोकने की कोशिश की, उसके बारे में भी लिखा है।

सेमीकंडक्टर इंडस्ट्री की तकदीर लिखने वाले सीईओ, इंजीनियरों और सरकारी अधिकारियों के बारे में भी मिलर ने बताया है। इसलिए पढ़ते वक्त यह किताब जियो-पॉलिटिकल थ्रिलर की तरह लगती है। मिलर ने इसे लिखने के लिए काफी रिसर्च की है। उन्होंने इंडस्ट्री में जिनकी अग्रणी भूमिका रही है, उनसे बात की है। उद्योग से जुड़े डेटा का इस्तेमाल किया है। साथ ही, जानकारों से बात करके भरोसेमंद नैरेटिव पेश किया है। मिलर यह समझाने में भी सफल रहे हैं कि ऑटो, डिफेंस सिस्टम, AI, डेटा इन्फ्रास्ट्रक्चर के लिए ये चिप्स क्यों महत्वपूर्ण हैं। उन्होंने बताया है कि इंडस्ट्री के लिए नीदरलैंड्स की ASML की EUV मशीनों में मोनोपोली या एडवांस्ड नोड में ताइवान की TSMC के दबदबे का क्या मतलब है। वह लिखते हैं कि इन कंपनियों के बगैर इंडस्ट्री की कल्पना नहीं की जा सकती। दुनिया के एडवांस्ड चिप्स का बड़ा हिस्सा ताइवान में बनता है। इसलिए वहां से सप्लाई बाधित होने पर पूरी दुनिया की अर्थव्यवस्था पर असर पड़ सकता है।

यूं तो मिलर ने किताब में तकनीकी चीजों को भी आसान भाषा में बताने की कोशिश की है, लेकिन कहीं-कहीं तकनीक के बारे में दी गई जानकारी सामान्य पाठकों के लिए कुछ मुश्किलें पैदा कर सकती है। मिलर के आलोचकों का यह भी कहना है कि इसमें अमेरिकी नीतिगत चिंताओं पर ज्यादा जोर दिया गया है।

विचार विंडो

AI Image

रीडर्स मेल

महिला सुरक्षा हो जिम्मेदारी

31 अक्टूबर का लेख 'मुंबई से भी सीखें हमारे शहर' पढ़ा। यह बेहद प्रभावशाली और संवेदनशील लेख है। एक व्यक्तिगत अनुभव के माध्यम से लेखिका ने महिला सुरक्षा जैसे गंभीर सामाजिक सवाल को सहजता से उठाया है। लेख में बिलकुल सही कहा गया है कि केवल पुलिस या कानून-व्यवस्था से महिला सुरक्षा संभव नहीं है। लेकिन एक अनुभव को पूरा सच नहीं माना जा सकता। सुरक्षित शहर वह नहीं जहां महिलाएं केवल सुरक्षा के भरोसे रहें, बल्कि वह है जहां उनकी गरिमा का सम्मान हो। हालांकि, अपराध के आंकड़ों और भीड़भाड़ को सुरक्षा का आधार मानने में थोड़ी सावधानी जरूरी है।

मीनाक्षी वर्मा, ईमेल से

nbtedit@timesofindia.com पर अपनी राय नाम-पते के साथ मेल करें।

THE SPEAKING TREE
और पढ़ने के लिए देखें
www.speakingtree.nbt.in

सफलता की चिंता बिना कर्म करते रहना है साधना

मोरारी बापू

भारत हजारों वर्षों की आध्यात्मिक चेतना, प्रेम और सद्भाव की जीवंत परंपरा है। इसकी आत्मा में सबको साथ लेकर चलने और समूची मानवता के कल्याण की भावना बसती है। जगद्गुरु आदि शंकराचार्य ने इसी आध्यात्मिक चेतना को नई ऊंचाई दी। उनकी स्मृति और विचारों से प्रेरित होकर मेरे मन में एक संकल्प जागा- भारत की धरती को फिर से प्रेम, एकता और सद्भाव के सूत्र में पिरोने का। इसी संकल्प से स्वस्तिक यात्रा का जन्म हुआ। यह यात्रा दिलों को जोड़ने, मन की दूरियां मिटाने और मानवता के मंगल की कामना करने का प्रयास है। मेरा विश्वास है कि सनातन अध्यात्म हर युग में नई चेतना जगाने और मानवता को सही दिशा दिखाने की शक्ति रखता है।

वर्षों तक मैं एक ही स्थान पर व्यासपीठ से रामचरितमानस का ज्ञान लोगों तक पहुंचाता रहा। अब वही व्यासपीठ चलती-फिरती हो गई है। मनुष्य और समय लगातार बदलते रहते हैं। इसलिए हमें भी बदलाव के लिए तैयार रहना चाहिए। यही 'चरैवेति' का संदेश है- चलते रहो और आगे बढ़ते रहो। रामचरितमानस में भगवान श्रीराम द्वारा लंका तक सेतु बनाने का प्रसंग सिखाता है कि धर्म का काम लोगों को जोड़ना है, तोड़ना नहीं। एकता का अर्थ यह नहीं कि सभी एक जैसे हो जाएं, बल्कि यह है कि हम अलग-अलग होते हुए भी एक-दूसरे का सम्मान करें और अपनापन बनाए रखें।


AI Image

सफलता या असफलता की चिंता किए बिना अच्छे कर्म करते रहना ही सच्ची साधना है। आदि शंकराचार्य की जन्मभूमि कालड़ी और मेरी जन्मभूमि तल्गाजरडा का आध्यात्मिक संबंध मुझे ब्रह्मसूत्र, भगवद्गीता और उपनिषदों की याद दिलाता है। ये ग्रंथ सत्य, प्रेम और करुणा का संदेश देते हैं। यात्रा के शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक, तीनों पहलू होते हैं। जो लोग शारीरिक रूप से इसमें शामिल नहीं हो सकते, वे भी प्रार्थना और सद्भावना के माध्यम से जुड़ सकते हैं। आखिरकार, सबसे गहरी यात्रा अपने भीतर झांकने और स्वयं को समझने की है। मेरी कामना है कि स्वस्तिक यात्रा विश्व कल्याण की ऐसी प्रार्थना बने, जिसमें पूरी मानवता के सुख, प्रेम, मेल-जोल और शांति का भाव समाया हो।

(भारत स्वस्तिक यात्रा के दौरान व्यक्त विचार)

आर.एन.आई. नं. 510/57 में सार्वजनिकता सुनिश्चित (निर्धारित क्षेत्रसूची के लिए संपर्क या प्रतिलिप्याधिकार सूचित) प्रतिलिपि/पत्र व्यवहार तथा व्यावसायिक ऑफिस, बोनेनेट्ट एण्ड कम्पनी लिमिटेड के लिए राजीव चंदन द्वारा, 7 महादुलाल जमना वर्मा, नई दिल्ली- 110002 से प्रकाशित, आसोसिएटेड प्रिंटर्स (इंडिया) लिमिटेड द्वारा प्रकाशन में प्रकाशित सामग्री संपादकों के व्यक्तिगत विचार होते हैं। आर.बी. एक्ट के अन्तर्गत उपलब्धियों / तथ्य संबंधित जिम्मा द्वारा, टाइम्स ऑफ इंडिया हाउस, 13/1 & 2, मथुरा रोड, औद्योगिक क्षेत्र फरीदाबाद, फरीदाबाद (हरि.) 121001 में और नवभारत आइलैंड द्वारा, प्लॉट नंबर 7-8, सेक्टर-11, EMD एक्सेस, गुरुग्राम, हरियाणा-122001 में मुद्रित। फोन : 23520000, टेलीफैक्स कार्यालय : 23520001, टेलीफैक्स संपादकीय : 23520002, ई-मेल : nbtedit@timesofindia.com, मुंबई- 400001 टेलिफोन नंबर मुख्यालय : 66561212, प्रतिनिधि/नेशनल ब्यूरो/कार्यालय : दिल्ली 6 रु., रविवार : नेशनली 8 रु.

भारत ने पिछले एक दशक में सबसे तेजी से गरीबी कम की

देश में पिछले लगभग एक दशक में अत्यधिक गरीबी में आयी भारी कमी से संबंधित विश्व बैंक की ताजा रिपोर्ट इस क्षेत्र में भारत की उपलब्धि के बारे ही बताती है. विश्व बैंक की अक्तूबर, 2026 की रिपोर्ट 'इंडिया पॉवर्टी एंड इक्विटी ब्रीफ' के मुताबिक, देश में अत्यधिक गरीबी की दर 2011 के 27.1 प्रतिशत से घटकर 2023 में 2.6 फीसदी रह गयी. गरीबी घटने की मुख्य वजहें हैं-लोगों के उपभोग और आय, व्यय में वृद्धि, महिलाओं को मिलते रोजगार में वृद्धि तथा सरकारी योजनाओं की मदद. रिपोर्ट के मुताबिक, 2017 से 2023 के बीच लगभग 13.4 करोड़ नये काम के मौके बने और इसमें सबसे ज्यादा फायदा ग्रामीण महिलाओं को हुआ. इसी तरह मुफ्त राशन और सीधे बैंक खाते में पैसे भेजने जैसी सरकारी योजनाओं ने गरीब परिवारों को बड़ा सहारा दिया. मौद्रिक गरीबी के साथ गैर मौद्रिक गरीबी में भी भारी कमी आयी है. यानी आम लोगों के रहन-सहन और सुविधाओं के स्तर में भी काफी सुधार आया है. पक्के मकान, बिजली, साफ पानी, शौचालय और रसोई गैस जैसी बुनियादी सुविधाएं लोगों तक पहले से ज्यादा पहुंची हैं. ग्रामीण भारत में अपेक्षाकृत तेज प्रगति से गांवों और शहरों के बीच का अंतर भी अपेक्षाकृत तेजी से कम हुआ है. हालांकि उपलब्धि के साथ चुनौतियां भी हैं. रिपोर्ट के अनुसार, उत्तर प्रदेश से पश्चिम बंगाल तक एक बड़े भू-भाग में देश की करीब 57 फीसदी गरीब आबादी है. इन राज्यों में अधिक उत्पादक रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने होंगे. गरीब परिवारों का बड़ा हिस्सा अब भी ग्रामीण क्षेत्रों में रहता है, जहां उत्पादकता कम और बेहतर गैर-कृषि रोजगार के अवसर सीमित हैं. वास्तविक मजदूरी में ठहराव, रोजगार की खराब गुणवत्ता और आर्थिक अवसरों तक असमान पहुंच जैसी चुनौतियां भी बनी हुई हैं. गरीबी उन परिवारों में अधिक है, जहां शिक्षा का स्तर तथा संपत्ति कम है, स्थिर रोजगार के अवसर सीमित हैं और आश्रितों की संख्या अधिक है. आय में असमानता की चुनौती भी बनी हुई है. वर्ष 2023 में सबसे अधिक कमाने वाले 10 फीसदी कामगारों की औसत आय सबसे कम कमाने वाले 10 फीसदी कामगारों की तुलना में करीब 13 गुना थी. विश्व बैंक का अनुमान है कि गरीबी में कमी का सिलसिला आगे भी जारी रहेगा, हालांकि इसकी रफ्तार कुछ धीमी हो सकती है.

विश्व बैंक की ताजा रिपोर्ट के मुताबिक, भारत में अत्यधिक गरीबी की दर 2011 के 27.1 प्रतिशत से घटकर 2023 में 2.6 फीसदी रह गयी. गरीबी घटने की मुख्य वजहें हैं- लोगों के उपभोग और आय, व्यय में वृद्धि, महिलाओं के रोजगार में वृद्धि तथा सरकारी योजनाओं की मदद.

असुरक्षा ने यूरोप को आंदोलनों में झोंका है



शशांक
पूर्व निदेशक रॉ
shashank1944@yahoo.co.in

यूरोप और अमेरिका के बीच की दूरी, सोवियत संघ के विघटन, चीन के तेजी से आगे बढ़ने जैसे कारणों ने यूरोपीय देशों में अशांति फैलाने में बड़ी भूमिका निभायी है. फिलहाल यूरोप के अंदर जो हो रहा है, उसका अभी अंत दिखाई नहीं दे रहा है, क्योंकि यूरोप की अर्थव्यवस्था बहुत धीमी हो गयी है. इस तरह की स्थितियों का हल निकालने के लिए आवश्यक है कि दुनिया में लोकतांत्रिक रूप से चुनी हुई जो सरकारें हैं, वे आगे आएं और यूरोप को यह संदेश दें कि आप लोगों ने बीते दो सौ-तीन सौ वर्षों से जो नीतियां अपनायी हैं, उन्हें छोड़िए और तकनीकों से ऊपर उठकर मानवता को प्राथमिकता दीजिए.

यूरोप के कई देश इस समय विरोध प्रदर्शनों व आंदोलनों से जूझ रहे हैं. शिक्षा, महंगाई, बेरोजगारी जैसी मूलभूत जरूरतों से शुरू हुआ यह प्रदर्शन हिंसक हो चला है. ऐसे में प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि आखिर यूरोप में इस तरह के प्रदर्शन के क्या कारण हैं. इसे समझने के लिए हमें यूरोप के इतिहास पर नजर डालनी होगी. यूरोप के देशों ने पिछले कई सौ वर्षों से दुनिया के अलग-अलग हिस्सों को अपना उपनिवेश बनाकर रखा था. यूरोपीय देशों की आपसी लड़ाई के कारण ही विश्व युद्ध भी हुए. इन सब कारणों से बाद के वर्षों में यूरोप के मन में यह भावना आयी कि उन्हें विश्व बंधुत्व के लिए कदम उठाना चाहिए. द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अमेरिका ने यूरोप की काफी मदद की थी. इस कारण यूरोप के मन में भी दुनिया के लिए कुछ अच्छा करने का भाव जागा. उन्होंने मानवाधिकार और समाजवाद को अपने यहां बढ़ावा दिया.

भले ही अमेरिका ने यूरोप की मदद की, पर यूरोपीय देशों को अपने से नीचा ही समझा. इसलिए यूरोप के देशों ने 'यूरोप फर्स्ट' की भावना से काम करना शुरू किया. यह भी सच्चाई है कि एक तरफ तो यूरोप में कुछ लोगों के मन में मानवता के लिए काम करने का विचार था. वे यूरोप द्वारा दूसरे देशों पर किये गये अत्याचार के लिए खुद को दोषी मानते थे और मानवता के लिए काम करना चाहते थे. दूसरी तरफ उनके यहां ऐसे लोग भी थे, जो लोगों का शोषण करते रहे थे, जिन्होंने दूसरे देशों के अंदर बड़े-बड़े एस्टेट्स, प्लांटेशन, माइंस बना रखे थे, उपनिवेश समाप्त होने के बाद भी उनकी सोच में कोई बदलाव नहीं आया. सोच व भावना के स्तर पर यूरोप के भीतर भी काफी विभाजन हो चुका था. इसके साथ ही, यूरोपीय देशों में बाहर से जो लोग आये थे, उन्हें वहां अलग-थलग महसूस होने लगा था, लगने लगा था कि वे यूरोप में आ तो गये हैं, लेकिन पूरी तरह यूरोपीय देशों का हिस्सा नहीं बन पाये हैं. उनके मन में यह भावना घर करने लगी थी कि यूरोप के देश जिस तरह से उपनिवेश बनाकर उन्हें उनके देश में ही अलग-थलग करते रहे थे, उसी तरह का व्यवहार यूरोप में भी उनके साथ हो रहा है. फिर भिन्न-भिन्न देशों से आये लोगों ने आपस में हाथ मिला लिया और समाजवाद को बढ़ावा देने के लिए एकजुट होने लगे. चूंकि यूरोप का समाज पूरी तरह विभाजित हो चुका था और वहां के जो पुराने श्वेत लोग थे, वे चाहते थे कि उनके यहां बराबरी का और अच्छा समाज बने. सो, वे भी आंदोलनकारियों के साथ मिल गये. इस तरह, एक तरफ बराबरी चाहने वाले लोग खड़े हैं, दूसरी तरफ पूंजीपति और उद्योगों पर एकाधिकार रखने वाले लोग. दूसरे देशों को उपनिवेश बनाकर यूरोपीय देशों ने वहां जो अत्याचार किये, उसी का फल आज वह भुगत रहा है. कुल मिलाकर, यूरोप और अमेरिका के बीच की दूरी, सोवियत संघ के विघटन, चीन के तेजी से आगे बढ़ने जैसे कारणों ने यूरोपीय देशों में अशांति फैलाने में बड़ी भूमिका निभायी है.

जब से उपनिवेशवाद समाप्त हुआ है, तब से शोषकों के खिलाफ आंदोलन तो हो ही रहे हैं, पर तब अलग-अलग देशों में होता था और मालूम नहीं पड़ता था. लेकिन आज सोशल मीडिया, इंटरनेट और एआइ की क्रांति के कारण एक देश में होने वाले आंदोलन की खबर पूरी दुनिया तक शीघ्र पहुंच जा रही है. एक बात और, दुनिया के अनेक हिस्से इस समय बुद्धरत हैं, उधर अनेक देशों में युवा सड़कों पर हैं, तो इसका पूरी दुनिया पर नकारात्मक असर पड़ रहा है. इस बात की बहुत आशंका है कि ऐसी ही भावनाएं अमेरिका में भी भड़के और लोग सड़कों पर उतर जायें, क्योंकि अब वहां भी अमेरिका फर्स्ट, और 'मागा' (मेक अमेरिका ग्रेट अगेन) की बातें हो रही हैं. नस्लीय भेदभाव दिखाई पड़ रहा है. इसलिए अमेरिका के लिए यह बहुत आवश्यक है कि एक तो जहां-जहां उसने युद्ध फैलाये हैं, उसे समाप्त करे, इससे यूरोप को लाभ होगा तथा अन्य देशों में भी शांति आयेगी, और विध्वंसक गतिविधियां रुकेंगी. विश्व के नेता भी मिलकर यह तय करें कि वे दूसरे देश के मामले में हस्तक्षेप नहीं करेंगे, वहां अस्थिरता नहीं फैलायेंगे.

फिलहाल यूरोप के अंदर जो हो रहा है, उसका अभी अंत दिखाई नहीं दे रहा है, क्योंकि यूरोप की अर्थव्यवस्था बहुत धीमी हो गयी है. इस तरह की स्थितियों का हल निकालने के लिए आवश्यक है कि दुनिया में लोकतांत्रिक रूप से चुनी हुई जो सरकारें हैं, विशेषकर वैश्विक दक्षिण के प्रभावशाली नेता, जिनमें प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी भी हैं, आगे आयें और यूरोप को यह संदेश दें कि आप लोगों ने बीते दो सौ-तीन सौ वर्षों से जो नीतियां अपनायी हैं, उन्हें छोड़िए और तकनीकों से ऊपर उठकर मानवता को प्राथमिकता दीजिए, दूसरे देशों के मामलों में हस्तक्षेप बंद कीजिए और जो अंतरराष्ट्रीय संस्थाएं हैं, उनमें सुधार के लिए कदम उठाइए. जेन जी की परेशानियों को मिल-जुलकर दूर करने के लिए आगे आइए. यूरोपीय देशों को इन संदेशों को ग्रहण करना चाहिए और इन पर अमल करना चाहिए.

हाल के वर्षों में श्रीलंका, बांग्लादेश और नेपाल में भी भ्रष्टाचार, बेरोजगारी आदि के कारण युवा सड़कों पर उतरे और वहां सत्ता बदल गयी. पर इन आंदोलनों के बाद वहां जो सरकारें बनीं, वे जन आकांक्षाओं पर खरी नहीं उतर पायीं हैं. इसका कारण यह है कि उन देशों में भले ही लोकतंत्र दिखाई देता है, पर सच्चाई में वहां आंतरिक लोकतंत्र नहीं है. श्रीलंका और नेपाल में लोकतंत्र और अर्थव्यवस्था, दोनों कमजोर थे, जबकि बांग्लादेश में धर्म सबसे ऊपर चला गया. इसी कारण इन देशों में सत्ता बदलने के बाद भी स्थितियां नहीं बदल पायीं. इन सब परिस्थितियों से निपटने के लिए भारत की तरह मजबूत लोकतंत्र जरूरी है, जो सबको साथ लेकर चलता है. हमारे यहां भी अफगानिस्तान, बांग्लादेश से काफी लोग भागकर आये हैं. बांग्लादेश से तो अब भी लोग आ रहे हैं. रोहिंग्याओं ने भी यहां शरण ली है. दुखी बात, हमारे यहां के जो धनी लोग हैं, वे समाज कल्याण के लिए भी काम करते हैं, समाज से कटे नहीं रहते हैं. इसलिए हमारे यहां उन्हें लेकर लोगों के मन में वैसी भावना नहीं रही है, जैसी यूरोप में देखने में आ रही है. अपनी विश्व बंधुत्व की भावना और नीतियों के कारण ही भारत अभी तक युद्ध से बचा रहा है.

(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

अर्थव्यवस्था को रफ्तार देते हैं त्योहारी सीजन



सतीश सिंह
असिस्टेंट जनरल मैनेजर, एसबीआइ, मुंबई
satish5249@gmail.com

त्योहार अर्थव्यवस्था को मौसमी तौर पर बड़ा प्रोत्साहन देते हैं. इसका स्थायी लाभ तभी होगा, जब बढ़ी हुई मांग से घरेलू उत्पादन बढ़े, छोटे कारोबारों की आय में इजाफा हो और बेहतर रोजगार के अवसर बनें. विवेकपूर्ण खरीद, उत्पादकों को उचित दाम और श्रमिकों की सुरक्षित आजीविका बाजार की रौनक को व्यापक आर्थिक समृद्धि में बदल सकती है.

यह त्योहारों का समय है, और इन दिनों बाजारों की रौनक केवल आनंद ही नहीं बढ़ाती, बल्कि अर्थव्यवस्था को भी मजबूती देती है, क्योंकि इस समय कई क्षेत्रों में आर्थिक गतिविधियां तेज हो जाती हैं. कपड़ों, मिठाइयों, आभूषणों और वाहनों पर होने वाला खर्च मांग बढ़ाता है, जिस कारण इन वस्तुओं की आपूर्ति भी बढ़ानी पड़ती है. दुकानदारों की बिक्री बढ़ने से निर्माताओं को नये ऑर्डर मिलते हैं और सामान पहुंचाने वालों को अतिरिक्त काम मिलता है. इस तरह त्योहार उपभोग, उत्पादन और रोजगार के बीच संबंध मजबूत करते हैं. हालांकि, उनके आर्थिक प्रभाव का सही आकलन मुश्किल है, क्योंकि त्योहारों से पैदा होने वाली अधिकांश मांग असंगठित क्षेत्र में होती है.

भारत की अर्थव्यवस्था में घरेलू उपभोग की अहम भूमिका है. राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय के जून में जारी अनंतिम अनुमानों के अनुसार, वित्त वर्ष 2025-26 में निजी अंतिम उपभोग व्यय का चालू कीमतों पर जीडीपी में हिस्सा 56.7 प्रतिशत था. इससे स्पष्ट है कि परिवारों का खर्च आर्थिक गतिविधियों का महत्वपूर्ण आधार है और त्योहारों पर किये गये खर्च का बड़ा योगदान है. त्योहारी खर्च का जीडीपी में कितना प्रतिशत योगदान है, इसका कोई आधिकारिक आंकड़ा उपलब्ध नहीं है. इनका योगदान विनिर्माण, व्यापार, परिवहन और सेवा क्षेत्रों में शामिल होता है. कैट यानी कन्फेडरेशन ऑफ ऑल इंडिया ट्रेडर्स ने 60 प्रमुख वितरण केंद्रों के सर्वेक्षण के आधार पर पिछली दिवाली के कारोबार का अनुमान 6.05 लाख करोड़ रुपये लगाया. इनमें वस्तु कारोबार 5.40 लाख करोड़ रुपये और सेवाओं का कारोबार 65,000 करोड़ रुपये रहने की उम्मीद थी. त्योहारी वस्तुओं की कुल बिक्री में किराना और दैनिक उपभोग की वस्तुओं की हिस्सेदारी 12 फीसदी, सोने और आभूषणों की 10 फीसदी, इलेक्ट्रॉनिक्स और इलेक्ट्रिकल्स की आठ प्रतिशत तथा तैयार कपड़ों व उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं की सात-सात फीसदी प्रतिशत थी. यह व्यापारिक संगठन का आकलन था, फिर भी, इससे त्योहारी बाजार का व्यापक आकार और विभिन्न क्षेत्रों में मांग का फैलाव सामने आता है.

त्योहारी बिक्री कारोबारियों की नकदी स्थिति सुधार सकती है और पुराना भंडार बिकने से नयी खरीद और आपूर्तिकर्ताओं को भुगतान करना आसान होता है. छोटे उद्यमों के लिए यह खास महत्व रखता है, क्योंकि उनकी उत्पादन क्षमता अक्सर कार्यशील पूंजी की उपलब्धता पर निर्भर करती है. खाद्य कारोबार बढ़ने से दूध, चीनी, खाद्य तेल, मेवे और पैकेजिंग की मांग में इजाफा होता है. कपड़ों की खरीद से बुनाई, सिलाई, रंगाई और खुदरा व्यापार को काम मिलता है. घर की मरम्मत और सजावट से पेंट, बिजली के सामान, फर्नीचर और बढ़ई-मिस्त्री की सेवाओं को बढ़ावा मिलता है. त्योहारी मांग का ठोस उदाहरण वाहन बाजार में देखने को मिलता है. फेडरेशन ऑफ ऑटोमोबाइल डीलर्स एसोसिएशंस के अनुसार, 22 सितंबर से दो नवंबर, 2025 के बीच 52.38 लाख वाहनों की खुदरा बिक्री हुई थी. पिछले तुलनीय त्योहारी दौर में बिकी 43.26 लाख इकाइयों की तुलना में यह 21.10 फीसदी अधिक थी. दोपहिया वाहनों की बिक्री 21.80 फीसदी, यात्री वाहनों की 23.39 फीसदी और ट्रैक्टरों की बिक्री 14.22 प्रतिशत बढ़ी थी. इसका फायदा वाहन निर्माताओं के अलावा कलपुर्जों, टायर, बीमा, ऋण और सर्विसिंग कारोबार को भी मिलता है. बढ़े हुए ऑर्डर संभालने के लिए बिक्री कर्मचारियों, पैकिंग श्रमिकों, गोदाम सहायकों, चालकों और वितरण कर्मियों की अधिक जरूरत होती है. अमेजन इंडिया ने इस वर्ष सितंबर में अपने परिचालन नेटवर्क में 1.60 लाख से अधिक मौसमी कार्य अवसर सृजित करने की घोषणा की. कंपनी के मुताबिक, ये प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष अवसर 400 से अधिक शहरों में उपलब्ध थे. टीमलीज ने 2025 के त्योहारी मौसम में विभिन्न क्षेत्रों में 2.16 लाख से अधिक अस्थायी नौकरियों का अनुमान लगाया था. ये उदाहरण बताते हैं कि त्योहारी मांग का रोजगार पर प्रभाव पड़ता है.

मौसमी रोजगार से परिवारों को अतिरिक्त आय मिलती है, पर इसका वास्तविक लाभ वेतन, काम के घंटों, यात्रा खर्च और रोजगार की अवधि पर निर्भर करता है. दीये, मूर्तियां, फूल, हस्तशिल्प और घरेलू खाद्य उत्पादों की खरीद से कुम्हारों, बुनकरों और छोटे उद्यमियों को सीधे आय मिलती है. जब उत्पादन में स्थानीय श्रम और सामग्री का अधिक उपयोग होता है, तब इस खर्च का लाभ स्थानीय अर्थव्यवस्था में व्यापक रूप से फैलता है. घर लौटने की यात्राओं और धार्मिक पर्यटन से होटल, भोजनालय, रेल, बस तथा स्थानीय परिवहन की मांग बढ़ती है. ग्रामीण बाजारों में खरीदने की क्षमता फसल से होने वाली आय और मजदूरी पर निर्भर करती है. त्योहार अर्थव्यवस्था को मौसमी तौर पर बड़ा प्रोत्साहन देते हैं. इसका स्थायी लाभ तभी होगा, जब बढ़ी हुई मांग से घरेलू उत्पादन बढ़े, छोटे कारोबारों की आय में इजाफा हो और बेहतर रोजगार के अवसर बनें. विवेकपूर्ण खरीद, उत्पादकों को उचित दाम और श्रमिकों की सुरक्षित आजीविका बाजार की रौनक को व्यापक आर्थिक समृद्धि में बदल सकती है.

(ये लेखक के निजी विचार हैं.)

देश दुनिया

यूरोप जल रहा है और हिंसा का सिलसिला खत्म नहीं होने वाला

दे दृश्य पहले 'टाइम' मैगजीन ने 'द प्रोटेस्टर' को पर्सन ऑफ द ईयर चुना था. तब उस साप्ताहिक न्यूज मैगजीन ने कैलिफोर्निया से काहिरा तक जन प्रदर्शनों में भाग लेने वाले सौ से भी अधिक आंदोलनकारियों की प्रोफाइलिंग की थी. आज जब यूरोप के कई देशों में युवा सड़कों पर हैं, तब जन प्रदर्शनों के प्रति 'टाइम' मैगजीन का रोमांच खत्म हो गया है. सिर्फ 'टाइम' की बात ही क्यों करें, इन आंदोलनों पर पश्चिमी टिप्पणीकारों का रवैया भी आशंकाजनक ही ज्यादा है. वे इन आंदोलनों पर आशाजनक टिप्पणी करते हुए नहीं पाये जा रहे. हालांकि, यूरोप के जिन देशों में आंदोलन हो रहे हैं, वे भौगोलिक रूप से एक-दूसरे से दूर हैं. इसके बावजूद तमाम देशों के आंदोलनों में एक उल्लेखनीय समानता दिखाई देती है. जैसे, The New York Times फ्रांस में युवाओं ने हिंसक आंदोलनों को अंजाम दिया, वहीं स्पेन की राजधानी मैड्रिड और पुर्तगाल की राजधानी लिस्बन में युवाओं ने व्यस्त चौराहों पर कब्जा कर लिया. अल्बानिया में आंदोलनकारियों ने शीर्ष अदालत को आग के हवाले कर दिया, तो इटली के शहरों में पुलिस ने आंदोलनकारियों से निपटने की बड़ी तैयारी की है. सच्चाई यह है कि 2011 के आंदोलनकारियों की तुलना में यूरोप के मौजूदा आंदोलनकारी बिल्कुल अलग हैं और आसानी से इनकी कोई पहचान नहीं बनायी जा सकती. ये आंदोलनकारी न तो वाम विचारधारा से प्रेरित हैं, न ही दक्षिणपंथी विचारधारा से. वैलियों में किसी विचारधारा से निकटता जताने के बजाय ये अपनी पीढ़ीगत निरर्थकता की बात करते हैं. कुछ यूरोपीय देशों में राजनीतिक कार्यकर्ताओं ने उन आंदोलनकारियों से खुद को अलग-थलग कर लिया, जिन्होंने न सिर्फ उनके आंदोलन को हाइजैक कर लिया, बल्कि वे सरकारी संपत्ति भी लूटने में लगे हैं. जबकि कुछ यूरोपीय देशों के राजनीतिक टिप्पणीकार सड़कों पर उतरे आंदोलनकारियों को अतिवादी या पश्चिम की अमीरी पर ईर्ष्या करने वाले प्रवासी बता रहे हैं. आंदोलनकारियों के प्रति लोगों और देशों का रवैया चाहे जो भी हो, यूरोप में जिस तरह की स्थितियां बन गयी हैं, उन्हें देखते हुए बहुत जल्दी इन आंदोलनों के खत्म हो जाने की उम्मीद शायद नहीं की जा सकती.

-एंटोन जैगर

बोधि वृक्ष

द्विज का अर्थ

भारत में प्रबुद्ध प्राणियों को द्विज कहा गया है. द्विज का अर्थ है दो बार जन्मा हुआ. एक बार आपने अपनी मां के गर्भ से जन्म लिया. यह अनजाने में हुआ. आपने ऐसा नहीं किया, प्रकृति ने आपके लिए यह काम किया. जब आपका जन्म हुआ, तब आप एक विशिष्ट मासूमियत और आनंद के साथ आये थे. एक बच्चा अपने आप में मासूम और आनंदित होता है. परंतु चूंकि यह आनंद सचेतन रूप से घटित नहीं हुआ, इसलिए कोई भी इसे कुछ ही समय में नष्ट कर सकता है. कुछ ही समय में वे इसे छीन लेंगे. आज बच्चे पांच से छह वर्ष की उम्र में तनावग्रस्त हो रहे हैं, क्योंकि उनकी मासूमियत कुछ ही समय में नष्ट हो जाती है, यह इस पर निर्भर करता है कि आसपास के लोगों का उन पर कितना प्रभाव है. अब यदि आपको दोबारा जन्म लेना है, तो पहले मरना होगा. यदि आप मरने को तैयार नहीं हैं, तो पुनर्जन्म होने का प्रश्न ही नहीं उठता. इसका अर्थ शारीरिक रूप से मरना नहीं है. परंतु यदि आप वैसे ही मरते हैं जैसे आप हैं, यदि आप वह सब कुछ विसर्जित कर देते हैं जिसे आप 'मैं' कहते हैं, तो आप एक बार फिर से जन्म लेते हैं. इस प्रकार का जन्म सौ प्रतिशत सचेतन होता है. एक बार फिर आप आनंदित और मासूम, पर पूरी तरह जागरूक होते हैं. अब इस आनंद को आपसे कोई छीन नहीं सकता. शारीरिक खुशहाली की तलाश करना एक बात है. आत्मज्ञान की तलाश करना कुछ और है. शारीरिक खुशहाली को बढ़ाने के लिए आपको आत्म संरक्षण की विभिन्न तकनीकों को सीखने की आवश्यकता है. आत्मज्ञान का अर्थ है स्वयं का सचेतन विसर्जन. अधिकांश लोगों को इसे समझने के लिए एक विशिष्ट मात्रा में समय और परिपक्वता की आवश्यकता होती है कि आप स्वयं को जैसा भी बनाते हैं, अंततः वह निराशाजनक और अपर्याप्त होता है. आप स्वयं को कितना भी उत्तम बना लें, फिर भी वह पर्याप्त नहीं है. जब आप मिट जाते हैं, तभी सब कुछ उत्तम बनता है. जब आप पर्याप्त जीवन जी चुके हों और जानते हों कि बेहतर जीवन जीने से आप कहीं नहीं पहुंचेंगे, तब आप जीवन से परे जाना चाहेंगे.



-सद्गुरु जग्गी वासुदेव

प्रबंध सूत्र

लगातार नया सीखना जरूरी है

दफ्तर में कंप्यूटर चलते-चलते रुक गया. जो व्यक्ति कंप्यूटर चला रहा था, उसने दफ्तर के हार्डवेयर चीफ को बुलाया. हार्डवेयर चीफ ने बताया कि इसे सही रखने की जिम्मेदारी तो उस कंपनी की है, जिसे इसका कॉन्ट्रेक्ट दिया गया है. कंप्यूटर चलाने वाले ने कहा कि भाई, तू ही कर दे.



आलोक पुराणिक
लेखक
puranika@gmail.com

हार्डवेयर वाले ने फाइल मंगवाई और चौथी धारा पढ़कर सुनायी. कॉन्ट्रेक्ट वाली कंपनी को फोन लगाया गया. वहां से जवाब आया कि आपकी शिकायत दर्ज कर ली गयी है और दो से तीन हफ्तों में संपर्क किया जायेगा.

इस बीच दफ्तर में जिम्मेदारी पर बहस छिड़ गयी. प्रशासन विभाग ने कहा कि यह खरीद विभाग का मामला है. खरीद विभाग ने कहा कि हमने तो सबसे सस्ता कॉन्ट्रेक्ट लिया था, सस्ते में सेवा नहीं, सिर्फ सेवा की उम्मीद मिलती है. सबके पास तर्क थे. बस एक चीज किसी के पास नहीं थी, और वह थी चलता हुआ कंप्यूटर.

तभी तीसरे व्यक्ति ने, जो चुपचाप चाय पी रहा था, कंप्यूटर की तरफ देखा. उसे कुछ जुगाड़ आता था. उसने पीछे का तार हिलाया, एक बटन दबाया, कुछ किया, जो किसी मैनुअल में नहीं लिखा था, और कंप्यूटर चल पड़ा. हालांकि यह उसकी जिम्मेदारी नहीं थी. यह जुगाड़ आसमान से नहीं टपका था. इस आदमी ने छुट्टियों में हार्डवेयर के वीडियो देखे थे. रात को नेटवर्क की किताबें भी पलटी थीं. जब सब लोग छुट्टी में फिल्म देख रहे थे, तब वह थोड़ा-सा हुनर जोड़ रहा था. यह तीसरा व्यक्ति दफ्तर में बहुत महत्वपूर्ण हो गया है. तमाम मसलों के हल उसके पास होते हैं. प्रिंटर अटके, तो उसके पास जाओ, वाई-फाई रूठे, तो उसके पास जाओ, साहब का पासवर्ड भूल जाये, तो भी उसी के पास जाओ. समस्याएं आती हैं, तो लोगों को हल चाहिए होते हैं. वह किसकी जिम्मेदारी है, इस विषय पर बहस करने में रुचि किसी की नहीं होती. बहस से मशीन नहीं चलती. जिम्मेदारी तय करने वाले ज्यादातर लोग वही होते हैं, जो समस्या हल होने के बाद आकर कहते हैं कि देखा, हमने कहा था न. यही तीसरा आदमी दफ्तर में डिमांड में रहता है, जो अपने काम के अलावा कुछ और भी कर सकता है. जो सिर्फ अपना काम जानता है, वह नौकरी बचा लेता है. जो रोज कुछ नया सीखता है, वह नौकरी के साथ दफ्तर का भरोसा भी कमा लेता है. डिग्री सिर्फ दरवाजा खोलती है, कुर्सी पर टिकाये रखने का काम अतिरिक्त हुनर करता है. अप्रेजल में इसे सही इंक्रीमेंट मिलता है. जिम्मेदारी की धारा पढ़ने वाले को अप्रेजल में बस धारा मिलती है.

जो कहता है कि यह मेरा काम नहीं, वह काम से बच जाता है, पर जो नया हुनर सीखता है, उसकी तरक्की सुरक्षित रहती है. लगातार नया सीखना जरूरी है.

आपके पत्र

हर पंचायत में पुस्तकालय की जरूरत

शिक्षा हर बच्चे का मौलिक अधिकार है, लेकिन गरीबी और संसाधनों की कमी के कारण ग्रामीण क्षेत्रों के अनेक विद्यार्थी अपने सपनों को पूरा करने से वंचित रह जाते हैं. महंगी पुस्तकें और निजी लाइब्रेरी का खर्च उनके लिए बड़ी बाधा बनता है. ऐसे में प्रत्येक पंचायत में निःशुल्क सार्वजनिक पुस्तकालय की व्यवस्था होनी चाहिए, जहां गरीब बच्चों को प्रतियोगी परीक्षाओं की पुस्तकें, समाचार पत्र और कंप्यूटर की सुविधा मिल सके. इससे प्रतिभाओं को सही अवसर मिलेगा. पंचायतों में पुस्तकालय खोलना केवल शिक्षा को बढ़ावा देना नहीं, बल्कि ग्रामीण बच्चों के सपनों को नयी उड़ान देना है.

पप्पू रंजन, छपरा

पुलिस व सुरक्षा क्षेत्र में अवसरों का विस्तार

वर्ष 2022 में शुरू हुई अग्निपथ योजना के तहत पहले बैच का चार वर्षीय सेवाकाल 2026 में पूरा हो रहा है. इसके बाद अग्निवीरों के रोजगार और पुनर्वास का प्रश्न अत्यंत महत्वपूर्ण है. सैन्य प्रशिक्षण, अनुशासन और सुरक्षा कौशल प्राप्त युवाओं को पर्याप्त अवसर न मिलने पर आर्थिक असुरक्षा बढ़ सकती है. प्रशिक्षित युवाओं के अनुभव का समुचित उपयोग न होना और उनके कौशल का दुरुपयोग रोकना आंतरिक सुरक्षा की दृष्टि से जरूरी है. सरकार को पुलिस, अर्धसैनिक बलों और निजी सुरक्षा क्षेत्र में इनके अवसर बढ़ाने चाहिए, सम्मानजक पुनर्वास राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए आवश्यक है.

प्रभात कुमार भारती, मधुबनी

पोस्ट करें : प्रभात खबर, प्लॉट संख्या डी-9-10, पाटलिपुत्र इंडस्ट्रियल एरिया, पटना (बिहार) - 800013 ■ मेल करें : patna @prabhatkhabar.in पर ■ ई-मेल संक्षिप्त व हिंदी में हो. लिपि रोमन भी हो सकती है.